मूल्य : सात रुपये (7.00)

राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली, ने पहली बार प्रकाशित 1970

रूपाभ प्रिंटर्स, शाहदरा, दिल्ली, में मुद्रित
BHOOKH (Novel) by Amrit Lal Nagar

भूमिका

आज से इकहत्तर वर्ष पहले सन् १८९९-१९०० ई० यानी सवत् १९५६ वि० मे रास्थान के अकाल ने भी जनमानस को उसी तरह से झिझोडा था जैसे सन् '४३ के वग दुर्भिक्ष ने। इस दुर्भिक्ष ने जिस प्रकार अनेक साहित्यिको और कलाकारो की सृजनात्मक प्रतिभा को प्रभावित किया था उसी प्रकार राजस्थान का दुर्भिक्ष भी साहित्य पर अपनी गहरी छाप छोड गया है। उस समय भूख की लपटो से जलते हुए मारवाडियो के दल के दल एक ओर गुजरात और दूसरी ओर पश्चिमी उत्तर प्रदेश के नगरो मे पहुचे थे। कई बरस पहले गुजराती साहित्य के एक वरेण्य कवि, शायद स्व० दामोदरदास खुशालदास बोटादकर की एक पुरानी कविता पढी थी जो करुण रस से ओत-प्रोत थी। सूखे अस्थिपजर मे पापी पेट का गड्ढा धसाए पथराई आखो वाले रिरियाते हुए मारवाडी का बडा ही मार्मिक चित्र उस कविता मे अकित हुआ है। सन् '४७ मे आगरे मे अपने छोटे नाना स्व० रामकृष्ण जी देव से मुझे उक्त अकाल से सबधित एक लोक-कविता भी सुनने को मिली थी जिसकी कुछ पक्तिया इस समय याद आ रही है—

"आयो री जमाईडो धन्वयो जीव कहा से लाऊ शक्कर घीव—
छप्पनिया अकाल फेर मती आइजो म्हारे मारवाड मे।"

सन् '४३ के वग दुर्भिक्ष मे मनुष्य की चरम दयनीयता और परम दानवता के दृश्य मैंने कलकत्ते मे अपनी आखो से देखे थे। नियालदह

स्टेशन के प्लेटफार्म, कलकत्ते की सडको के फुटपाथ ऐसी वीभत्स करुणा से भरे थे कि देख-देखकर आठो पहर जी उमडता था। कलकत्तेवालों को उन दृश्यो से घिर जाने के कारण अपना शहर काटता था। इतनी बडी भूख के वातावरण मे लोगो से मुह मे कौर लेते नही बनता था। बहुत-से ऐसे भी थे जिनके ऊपर उन दृश्यो का उतना ही असर होता था जितना चिकने घडे पर पानी का होता है। ‘दुनिया दुरगी मकारा सराय, कही खूब-खूबा कही हाय हाय।’ यही हाल था।

धनाभाव मे अथवा अपने से शक्तिशाली के द्वारा भूखे रहने पर विवश किए जाने और स्वेच्छा से व्रत लेकर निराहार रहने मे, बात एक होने पर भी जमीन-आसमान का अतर होता है। सन् ’४१ मे एक बार अर्थाभाव के कारण मुझे बबई मे चार दिनो तक भूख की ज्वाला सहनी पडी थी। सन् ’४३ के अत मे कलकत्ते से वापस लौटने पर मैं स्वेच्छा से चार दिना तक भूखा रहा था। पहले अनुभव मे बडी घुटन, बेबसी और विद्रोह-भावना पाई, दूसरे अनुभव मे सहनशक्ति बढी और चेतना गहराई। मेरा मन उन दिनो कलकत्ते के दृश्यो से इतना भरा हुआ था कि अपनी इच्छा से आरोपित भूख को जनमन की करुणा मे लय करके सहज बिसार देता था। इस उपन्यास के आरभिक नोट्स मैंने अपने उसी उपवास के दौर मे लिखे थे। लेकिन यहा पर अपना एक और अनुभव लिखे बिना बात अधूरी ही रह जाएगी। सन् ’४४ मे अपने फिल्मी धधे से एक महीने की छुट्टी लेकर बबई से आगरे आने पर जब मैं इस कथानक के दृश्य बाधने लगा तो शुरू के आठ-दस दिनो तक मुझे भूख ने बेहद सताया। लिखते-लिखते बीच मे कुछ खाने को मचल मचल उठता था। बाद मे यह मनोविकार स्वय ही दूर भी कर लिया।

सन् ’४३ का बग-दुर्भिक्ष दैवी प्रकोप न होकर मनुष्य के स्वार्थ का एक अत्यन्त जघन्य रूप प्रदर्शन और उसका स्वाभाविक परिणाम था। भारत के एक प्रसिद्ध अर्थशास्त्री प्रो० महालनवीस ने उन दिनो सही आकडे प्रस्तुत करके यह सिद्ध कर दिखलाया था कि उस साल बगाल मे धान की

उपज के हिसाब से अकाल पडने की कोई सभावना ही नही थी। द्वितीय महायुद्ध मे गला फसाए हुए तत्कालीन ब्रिटिश सरकार और निहित स्वार्थों-भरे अफसर-व्यापारियो के षड्यत्र के कारण ही हजारो लोग भूखो तडप-तडपकर मर गए, सैकडो गृहिणिया वेश्याए बनाई जाने के लिए और सैकडो बच्चे गुलामो की तरह दो मुट्ठी चावल के मोल बिक गए। महायुद्ध की पृष्ठभूमि मे तस्वीर यो बनती थी कि एक शक्तिशाली पुरुष दूसरे निर्बल के मुह का निवाला छीन और खुद खाकर तीसरे शक्तिशाली से मारने या मर जाने की ठानकर लड रहा था। उसके इसी हठ मे असभव सभव हो गया। वही असभव सभव इस उपन्यास मे अकित है। उत्तर प्रदेश के एक बडे कम्यूनिस्ट नेता, मेरे मित्र रमेश सिन्हा ने सुप्रसिद्ध फोटो चित्रकार श्रीयुत चिन्ताप्रसाद से बबई मे मेरी भेंट करा दी। उन्होने अकालग्रस्त क्षेत्र मे जाकर कई सौ चित्र खीचे थे। चिन्ता बाबू ने मुझे उन चित्रो के पीछे की घटनाए भी सुनाई थी। श्रीयुत जैनुल आब्दीन के बनाए रेखाचित्र भी देखने को मिले थे। मानवीय करुणा के उन मार्मिक चितेरो से मैंने प्रेरणा पाई थी अत इनका कृतज्ञ हू।

इस उपन्यास का पहला सस्करण सन् '४६ मे प्रकाशित हुआ था। तब से अब तक कई विद्वान आलोचको और उपन्यास साहित्य पर शोध प्रबध प्रस्तुत करनेवाले अनेक छात्रो ने इस उपन्यास को अपनी अपनी कसौटियो पर कसकर इसे जीवन का सही दस्तावेज बतलाया है। कसने का कष्ट उठाने के लिए उन सबके प्रति कृतज्ञता अनुभव करता हू।

इस सस्करण मे उपन्यास का पुराना नाम बदल देने के लिए भी सफाई देना आवश्यक है। प्रकाशक को लगा कि नाम बदल देना चाहिए। उनकी इस बात से सहमत होने के लिए मेरे पास भी एक कारण था। लगभग सात-नवा साल पहले एक सज्जन, जिन्होने इस उपन्यास का नाम-भर ही सुना था, मुझसे पूछने लगे—क्या यह पौराणिक उपन्यास है। उनके इस प्रश्न से लगा कि जो नाम २६ वर्ष पहले अकाल की स्मृति ताजी

होने के कारण पाठको के मन मे अपना स्पष्ट अर्थ-बोध करा सकने मे समर्थ था वह अब अकाल से सबधित जन-स्मृति के पुरानी पड़ जाने के कारण शायद दुरूह हो गया है। जिन भावी शोधकर्ता छात्रो को नाम-परिवर्तन के कारण कुछ अडचन महसूस होगी उनसे अभी ही क्षमा मागे लेता हू। बाकी पाठको के लिए नाम-परिवर्तन से कोई समस्या उत्पन्न होने का प्रश्न ही नही उठता।

चौक, लखनऊ-३ —अमृतलाल नागर

६ जुलाई, १९७० ई०

कथा-प्रवेश

वर्मा पर जापानियो का कब्ज़ा हो गया। हिन्दुस्तान पर महायुद्ध की परछाइँ पडने लगी।

हर शख्स के दिल से ब्रिटिश सरकार का विश्वास उठ गया। 'कुछ होने वाला है,—कुछ होगा !'—हर एक के दिल मे यही डर समा गया।

यथाशक्ति लोगो ने चावल जमा करना शुरू किया। रईसो ने बरसो के खाने का इन्तज़ाम कर लिया। मध्यवर्गीय नौकरपेशा गृहस्थो ने अपनी शक्ति के अनुसार दो-तीन महीने से लगाकर छ महीने तक की खूराक जमा कर ली। खेतिहर मज़दूर भूख से लडने लगा।

व्यापारियो ने लोगो को कम चावल देना शुरू किया।

हिन्दू और मुसलमान व्यापारी और धनिक वर्ग, अपनी-अपनी कौमो को थोडा-बहुत चावल देते रहे।

खेतिहर मज़दूर भीख मागने पर मजबूर हुआ।

शुरू मे भीख दे देते थे, फिर अपनी ही कमी का

रोना रोने लगे। दया-दान की भावना मरने लगी ।

भूख ने मेहनत-मजदूरी करनेवाले ईमानदार इन्सानो को खूंख्वार लुटेरा बना दिया।

भूख ने सतियो को वेश्या बनने पर मजबूर किया।

मौत का डर बढने लगा ।

मौत का डर आदमियो को परेशान करने लगा, पागल बनाने लगा।

और एक दिन चिर आशकित, चिर प्रत्याशित मृत्यु, भूख को दूर करने के समस्त साधनो के रहते हुए भी, भूखे मानव को अपना आहार बनाने लगी।

तब आशावादी मानव कठोर होकर मृत्यु से लडने लगा। उपन्यास का प्रारम्भ यही से होता है।

मोहनपुर ऐंग्लो-बगाली स्कूल के बरामदे मे पैर रखते ही हेडमास्टर पाचू गोपाल मुखर्जी को ध्यान हो आया कि हीरु वाग्दी का लडका गणेश लगातार दस दिन तक मलेरियाग्रस्त शरीर की सारी शक्ति के साथ भूख से लडकर, आज सवेरे चल बसा।

पाचू ने अपने दिल पर एक गहरा धक्का महसूस किया। उसे लगा जैसे कि आज उसका स्कूल मर गया। चार दिनो के अटूट उपवास और काले भविष्य की चिन्ता भी जो आघात उसे न पहुचा सकी थी, वह सहसा गणेश के मरने की खबर से उसे पहुचा था। लगा, जैसे मौत बहुत निकट से उसे अपना परिचय देने के लिए आई हो।

अकाल की न हल होने वाली समस्या, 'क्या होगा' प्रश्न के साथ, सारी मानसिक और शारीरिक शक्ति छीनकर, घोर अधकार के 'कल' मे जब उसे फेंक देती थी, तब वह मोहवश अपने आने वाले कल को ठीक-ठीक देख न पाता था। लेकिन आज गणेश की मृत्यु ने सहसा उसकी और उसके परिवार के आने वाले 'कल' की तस्वीर उसके सामने लाकर खडी कर दी थी।

आखो के आगे अधेरा छा गया। सहसा पाचू को किसी सहारे की जरूरत महसूस हुई। उसका हाथ अपने-आप खम्भे की तरफ बढ गया

और उसके सहारे, गिरते शरीर को टेक देकर, उसने अपने को सभाल लिया।

खम्भे के सहारे टिका हुआ वह गणेश की, सिर्फ गणेश की, बात सोचने लगा। गणेश वाग्दी उसका पहला शिष्य था।

पाचू की आखो के सामने वे सब दिन, एक झलक दिखाकर, तेजी से आपस मे घुल-मिल गए। फिर एक-एक बात उसे याद आने लगी। इण्टर-मीजिएट पास करने के बाद एक ओर सरकारी वजीफा लेकर आगे पढने का प्रलोभन और दूसरी ओर मा का पत्र। जीवन मे पहली बार उसे अपना कर्तव्य सोचने के लिए गम्भीर होना पडा था।

पाचू अपनी वर्तमान परिस्थितियो को, बीते दिनो की बाते सोचकर, बहलाने लगा—"अगर मैं बराबर पढता ही जाता! कितना अच्छा कैरियर था मेरा। प्रिंसिपल जॉर्डन मुझे शर्तिया स्कॉलरशिप दिला देते लेकिन उससे क्या आज की परिस्थिति मे कुछ सुधार हो जाता?"

पाचू के विचारो को सहसा एक झटका लगा। अपने कल्पित स्वर्ग को ठोकर से तीन-तेरह करने के लिए उसने फिर सोचा—"मैं होता इग्लैण्ड मे, और यहा घर-भर सब खतम हो चुका होता। आई० सी० एस० होकर ही मुझे कौन सुख मिलता।"

पाचू को अपना आई० सी० एस० न होना अच्छा लगा। इतने 'सिविल सर्वेण्ट' होकर आए, और अभागे देश के सर पर डॉमन के बूट झाडकर चले गए। भारतीय नागरिको के नौकर भारतीय नागरिको के हुक्काम बनकर अपनी असलियत और अपना कर्तव्य भूल गए।

पाचू सोचने लगा—"वह भी इसी तरह का एक नागरिक नौकर ...। एस० डी० ओ० होकर वह भी शायद इसी तरह भुखमरो का ...क्षण करने जाता। दयाल जमींदार का आतिथ्य ग्रहण कर ...हसी के जोर पर नवाबी प्लेटें हजम करता। मोनाई बनिया इसी तरह ...के अहलकार के सामने खीसें निपोर-निपोरकर अहलकार की जेब गर्म ...देता। और थोडी ही देर बाद अहलकार की जेब की अधिकाश गर्म

खुद उसकी—एस० डी० ओ० पाचू गोपाल मुखर्जी आई० सी० एस० की—जेब को उडनी बीमारी की तरह छू जाती।"

पाचू को अपने गाव मे एस० डी० ओ० की 'विजिट' याद आने लगी। दयाल ज़मीदार के यहा जिस तरह और जो कुछ उसने देखा था, एस० डी० ओ० के रूप मे उसी तरह अपने लिए भी वह उसकी कल्पना करने लगा।

सहसा पाचू का मन घृणा से भर उठा। ध्यान दूसरी तरफ करने के लिए उसने स्कूल के बरामदे के सामने फैले हुए मोहनपुर गाव की तरफ से अपनी खोई हुई आखें फिरा ली, खम्भे का सहारा धीरे-धीरे हाथ हटाकर छोडा और क्लास-रूम की तरफ चला। दीवाल पर स्कूल मे लगाए जाने के लिए भेजे गए सरकारी पोस्टर चिपके थे। क्लास के दरवाज़े के पास ही पहला पोस्टर था—"अन्न की पैदावार बढाओ।"

घृणा की भावना का एक झोका उसे फिर लगा। झुझलाहट मे उसके मुह से अपने-आप ही निकल पडा—"किसके लिए?"

फिर उसके हाथ ने झटककर पोस्टर को चीर डाला।

पाचू ने जैसे बदला ले लिया हो। उसकी उत्तेजना कम हुई। तभी उसके मन मे एक आशका भी उठ खडी हुई—"किसीने उसे पोस्टर फाडते कही देख न लिया हो!"

पाचू ने झटपट मुडकर सामने की ओर देखा। आसपास मे कोई नही था। दूर, मोनाई बनिये की दूकान पर, जीवित नर-ककालो की भीड हो-हुल्लड मचा रही थी। शायद किसीकी निगाह उसपर नही पडी।

पाचू ने एक नि श्वास छोडी और कमरे का ताला खोलने लगा। वह सोच रहा था—"अगर किसीने देख लिया हो नही-नही मान लो, अगर कोई देख लेता? मोनाई की दूकान पर पुलिसमैन तो खडा ही है, अगर उसकी नज़र पड गई हो, तब तो बडी आफत होगी। वह आएगा, हाथ पसारेगा, नही तो फिर थाने मे रिपोर्ट! दूगा कहा से साले को? देने को ही होता तो आज चार दिन से घर मे ये एकादशी न होती।

और उसके सहारे, गिरते शरीर को टेक देकर, उसने अपने को सभाल लिया।

खम्भे के सहारे टिका हुआ वह गणेश की, सिर्फ गणेश की, बात सोचने लगा। गणेश बाग्दी उसका पहला शिष्य था।

पाचू की आखो के सामने वे सब दिन, एक झलक दिखाकर, तेज़ी से आपस मे घुल-मिल गए। फिर एक-एक बात उसे याद आने लगी। इण्टर-मीजिएट पास करने के बाद एक ओर सरकारी वजीफा लेकर आगे पढने का प्रलोभन और दूसरी ओर मा का पत्र। जीवन मे पहली बार उसे अपना कर्तव्य सोचने के लिए गम्भीर होना पडा था।

पाचू अपनी वर्तमान परिस्थितियो को, बीत दिनो की बातें सोचकर, बहलाने लगा—"अगर मैं बराबर पढता ही जाता! कितना अच्छा कैरि-यर था मेरा। प्रिंसिपल जॉर्डन मुझे शर्तिया स्कॉलरशिप दिला देते लेकिन उससे क्या आज की परिस्थिति मे कुछ सुधार हो जाता?"

पाचू के विचारो को सहसा एक झटका लगा। अपने कल्पित स्वर्ग को ठोकर से तीन-तेरह करने के लिए उसने फिर सोचा—"मैं होता इग्लैण्ड मे, और यहा घर-भर सब खतम हो चुका होता। आई० सी० एस० होकर ही मुझे कौन सुख मिलता।"

पाचू को अपना आई० सी० एस० न होना अच्छा लगा। इतने 'सिविल सर्वेण्ट' होकर आए, और अभागे देश के सर पर डॉमन के बूट झाडकर चले गए। भारतीय नागरिको के नौकर भारतीय नागरिको के हुक्काम बनकर अपनी असलियत और अपना कर्तव्य भूल गए।

पाचू सोचने लगा—"वह भी इसी तरह का एक नागरिक नौकर होता। एस० डी० ओ० होकर वह भी शायद इसी तरह मुआयना या निरीक्षण करने आता। दयालु जमींदार का आतिथ्य ग्रहण कर कलक्ट-री के ज़ोर पर नवाबी प्लेटें हजम करना। सोनाई बनिया इसी तरह उसके अहलकार के सामने खीसें निपोर-निपोरकर अहलकार की जेब गरम करता देना। और थोड़ी ही देर बाद अहलकार की जेब की अधिकांश रकम

खुद उसकी—एस० डी० ओ० पाचू गोपाल मुखर्जी आई० सी० एस० की—जेब को उडनी बीमारी की तरह छू जाती।"

पाचू को अपने गाव मे एस० डी० ओ० की 'विजिट' याद आने लगी। दयाल जमीदार के यहा जिस तरह और जो कुछ उसने देखा था, एस० डी० ओ० के रूप मे उसी तरह अपने लिए भी वह उसकी कल्पना करने लगा।

सहसा पाचू का मन घृणा से भर उठा। ध्यान दूसरी तरफ करने के लिए उसने स्कूल के बरामदे के सामने फैले हुए मोहनपुर गाव की तरफ से अपनी खोई हुई आखें फिरा ली, खम्भे का सहारा धीरे-धीरे हाथ हटाकर छोडा और क्लास-रूम की तरफ चला। दीवाल पर स्कूल मे लगाए जाने के लिए भेजे गए सरकारी पोस्टर चिपके थे। क्लास के दरवाजे के पास ही पहला पोस्टर था—"अन्न की पैदावार बढाओ।"

घृणा की भावना का एक झोका उसे फिर लगा। झुझलाहट मे उसके मुह से अपने-आप ही निकल पडा—"किसके लिए?"

फिर उसके हाथ ने झटककर पोस्टर को चीर डाला।

पाचू ने जैसे बदला ले लिया हो। उसकी उत्तेजना कम हुई। तभी उसके मन मे एक आशका भी उठ खडी हुई—"किसीने उसे पोस्टर फाडते कही देख न लिया हो!"

पाचू ने झटपट मुडकर सामने की ओर देखा। आसपास मे कोई नही था। दूर, मोनाई बनिये की दूकान पर, जीवित नर-ककालो की भीड हो-हल्लड मचा रही थी। शायद किसीकी निगाह उसपर नही पडी।

पाचू ने एक नि श्वास छोडी और कमरे का ताला खोलने लगा। वह सोच रहा था—"अगर किसीने देख लिया हो नही-नही मान लो, अगर कोई देख लेता? मोनाई की दूकान पर पुलिसमैन तो खडा ही है, अगर उसकी नजर पड गई हो, तब तो बडी आफत होगी। वह आएगा, हाथ पसारेगा, नही तो फिर थाने मे रिपोर्ट! दूगा कहा से साले को? देने को ही होता तो आज चार दिन से घर मे ये एकादशी न होती।

पर वह क्या समझे ? गाव मे तो सब यही समझते है कि पाचू मास्टर ने न जाने कहा-कहा की जमा गाडकर रख ली है।"

पाचू ने मुडकर फिर देखा, कही कोई आ तो नही रहा है। फिर झटपट क्लास-रूम मे घुस गया, जैसे वह सुरक्षित जगह मे पहुच जाना चाहता हो।

कमरा स्तब्ध। डेस्को और बेंचो की लम्बी-लम्बी चार कतारे, डेस्को पर स्याही के तमाम दाग और गर्द की पर्त, कुर्सी-मेज, दीवारो पर टगे हुए बगाल, हिन्दुस्तान और योरप के तीन नक्शे, कोने मे छोटी-सी मेज पर रखा हुआ ग्लोब, ब्लैक बोर्ड पर लिखी हुई अगेजी की एक कविता।

पाचू का ध्यान उधर गया। बोर्ड पर भी धूल जम रही थी। आज हफ्ते-भर से स्कूल का चपरासी नही आया था। जब से वह गाव छोडकर गया है तब से किसीने स्कूल की सफाई नही की, उसने भी नही। एक दिन था जब वह हर शनिवार की शाम को छुट्टी से पहले लडको के साथ खुद सारे स्कूल की सफाई करता था।

पाचू के होठो पर एक फीकी-सी हसी की रेखा खिच गई। उन दिनो की चहल-पहल, वह जोश, उसका और उसके स्कूल का वह ऐश्वर्य

मीठे स्वप्न-सी इस तेज याद को पाचू का चार दिन का भूखा शरीर और चिताक्षत मन सह न सका। बडी मुश्किल से अपने शरीर को सभाल-कर कुर्सी पर अपने-आपको जैसे छोडकर वह बैठ गया। दोनो बाह मेज टिकाकर उसने सिर झुका लिया।

"तो क्या स्कूल बन्द हो जाएगा ?"

यह प्रश्न इतना साफ-साफ और कुछ इस तरह स्पष्ट होकर पाचू के मे आज उठ आया था, मानो पहले इस प्रश्न मे उसका कभी वास्ता ही पडा हो। असल बात यह थी कि अब से पहले इस प्रश्न के उठने सम्भावना होने पर पाचू अपने मन को बहलाने मे सफल हो जाता था, किन आज गणेश की मृत्यु ने उसकी आखो के सामने से भुलावे का पर्दा

हटा दिया था।

'तो फिर ?"

यह एक ऐसा प्रश्न था जो स्कूल वन्द हो जाने की कल्पना के वाद पाचू के मन मे फास की तरह चुभता था और अधेरे मे भूत की तरह उसकी सारी शक्तियो को स्तम्भित कर देता था।

ग्यारह आदमियो के परिवार का यह स्कूल ही तो आसरा था। तुलसी इस साल पार लगती। मा के सिर से चिन्ता का वोझ उतर जाता। लेकिन जाने कहा से आ गया यह अकाल। क्या हो गया, कुछ समझ मे नही आता—"दुनिया जाएगी किधर? क्या यह अकाल कभी खत्म न होगा? क्या यही प्रलय है ?"

पाचू के दिमाग को प्रलय के घनघोर वादलो ने ढक लिया। उसकी वन्द आखो के आगे घना अधेरा-सा छा गया। उसे लगा जैसे उस घने अधेरे मे वह कही वहुत ऊचे पर से नीचे की तरफ, तेज़ी के साथ, खीच-कर ले जाया जा रहा हो।

पाचू के लिए यह एक नया अनुभव था—"क्या मैं मर रहा हू? लेकिन मरुगा किस तरह? गणेश को भूखे के साथ-साथ उसका इतना पुराना मलेरिया भी तो था। मैं तो खाली भूखा ही हू—और मा-वा सव लोग भी वस भूख ही हैं। फिर चार दिन की भूख भी कोई भूख है? हिन्दू का घर, हमारे यहा चातुर्मास का उपवास होता है। और वैसे तो आज शाम तक चावल मिल ही जाएगा। कुछ नही, डर की कोई वात नही है।"

एक वार अपनी सारी शक्तियो को वटोरकर पाचू ने मेज पर से अपना सिर उठाया। फिर उसी जोश मे कुर्सी से उठकर क्लास-रूम मे टहलने लगा। दो चक्कर पूरे किए, तीसरा चक्कर लगाते ही एक डेस्क पर हाथ टेककर खडा हो गया।

अधेरे मे नीचे की तरफ खिचते चले जाने के कल्पनामिश्रित अनुभव ने पाचू के मन को जैसे कील दिया था। मृत्यु के समान उस स्तब्धता के वधन से अपने को मुक्त करने के लिए ही जैसे उसने उठकर टहलना शुरु

कर दिया था। वह जैसे यह प्रकट करना चाहता था कि उसमे अभी शक्ति है—यह देखो, वह टहल रहा है। लेकिन दो चक्कर लगाने के बाद ही उसे चक्कर-सा आने लगा। फिर तुरन्त ही उसने अपने को सभाल लिया—"नही-नही, मुझे चक्कर नही आ रहा है, यो ही खडा हो गया हू। छि-छि, कितनी गर्द जम गई है, देखो तो।"

पाचू ने अपनी जेब से रूमाल निकाल, बेंच पर बैठ, धीरे-धीरे डेस्क साफ करना शुरू कर दिया—"जब ये डेस्कें बनकर आई थी, कितनी अच्छी लगती थी। लेकिन अब ये स्याही के दाग—अरे, ये तो लग ही जाते है। फिर लडके जो ठहरे। लेकिन गणेश उन सबमे अच्छा-अच्छा होगा, बचपन मे सब यो ही लापरवाह होते है। हम लोग नही थे क्या? लेकिन मुझे अपनी हर एक चीज़ का बडा खयाल रहता था। यह देखो, ताला तक नही लगा के जाते, बेवकूफ!"

पाचू ने दराज़ खोली। देखा, दराज़ मे एक स्लेट रक्खी हुई थी। उसपर एक पाउण्ड-शिलिंग-पेन्स का जोड किया हुआ था। आदत ने पाचू को काम दिया। उसने हिसाब जाचा, हर बार 'हासिल' मे दो और जुडे हुए। पाचू की मास्टर-वृत्ति उभरी—"बेईमान!"

पाचू ने स्लेट फेंक-सी दी। अगर कही स्लेट वाला सामने होता तो उसके कानो की रगें इस वक्त फडक रही होती।

पाचू की नज़र फिर दराज़ की तरफ गई। उसने देखा, एक कागज पर कैंची की मदद से आदमी से मिलती-जुलती और बनमानुसो से जुदा एक नई क़िस्म की नस्ल ईजाद की गई है। हाथ मे उठाकर देखा तो दूसरी तरफ मोटी और महीन कलमो तथा लाल-नीली पेंसिल से, आदिम युग के चित्रकार की भाति, अपनी कला से पूर्ण सतुष्ट किसी नन्हे चित्रकार ने अपने तथा साथियो के मनोरजन के लिए एक तस्वीर बना रखी थी। सबसे ऊपर सिर का एक छोटा गोला, उसमे कान कटे हुए, चोटी फरमायशी तौर पर टोपी से बाहर, मगर सिर के उस कटे हुए गोले के अन्दर ही, इसके अलावा दो आखे—उनपर चश्मा मय कमानियो के, नाक की जगह

प एक लम्बी लकीर और उसके नीचे साढे तीन हाथ की लम्बी मई, उसी गोले के अन्दर समाई हुई।

इस छोटे गोले को एक बहुत बडे गोले से मिलाने के लिए गले ने बाबा आदम के पुल का काम लिया गया है। मालूम पडता है, कैंची से गला मन-मुताबिक कट न सका, इसलिए बाप के ब्लेड से फिनिशिंग टच दिया गया है। बडे गोले मे से दो मुसल्लम हाथ और दो पैर निकालने मे किस मशक्कत से काम किया गया है, इसकी गवाही कैंची और कटाई का रुख देती है। पैरो के नीचे जमीन है, और उसपर अंग्रेजी अक्षरो मे लिखा हुआ है—"दिस इज दि कानाई मास्टर-रट्टूबी ।"

पाचू देखते ही हस पडा—"लडके भी कैसे शैतान होते है।'

मन बहल गया। शायद और कुछ हो, यह देखने के लिए दराज जरा बाहर खीची। अंग्रेजी किताब का फटा हुआ एक वर्क पाचू ने देखा—"लेसन नम्बर ट्वण्टीफोर, हम्प्टी-डम्प्टी पढते क्या हैं, कम्बख्त किताबो से कुश्ती लडते हैं।"

पाचू ने उसी हेडमास्टराना तिनतिनाहट, और बदले हुए तेवरो से पन्ने के दूसरी तरफ देखा। कोने पर दो जुदा-जुदा लिखावटो मे कुछ लिखा हुआ था। पहले बगला मे लिखा था 'छुट्टी', और उसके नीचे अंग्रेजी मे दस्तखती लिखावट से डी० आर०। दूसरी लिखावट, उसके ठीक नीचे ही, अंग्रेजी मे 'ग्राटेड', बकलम खुद तीन हरूफ, जी० के० सी०। नीचे ठाठ से लकीर मारकर तारीख तक लिख दी गई थी—२७ १-४३।

"जी० के० सी०, ये कौन बिगडेदिल हैं ?" पाचू अपने शिष्यो मे छुट्टी ग्राट करनेवाले जी० के० सी० महाशय को पहचानने की कोशिश करने लगा—"गोपाल, अच्छा ! अपना वो, काकी नम्बर आठ का भतीजा।"

पडोस के रिश्ते से रिटायर्ड सब-पोस्टमास्टर रामतनु बाबू पाचू के काका हुए। रामतनु बाबू की किस्मत को शुरू से ही जोरुओ का नाश्ता करने की आदत थी, लेकिन ये काकी नम्बर आठ, मालूम पडता है, काका को ही पचाकर मानेगी। इस अकाल मे भी अमर रहने की चुनौती देती

है। गोपाल उनके भाई का लडका है।

अप्रत्याशित रूप से पाचू का मनोरंजन हो रहा था। एक सेकंड के लिए वह भूख, परिवार, बंगाल, अकाल—सारे वर्तमान को ही भूल गया। शायद कुछ और मसाला मिले, पाचू के हाथ ने छोटी-सी दराज को खीचकर बाहर ही निकाल लिया।

"अरे, यह क्या ?" आश्चर्य की सीमा तक ही, इस नये अनुभव मे, पाचू को पीडा भी हुई। आश्चर्य के भाव का पारा तो नीचे उतरने लगा, लेकिन पीडा उतनी ही बढती गई—"ये दीमके कहा से आ गई ?"

एक क्षण के लिए वह जिस तरह अपने वर्तमान को भुलाकर बच्चो के खिलवाड मे बदल गया था, उसी तरह दराज को दीमको द्वारा खाया हुआ देखकर, प्रतिक्रिया के रूप मे, उसका दर्द दूना हो गया। चारो ओर से असफलता और हीन भावना जैसे उसे घेरकर दबोचने के लिए चली आ रही हो।

दराज को उलटकर देखा, पीछे देखा, डेस्क के नीचे झुककर देखा, कौतूहलवश पास की दूसरी डेस्को के नीचे भी झाककर देखा, दीमके सारा काठ चाटे जा रही थी। उनके गुच्छे के गुच्छे अपने आहार पर चिपके हुए थे।

पाचू को लगा जैसे दीमको के कारण ही उसका स्कूल सदा के लिए बद हो जाएगा। यो कभी न कभी तो अकाल खत्म होना ही—होगा ही। उसके बाद फिर यही डेस्के काम मे आती। लेकिन अब ?

पाचू के मन मे आशा इस रूप मे पहले कभी नही आयी थी, फिर भी इस समय यह विचार उसे अपना पूर्व परिचित-सा लगा।

स्कूल का भविष्य आज कई दिन से पाचू के मस्तिष्क की बहुत बडी उलझन बना हुआ था। फरवरी के आखिरी हफ्ते से ही लडके कम होने लगे थे।

एक सौ बाईस लडको मे से धीरे-धीरे बीस गए, पच्चीस गए, पचास गए। आज १९ मार्च है और स्कूल मे एक भी लडका नही। यो तो आर

हफ्ता-भर से कभी वह खुद अकेला हो, और कभी-कभी मोनाई बनिये के चिरजीव न्याडा, वगल मे वस्ता दवाए, नमूदार हो जाते हैं। चपरासी विदू हफ्ता-भर से गाव छोडकर चला गया है, तव ने तीन कमरे तो खुले ही नही। कानाई मास्टर जनवरी मे ही गाव छोडकर पछाह चला गया था। वाद मे सुना, सी० ओ० डी० मे मिस्त्री हो गया है।

कानाई मास्टर है वडा अच्छा आदमी। जव सारा गाव स्कूल औ-पाचू के खिलाफ खडा हो गया था तव कानाई लुहार ही वढकर उनसे हाथ मिलाने आया था। पाचू की आखो के सामने वह तस्वीर साफ खिच गई, जव वह और कानाई दिवू पडित की पाठशाला मे एकसाथ पढते थे। कानाई दिवू पडित की पाठशाला से आगे न पढ सका, मगर उतने मे ही वह मजे की वगला लिख-पढ लेता था। वाद मे कानाई का पढना-लिखना छुडाकर वाप ने उसे अपनी 'विद्या' देकर मिस्त्री वना दिया—ऐसा कि दो-चार-पाच गावो मे कानाई मिस्त्री का डका वजने लगा। अपने साथ के पढे-लिखो मे पाचू कॉलेज मे फर्स्ट आया था और सरकार से वजीफा लेकर उसके विलायत जाने की भी कुछ अफवाह कानाई ने सुनी थी।

पाचू जव से गाव आया है, कानाई उससे मिलता तो इस तरह मानो पाचू का सहपाठी होने के नाते उसे भी आत्मगौरव का वोध हो रहा हो। यह वात दूसरी है कि कानाई उससे मिलता कम ही था। दिन-भर अपने काम मे फसा रहता था।

फालतू वक्त काटने के लिए कानाई साप्ताहिक 'देश' का ग्राहक वन गया था, सो हफ्ते-भर मे एक-एक विज्ञापन तक घोट के पी जाता था। जव से 'देश' उनके पास आने लगा, तव से किसी अक, किसी भी पेज, कविता-कहानी, लेख, नाटक-फाटक से लेकर विज्ञापन तक, किसी विषय मे कानाई मास्टर को ज़रा कोई छेड-भर दे और फिर देखे कि खट् से मशीन चालू हो जाती है।

पाचू ने एक वार उनका रिकार्ड स्थापित करवाया था। 'आनन्द मठ' पूरा का पूरा रटकर सुनाने के लिए उसने कानाई मास्टर को चैलेंज

दिया। उस वक्त तो वह कुछ बोला नही, किताब लेकर चला गया। चार दिन बाद आया, किताब सामने पटक दी और जनाब ने जो शुरू किया तो पहले पेज के कॉमा-कोलन-फुलस्टॉप मे लगाकर प्रेम की भूले तक ज्यो की त्यो फुलझड़ी की तरह ज़बान से दनादन छूटने लगी। तीन घटे मे सारी किताब खतम—घाते मे पुस्तक के अन्त मे छपी हुई प्रकाशक के अन्य प्रकाशनो की सूची भी, कुल तारीफो के साथ, सुना डाली, सजिल्द-अजिल्द के दाम तक। तब पानी पिया।

कानाई मिस्त्री की यह सनक दूर-दूर तक कहावत बन गई थी। पाचू ने जब स्कूल शुरू किया तो सारा गाव खिलाफ। इधर स्कूल भी बराबर चालू रखना, और बीच-बीच मे प्रिंसिपल जॉर्डन से मदद और सलाह मागने के लिए शहर भी जाना। बड़ी मुसीबत हो गई थी। घर मे हिम्मत बधानेवाली एक अकेली मा थी, जब कहे तो यही—"पाचू, घबराना मत बेटा, मुसीबत मे ही तो नारायण परीक्षा लेते हैं। उन्हे जब उबारना होता है, तो आप आते है।"

एक दिन कानाई मिस्त्री आया आते ही बड़े रोब के साथ कहने लगा—"तुम्हारे साहस को देखकर मुझे तुमपर श्रद्धा हो गई है। तुम हमारे गाव के नेपोलियन बोनापार्ट हो!"

फिर कुछ सोचकर कानाई बिलकुल नजदीक आ गया और धीरे-धीरे कहने लगा—"मेरे पास कोई जमा तो है नहीं भाई। हा, जो कमाई है उस हैसियत से जो कहो तुम्हारे स्कूल की सेवा करू।"

पाचू को उस समय पैसे से अधिक सहयोगी की चाह थी। कानाई छाती भरकर बोला—"जहा तक मैं पढ़ा हू, सब लड़को को पढ़ा दूगा। तुम बेफिक्र रहो। शहर जा के स्कूल के लिए मदद मागो। यहा मैं सभाल लूगा। बाकी एक बार ऐसा स्कूल बनाओ मास्टर, कि लाट साहब को भी यहा आना पड़े। तब इन गाववालो को मालूम होगा कि विद्या पढ़ना भी कोई जान छोटी-बड़ी नहीं है।"

यह कहके उसने पाचू के कधे पर हाथ से एक थपकी दी और बस, नाच

राइट अवाउट टर्न ! पाचू को एक सेकड लगा, जैसे मा के नारायण ही दिमाग से निकलकर कानाई के रूप मे सामने दिखाई दिए हो। चित्त की सिसकती हुई अवस्था मे उसे कानाई का यह अयाचित, अप्रत्याशित सहारा मिला था।

प्रसन्नता-मिश्रित आश्चर्य से स्तब्ध पाचू अभी कानाई के वारे मे सोच ही रहा था कि कानाई फिर से कमरे मे लौटकर वोला—"उस वक्त वोलने मे मुझसे कुछ भूल हो गई थी, पाचू वावू। मैंने तुम्हे भूल से गाव का नेपोलियन वोनापार्ट कह दिया। दरअसल मैं तुम्हे शेक्सपियर कहना चाहता था। तुम भी शेक्सपियर से कम विद्वान नही हो, पाचू वावू ! उसने 'पोयट्री' लिखकर लोगो को पढाया और तुम स्कूल खोलकर पढाते हो।"

फिर ज़रा एक सेकड निश्चय करके वोला—"वस, यही ठीक है। तुम शेक्सपियर हो, नेपोलियन वोनापार्ट तो लडता था।"

"ह ह ह !"

ज़ोर-ज़ोर से हसने की अपनी ही आवाज़ को सुनकर पाचू को होश आया। दीमको-भरी दराज़ सामने आई। अकाल, इस अकाल ने ही कानाई मास्टर को छुडाया। गोविन्द मास्टर भी मार्च के पहले हफ्ते मे चले गए—"वारह रुपये मे अव पोसाता नही, पाचू वावू ! कोई दयाल ज़मीदार से पूछे, सास के विना भी आदमी जी सकता है जो वैल खोल-कर ले गए। इससे तो भीख मागकर जीना भला। चार पेटो की आग से तो वचा रहूगा।"

चले गए, गोविन्द मास्टर भी चले गए—सव चले गए—गणेश भी चला गया। ये स्कूल भी आज वन्द हो जाएगा। इसे वन्द करना ही पडेगा। अव तो यहा भी जी नही लगता। फिर ?

इस 'फिर' की खोज मे पाचू ने एक वार इधर-उधर, अपने चारो ओर, खोई हुई-सी आखो से देखा।

जी न लगने की समस्या पाचू के दिमाग मे घुन वनकर समा गई

थी। घर मे जी नही लगता। गाव जैसे काटने को दौडता है। कहा जाए ? स्कूल मे एक लडका न आने पर भी पाचू नियमित रूप से रोज स्कूल आता है, दिन भर बैठा रहता है और आई-गई, नई-पुरानी बातो से अपना जी बहलाया करता है। लेकिन आज गणेश की मृत्यु ने स्कूल की बिल्डिंग से उसका मन एकदम उचाट कर दिया है, किसी तरह भी मन नही लगता। अब वह अपना जी कैसे बहलाए—कहा जाए ?

पाचू का मन इस वक्त चिडचिडा हो रहा था।

बाहर निकालकर डेस्क पर रखी हुई दीमको-भरी दराज से पाचू के हाथ अपने-आप ही खेलने लगे। इससे उसका ध्यान बटा। उसने अपने हाथो को उस दीमकोवाली दराज पर महसूस किया। उसने चौंककर फौरन अपने हाथ हटा लिए। उसे अनायास ही ऐसा महसूस होने लगा जैसे दीमको वाली दराज पर इतनी देर तक हाथ रखकर उसने कोई बहुत बडी गलती की है।

"दीमको की यह दराज ! मतलब यह कि दीमको की फौज की फौज डटी है। वह यहा से नहीं हटेगी। और साहब, क्यो हटे ? लकडी, कागज वगैरा उसकी खुराक है। और आदमी ने उसपर भी अपना अधिकार कर लिया है—वह भी खाने के लिए नहीं ! ओफ्फोह, इतना अन्याय ! भला सोचिए, हज़ारो साल से, जब से आदमी ने लकडी पर अपना अधिकार कर उसका प्रयोग करना सीखा, दीमको की जाति मे अकाल पड रहा होगा ! ओफ्फोह, इस तरह दीमकें हज़ारो साल से अकाल की यातनाए भुगत रही है ? बेचारी !"

पाचू की आखो मे आसू छलछला उठे। अकाल की सारी यातनाओ को सहते हुए, अपने को मज़बूत बनाने के लिए, वह बार-बार आसुओ का दमन करता आया है। लेकिन अगर आज हज़ारो साल से अकाल-पीडित दीमक-जाति की दुर्दशा की कल्पना से उसकी आखो मे आसू दिखाई पड गए तो उसका यह अर्थ नहीं कि उसका धैर्य घुटने टेक रहा है। नहीं, उसका धैर्य भग नहीं हो सकता। उसका धैर्य अडिग है।

और, उसने अपने अडिग धैर्य को और भी अधिक अडिग बनाने के लिए दीमको के अकाल पर आसू आ जाने की वात के वारे मे, अग्रेज़ी मे, वढ-चढकर सोचना शुरू किया—

"जस्ट इमेजिन, देयर चिल्डरन—सन्स, डाटर्स, नेफ्यूज़, नीस—अ, नीस—यस, यस, नीस आलसो। नीस मस्ट वी देयर, शुड वी देयर, आट टू वी "

पाचू ने एकाएक अपने मे एक हल्की-सी चेतना का अनुभव किया। उसे लगा कि वह विचारो मे वहक रहा है। पर यह चेतना उसे अच्छी न लगी। मन को भुलावा देकर वहलाने का और कोई साधन उसके पास नही था। अपने 'विचारो' को ज़बर्दस्ती न्यायपूर्वक सत्य सिद्ध करने के लिए जो कुछ भी वह सोच रहा है, वह सव निहायत ही समझदारी के साथ सोच रहा है। विधि का विधान ही ऐसा है। हमने दीमको को भूखा मारा और दीमक हमे "रिमेम्वर दिस आलवेज़ माई व्वाय, देयर इज़ लिमिट फॉर एवरीथिंग तुम अभी दीमको पर चाहे जितना अत्याचार कर लो, लेकिन दीमको की सहनशक्ति का भी अन्त होता है। तो ? लेकिन वह तुम्हारा विगाड ही क्या सकती हैं ?"

पाचू ने एकदम से अपने दोनो हाथो को वहुत पास लाकर देखना शुरू किया। गौर से देखा। इतनी देर से दीमकोवाली दराज़ पर हाथ रखे हुए थे, शायद एक-आध चढ गई हो।

"तव फिर ? काटेगी ? ज़रूर काटेगी। अरे, जव लकडी और दराज़ को काट सकती है तो आदमी के मास मे क्या रखा है—मुलायम गोश्त और पीने को आदमी का गर्म-गर्म खून। अगर कही दीमको की ज़वान को चस्का लग गया ! फिर तो क्या होगा ? अरे, अभी हफ्ते मे ६ मौतें हुई है, तव छ सौ, छ हजार, लाख, दस लाख, करोड, दस करोड, अरव, पद्म, शख, महाशख—इसके माने सव गिनती खत्म। तव तो वस प्रलय—एकदम प्रलय !"

पाचू अपने दिल को वेलगाम वहलाए जा रहा था—"दीमको द्वारा

पृथ्वी का अंत? ऐसा तो कहीं ..."

तभी पट् से ध्यान आया—"अरे, अपने वाल्मीकि! जस्ट इमेजिन, आदमी इतना बेहोश कि शरीर पर दीमक चढ़ने की खबर न हुई। नानसेन्स, दरअसल इसका अर्थ है कि इस बार आदमी पर दीमकों की विजय होगी—वाल्मीकि-विजय। ठीक तो है, पहली प्रलय में मनु बने और उनकी संतान—मानव, निकम्मी सिद्ध हुई। इस बार प्रलय के बाद वाल्मीकि की संतानों से नया ग्लोब बसेगा। वाल्मीकि के राम-राज्य की अमर कल्पना। प्रलय के बाद—हां, यह प्रलय तो है ही। दीमकों की दीमक-प्रलय!"

पाचू एकाएक चौंककर उठा। उसे अपने दिमाग की इस हालत पर बड़ी शर्म आने लगी। अब इतना भी अपने दिमाग पर अख्तियार न रहा। उसे अपने दिमाग की कमजोरी दूर करने के लिए दवा खाने की जरूरत एकाएक महसूस होने लगी। वह कौन-सी दवा खाए? उसकी दराज में एस्प्रो की टिकिया है। जब सर्दियों में एक दिन सिर दुखा था, तब यहीं तो मंगा के खाई थी और बाकी यहीं दराज़ में रख दी थी। जरूर होगी।

पाचू कुछ सम्भला। लेकिन मेज़ की दराज़ में भी अगर वहां दीमकें छि, वाट नानसेन्स फिर बहका। बुरी बात। यू कान्ट अफोर्ड टु डू दिस मिस्टर पी० मुखर्जी, तुम्हारे ऊपर इतनी बड़ी ज़िम्मेदारी है, सारे घर की ज़िम्मेदारी है।

"लेकिन कहां? मैं सतर्क तो हूं। मैंने अभी तक कोई गलत बात नहीं की। मैं बिलकुल ठीक हूं। तब फिर यह दवा किसलिए एस्प्रो की टिकिया ..."

इस वक्त तक पाचू अपनी मेज के पास पहुंचकर कुर्सी पर बैठने जाता था कि यह विचार आते ही वह एकदम गंभीर हो गया। उसका हाथ मेज पर टिक गया, और वह वैसे झुककर खड़ा-खड़ा सोचने लगा—"खाऊं कि न खाऊं?"

पूरी चेतना के साथ, निरपेक्ष-भाव से, उसने अपने स्वास्थ्य की मन

ही मन परीक्षा लेनी शुरू की—"कही दर्द है ? हाथ-पैरो मे, पेट मे, सिर मे ?"

वगैर जवान चलाए उसने पूरी चेतना के साथ अपने-आपसे सवाल-जवाव करना शुरू किया और महसूस किया कि एडी से लेकर चोटी तक रग-रग मे, पोर-पोर मे, दर्द समाया हुआ है। इसके वाद उसने महसूस किया कि उसकी आखे जल रही है, और उसका वदन भी गर्म है। तव तो दवा जरूर ही खानी चाहिए। हा, सास भी गर्म है।

पाचू ने अपने हाथ को नाक के पास ले जाकर सास को महसूस किया—"इसके माने ये कि मुझे वुखार है, मलेरिया।"

मलेरिया का खयाल आते ही उसे तुरत ध्यान आया कि वह भूखा भी है। डर ने उसे फिर घेरना शुरू किया। उसे फिर से चक्कर आने लगा, मेज़ पर टिके हुए हाथ कापने लगे, पैर एकदम सुन्न पड गए—उनमे जैसे दम न रहा हो।

अपना सारा मानसिक वल शरीर को देकर वह फिर सीधा तनकर खडा हो गया—"मैं विलकुल ठीक हू। मुझे कोई वीमारी नही है। ज़रा भी वुखार नही है। ये सव मेरी खामखयाली है। मैं वडा वेवकूफ हू जो यह सव खुराफात सोचता हू। मेरी समझ मे नही आ रहा है कि आखिर मैं यह सव सोचता ही क्यो हू ? नही, नही, अव ऐसे वेहूदे विचार अपने मन मे आने ही न दूगा।"

अपने को जगाकर पाचू दिल को वहलाने के लिए फौरन ही काम की सोचने लगा। उसने एक वार चारो तरफ नज़र डाली—ऊचे प्लेटफार्म पर मेज़ और कुर्सी रखी थी। कुर्सी पर वैठे हुए पाचू की आखें, अपनी दृष्टि के क्षेत्र को वहुत सकुचित कर, अपनी वाई तरफ से दाहिनी ओर तक अर्ध-चन्द्राकार मे क्रमश प्लेटफार्म के सहारे घूमने लगी। आखो को फोकस करते हुए पहले फ्रेम मे उसने प्लेटफार्म के नीचे सीमेण्ट-वालू के फर्श को दूर तक देखा। सीमेण्ट के चौके जडे हुए हैं, यह शुवहा दिलाने के लिए ही शायद इमारत वनानेवाले कारीगरो ने फर्श-भर मे ये चौकोर

लकीरें काटी होंगी।

प्लेटफार्म के चारों ओर अर्द्ध चन्द्राकार में अपनी आंखें घुमाते हुए, दृष्टि-सीमा पहले फ्रेम में ही, मेज का कोना आ जाता था। गोलार्द्ध में यात्रा करती हुई आखें मेज़ की सतह को छूती हुई उसके ऊपर से गुजरीं—तीन-चार डेस्को के सामने दिखाई पडनेवाले हिस्से पर से होती हुई। पाचू सोचने लगा, समझो, क्लास में सब लडके मौजूद हैं। जिस हद तक पाचू की आखें प्लेटफार्म के आस-पास उस गोलार्द्ध में घूमी थी, उस हद में सारा दर्जा लडको से भरा होने पर भी, वे उसके लिए अदृश्य ही रहते थे।

पाचू की गर्दन इन डेस्को को देख घूमते-घूमते ज़रा थम गई। आखो की पुतलियो को उसी सीमा के अदर वापस लौटाकर उसने आखो से डेस्को को महसूस किया और पुतलिया फिरने के साथ ही गर्दन फिर उसी सीमा में घूमती और क्रमश आनेवाले कुछ, ज्यादा उजाले को देखती, प्लेटफार्म के नीचे जरा दूर तक, सीमेण्ट-बालू के चौके कटे हुए फर्श पर टिक गई। सूर्य का प्रकाश दरवाज़े से कमरे में मद्धिम होकर आ रहा था। सीलन की हल्की-सी नमी लिए हुए सीमेण्ट-बालू के चौके कटे हुए फर्श पर वह मद्धिम रोशनी उसे बडी हलकी और शीतल मालूम हुई। उसने अपने-आपमें सतोष का बोध किया और इससे उसको आनन्द हुआ।

गोलार्द्ध में नज़र दौडाने की क्रिया के इस एक सेकण्ड में पाचू ने अपने-आपमें एक तरह की उमग का अनुभव किया। और उसी उमग के सहारे उसने अपने को यह सोचने दिया कि तमाम बेंचो पर लडके बैठे हैं। उसने उन सबो को कुछ काम दे रखा है—गाय पर लेख लिखने के लिए आज्ञा दी है और वह स्वय मेज़ पर झुका हुआ—रजिस्टर पर—फीस का हिसाब जोड रहा है।

उसने अपना फाउण्टेनपेन कमीज़ की जेब से निकालकर मेज पर रखा। फिर ताला खोलकर दराज़ बाहर खींची। चाक-मिट्टी का आधा भरा हुआ डिब्बा, और बोर्ड साफ करने के लिए 'डस्टर', 'नाजर-वाली' की एक दवात और पीछे की तरफ बंधे हुए कागज़ों का एक बंडल था।

"चाक चुराने का शौक लडको मे कितना होता है ! जिस दिन दराज़ ज़रा देर के लिए भी खुली रह गई कि चार-पाच चाके गायब !"

पाचू अपने मन को गुदगुदाने लगा—"मैं अभी ज़रा देर के लिए दराज खुली छोडकर वाहर चला जाऊ · लेकिन लडके कहा हैं ?"

पाचू इस वार अपने को धोखा न दे सका—सहसा उसके मुह से सच निकल ही पडा।

सूने क्लास-रूम को देखने के लिए, फासी के तख्ते पर कदम रखे हुए शहीद की दृढता के साथ, पाचू ने अपना सिर ऊचा उठाया।

कमरा स्तव्ध। डेस्को और वेंचो की लम्वी-लम्बी चार सूनी कतारें, डेस्को पर स्याही के तमाम दाग और उनपर गर्द का पर्त। अन्दर आते ही सामनेवाली डेस्क पर उसने ताला खोलकर रखा था। पीतल के उस बडे ताले पर पाचू का ध्यान एक सेकड के लिए अटका। ताला इस जगह कभी भी नही रखा जाता। दीवालो पर टगे हुए वगाल, हिन्दुस्तान और योरप के तीन नक्शे, कोने मे छोटी-सी मेज पर रखा हुआ एक ग्लोब। व्लैक वोर्ड पर अग्रेजी की एक कविता और उसपर धूल जमी हुई। पाचू का दम घुटने लगा। तीव्र पीडा तीर की तरह सनसनाती हुई उसके दिल मे समा गई।

सूनापन, अपनी असमर्थता और निष्क्रियता का अनुभव कर उसका हृदय फटने-सा लगा।

दराज़ खुली हुई थी। सामने ही चाक-स्टिको से आधा भरा हुआ डिव्वा रखा था। आज इसका क्या उपयोग है ? आज इसे चुरानेवाला कौन है ? आज उसके दर्जे मे अगर लडके वैठे होते तो वह कहता—"लो, यह सव लूट ले जाओ।"

काश कि अपने स्कूल का सव कुछ लुटाकर इन सूनी डेस्को को एक वार भी लडको से भरी हुई अगर आज वह देख सकता !

अपनी असमर्थता पर उसे वडी जोर से झुझलाहट आ गई। चॉक-स्टिको से आधे भरे हुए डिव्वे पर छूटते ही उसकी नज़र गई और उसने

फौरन ही उसे उठाकर सामने की डेस्कों पर उछाल दिया। चाकों के गिरने से डेस्कों पर पचीसों हल्की 'ठक-ठक' की आवाजें, प्राय सामूहिक रूप से, उसके कानों मे गूज उठी। ढलवा डेस्को से नीचे लुढ़कती हुई चाकें, आपस मे टकराती हुई, ठक-ठक फर्श पर गिरकर टूट गई। कुछ चाकें डेस्को पर ही पडी रही।

इस तरह मानो चॉक-स्टिकों का अभिमान भग कर, एक विजेता की दृष्टि से उनकी तरफ देखते हुए, दार्शनिक की मुद्रा मे, पाचू ने सोचना शुरू किया—"हाय रे इनका दुर्भाग्य, आज ये चाकें इस तरह लुटी हुई पडी है।"

आज इनका कोई भी प्रेमी नहीं। वो खुशी से चमकती हुई शैतान आखें, वो किलकारिया, सबसे ज्यादा चाकें हथियाने के जोश मे कुश्तम-कुश्ता, धौल-धप्पा।

लडकों और चाक-स्टिकों के रिश्ते की एक अधूरी सी, भावनामय तस्वीर, उन सूनी बेंचों और डेस्कों पर उसकी आखों के सामने खिच गई।

उसका दिल भर आया।

चार दिन के भूखे शरीर और चिन्ताक्रान्त मन से दिल का यह भार सभल न सका।

स्वय अपने लिए सवेदना प्रकट करने मे भी आज वह असमर्थ था।

पाचू अपने से मान करने लगा। एक निहायत बारीक विद्युत्-रेखा की तरह तडपती हुई झुझलाहट-सी उसने अपने सिर मे महसूस की।

झुझलाहट ने अनजाने मे ही पाचू के दिमाग को लगभग सुलाकर बेहोशी की दशा मे उसपर अधिकार जमा लिया। शरीर ने मस्तिष्क के प्रभुत्व को अस्वीकार कर मनमानी करनी शुरू कर दी। आखों और चेहरे पर तमतमाहट आ गई। हाथ तन्दुरुस्त से ज्यादा फुर्ती दिखाने लगे। डस्टर [illegible] बाहर पटक दिया। [illegible] फेंकने के लिए दाहिना हाथ झटके के साथ आगे बढा, फिर एकाएक रुककर धीरे-से मेज

पर वापस चला आया। दवात मेज पर रख दी।

अब क्या करे ?

फाउण्टेनपेन पास रखा था। उसे याद आया, परसो रात को घर मे जॉर्डन साहब को चिट्ठी लिखते-लिखते ही स्याही खतम हो गई थी।

पाचू फाउण्टेनपेन मे स्याही भरने लगा। तभी उसे एकाएक सूझा—"मुझसे तो यह कलम ही अच्छी। इसे अपनी खूराक तो मिल गई!"

रोते-रोते सो जानेवाला बच्चा जैसे सपने मे फिर से सिसकिया भरने लगे, पाचू ने अपने खाली पेट मे सुरसुराहट महसूस की। छाती से नीचे आने-जानेवाली सास का दौरा उसे भारी-भारी-सा लगने लगा।

फिर उनका मन गिरा। फिर उसने अपने को सभाला—"यह क्या मि० पाचू गोपाल! अरे, जाओ भी, जरा-सी भूख भी नही बर्दाश्त होती तुमसे ? औरो को देखो, सारा गाव, सारा बगाल भूखा है।"

"सारा बगाल!"—पाचू की आखे सामने दीवाल पर लटके हुए बगाल के नक्शे पर घूमने लगी।

पिछले दिनो की बात है। पाच ही महीने तो हुए हैं। बारह रुपये मन के भाव से चावल बेचकर गाव का हर किसान कितना खुश नजर आता था! बारह रुपये मन चावल बिकेगा, कभी बाबा राज मे भी ऐसा हून नही बरसा। तीन-साढे तीन के भाव मे बिका करता था। बारह रुपये मन के लोभ मे लोग अन्धे हो गए। घरो का धान भी उठा-उठाकर बेच दिया। दो-तीन उपास करना या आधे-पेट रहकर ज़िन्दगी गुज़ार देना—इसकी आदत तो हमारे देश के हर किसान को जन्म से ही होती है। पेट की ओर से तो वह प्राय उदासीन हो चुका है। लेकिन रुपया! अरे, वह तो सपने की चीज़ है। लक्ष्मी का सुख भोगना तो सदा से ही बडे आदमियो के भाग मे रहा है। इस बार बडे भाग्य से मा लक्ष्मी किसानो पर दया कर रही हैं—दुर्गापूजा के अवसर पर!

हज़ार-हज़ार, आठ-आठ सौ की गठरिया बाधकर किसानो के पीले चेहरो पर लाली दौड गई। सुहागिनो की शिकायतें जागी, सुनारो के भाग

जागे। कपड़े-गहने, शौक-सिंगार की चीजें—गाव के आठ-दस घरो मे ग्रामोफोन तक बजने लगे। लोग-बाग पक्के मकान बनवाने की सोचने लगे। बूढो को तीरथ-बरत की उतावली पड़ने लगी। पैसे के अभाव मे किसान जिन सुखद कल्पनाओ से अपना मन बहलाया करता था—अगर उसके पास पैसा होता तो वह यह कहता और वह करता—अब वह अपने जी के सारे हौसले निकाल लेगा। इस वक्त वह लाट साहब का भी बाप है। दयाल ज़मीदार और मोनाई अब उसके ऊपर धौंस नही गाठ सकते।

पैसे की गर्मी से किसान बौरा गया।

दयाल ज़मीदार और मोनाई की उधार-वसूली शुरू हुई। पैसे के जोश मे, दुर्गापूजा के अवसर पर, किसान जैसे यह भूल ही गया था कि उसे कर्ज़ा भी पाटना पड़ेगा। पैसा अनेक मदो मे खर्च हो चला था।

मोनाई की तरफ से, दयाल जमीदार की तरफ से, कचहरियो के सम्मन आने लगे। चार दिन की चादनी दिखाकर सुहागिनो के तन पर चमकते हुए सोने और चादी के गहने उतर गए। ग्रामोफोन बजने बद हो गए। पक्के मकान अब सुरग मे बनेंगे। दस का माल दो मे लुट गया। बचा-खुचा नाज, कपडा-लत्ता, चोर-डाकू लूट ले गए।

परजा मुह देखती रह गई।

चावल का भाव अठारह रुपये मन!

चावल चौबीस रुपये मन!!

पैंतीस रुपये मन—चालीस रुपये मन!!!

यह क्या हो रहा है? क्या होगा?

कइयो ने फासी लगाकर जाने दे दी। पोखरो मे आए दिन एकाध लाश उतराने लगी। लोग नौकरी की तलाश मे गाव छोड़-छोड़कर शहर भागे, इस लालच से कि शहर मे कमाकर घर भेजेंगे। गाव-भर मे इने-गिने जवान ही दिखाई पड़ने लगे।

माताए अपने नन्हे मुन्ना को मन का दिलासा देने लगी—"तेरे बाबा शहर मे रुपया भेजेंगे, तब चावल खरीदेंगे। बिना पैसे लिए मोनाई नहीं

क्यो देने लगा ।"

बूढे मा-बाप डाकिये को घेरकर पूछते—"मेरे बेटे का मनीआर्डर लाए ? उसने जरूर भेजा होगा। तुम लोग सब डाकखाने वाले मिलकर हमारा रुपया खा गए ।"

मनीआर्डर के आसरे मे भूख न रुकी ।

घर-मकान, खेत-खलिहान, कपडे-लत्ते, चिथडे-गुदडे, सब बेच-बेचकर खा गए। मोनाई ने सब कुछ खरीदा, और चावल भी बेचा !

जमीदार के डडे खाकर तालो की मछलिया ज्यादा न खा सके। पेड-पत्ते, घास-फूस, कुत्ते-बिल्ली-चूहे का मास, जो भी मिला, पेट की ज्वाला मे भस्म हो गया। भूख इतने पर भी नही मानती—रोज लगती है।

भूख का ध्यान आते ही पाचू की चेतना वापस आ गई। उसकी आखें इतनी देर से बगाल के नक्शे पर टिकी होने पर भी उसे देख नही रही थी। विचारो से जागकर उसकी आखो ने फिर से बगाल को देखा। अनगिनत टेढी-मेढी लकीरो और काले-काले अक्षरो मे सैकडो गावो, कस्बो और शहरो के नाम इतनी दूर से आखो के लिए अस्पष्ट होने पर भी उसके दिमाग मे साफ-साफ उभरकर आए। हर गाव मे, हर घर मे, इसी तरह भात की समस्या होगी। और हर गाव का मोनाई इसी तरह बेहिसाब दाम माग रहा होगा। लोग मोनाई की दूकान पर इसी तरह खुशामद करते होगे, मोनाई को स्वर्ग से भी ऊचे-ऊचे आशीर्वाद दे-देकर हाथ-पाव जोडते होगे। सारे गाव की भूख मुनाफे का लोभ बनकर मोनाई के पेट मे समा चुकी होगी। लोग मोनाई को घेरकर रोते होगे, कोसते होगे, गालिया देते होगे। और हर गाव का मोनाई आशीर्वाद और गालियो को समान रूप से सुनता हुआ, स्थिर चित्त होकर बैठा-बैठा अपने खाते का हिसाब जोडता होगा। हजारो लोग मर रहे होगे। गाव छोडकर भाग गए होगे। लडके भी चले गए होगे। हर गाव का स्कूल भी इसी तरह सूना हो गया होगा। और वहा के मास्टर !

पाचू को अपने घर की याद आई। पूरे तौर पर आज चार दिन से

उसके घर मे भी अकाल पड रहा है। किसीने भात की एक कनी भी मुह मे नही लगाई। उसकी दस बरस की छोटी बहन कनक ने भी अपने छोटे-छोटे भतीजो—दीनू और परेश के पक्ष मे अपना हिस्सा त्याग दिया है। सिर्फ इन्ही दोनो को दो-चार कोर खिलाकर चावल का माड पिला दिया जाता है। लेकिन वह उनका पेट भरने के लिए काफी नही। सारा दिन 'भात-भात' चिल्लाते ही बीतता है। उसकी आठ महीने की नन्ही-सी भतीजी चुन्नी भूख के मारे रोते-रोते अधमरी-सी हो गई है। मा का दूध पीती है, जब उसे ही खाने को नही मिलता तो वह बेचारी दूध कहा से पाएगी ? चावल का माड उसे भी थोडा-बहुत चटा दिया जाता है। मा, बौदीदी, उसकी पत्नी मगला, तुलसी, कनक, बाबा, दादा और वह खुद भी तो आज चार दिन से बस पानी पी-पीकर ही जी रहे है।

लेकिन आज तो शाम को दयाल जमीदार के यहा से चावल मिल ही जाएगा। पर इस तरह कितने दिन चलेगा ? आखिर कब तक बचेगी ? फिर आखिर किसकी बचेगी और किससे बचेगी ? घर-घर मे यही ठडे चूल्हे हैं। क्या कुलीन, क्या अकुलीन—एक मोनाई और दयाल जमीदार तथा उनके जैसे दस-पाच को छोडकर अब किसके यहा चूल्हे मे बराबर आग दिखाई देती है ? सारा गाव इसी तरह भूख से तडप-तडपकर जान दे देगा। पार्वती काकी मरी, हारान मरा, तिनकौडी मरा, गणेश मरा। गाव मे बराबर मौतें होती जा रही है। और इसी तरह एक दिन उसके घर के लोग भी एक-एक करके

"ओह !"—पाचू के माथे पर सिकुडनें पड गईं। चेहरा खिसियाहट से भर उठा। उसका जी बुरी तरह से विचलित हो गया।

लाख न चाहने पर भी बार-बार अपने विचारो मे मृत्यु तक पहुच जाने की आत्म-दुर्बलता पर पाचू की आखो मे आसू बरबस छलछला उठे। इन आसुओ पर वह और भी खीझ उठा—वह यह सब बाते सोच ही क्यो रहा है ? क्या उसे दुनिया मे और कोई काम नही है ?

धोती के छोर से आखे पोछकर पाचू ने [illegible] दरवाजे की तरफ देखा।

पीछे की तरफ कागज़ो का बडल बधा रखा था। उसने झट उसे वाहर निकालकर उसपर वधी हुई सुतली खोल डाली। उसमे चिट्ठिया-पत्रिया, डिग्रियो के सर्टिफिकेट वगैरा, वधे रखे थे। एक वार जव उसके दादा ने अपने जोम मे आकर उनका एक सर्टीफिकेट फाड डाला था, तव से वह अपने निजी कागज-पत्र स्कूल की दराज़ मे ही रखता है।

पाचू ने कागज़ो को उलटना शुरू किया। प्रोफेसर वनर्जी का दिया हुआ सर्टीफिकेट, जॉर्डन साहव का सर्टीफिकेट, जॉर्डन साहव की चिट्ठी, फिर जॉर्डन साहव की दूसरी चिट्ठी, राय भुवन मोहन सरकार की चिट्ठी, गणेश की लिखावट

सुचारु रूप से वगला लिखना-पढना सीख लेने के वाद गणेश एक वार कुछ दिनो के लिए अपने काका के पास ढाका गया था। वहा से उसने यह चिट्ठी लिखी थी—"श्रीचरण कमलेषु "

अपने दिल के अन्दर ही अन्दर उसने यह जाना कि गणेश के इस पत्र पर ज़रा-सा ध्यान देते ही फौरन मृत्यु उसके विचारो मे आ जाएगी। और जव तक मृत्यु स्पष्ट रूप से उसके दिमाग मे आए-आए, उसे अपना ध्यान किसी और तरफ "

अरे हा, वह तो पिछले महीने की फीस का हिसाव देखने वैठा था न!

उसने अपने आगे रखे हुए कागजो को वायें हाथ से झटककर एक ओर सरका दिया। कागज़ ऊचे-नीचे होकर ज़रा विखर गए।

फौरन ही दूसरी दराज़ का ताला खोलकर उसमे रखे हुए दोनो रजिस्टर उसने वाहर निकाल लिए। रजिस्टर वाहर निकालते समय वीच से कोई चीज़ खिसककर प्लैटफार्म पर जा पडी। पाचू ने उसे देखा। उसकी आखें खुशी से चमक उठीं—एस्प्रो का पैकेट!

फौरन ही रजिस्टरो को मेज़ पर पटक और फुर्ती से झुककर उसने एस्प्रो का पैकेट उठा लिया। लिफाफे के अन्दर दो टिकिया रखी थीं।

"खा लू? यानी वीमार नही जी, वीमार नही, यो ही सिर मे दर्द है। सच? हा-हा, इतने ऊट-पटाग विचार सिर मे समाए हुए हैं तो

क्या दर्द भी न होगा। जरूर दर्द हो रहा है।"

कागज़ के अन्दर चमकती दो सफेद टिकियो को पाचू ने भूखी आखो से देखा। फिर कागज फाडकर उसने दोनो टिकिया हाथ मे रखी और इससे पहले कि कोई नया तर्क दिमाग मे उठे, पाचू ने अपने से चुराकर उन्हे झट से मुह मे रख लिया।

"निगल जाऊ ?—नही, चबाना चाहिए। जरा देखे तो इसका स्वाद कैसा होता है।"

कट-कट, दोनो टिकिया दातो मे बोल गई। जैसे कोई खाने की बजनी चीज़ हो, इस तरह उसने उन दोनो टिकियो को चबाया और फिर-फिर चबाना चाहा, लेकिन वे तो घुलने लगी। दातो की अक्षमता को समझकर पाचू ने घुली हुई टिकियो के बारीक कणो को ज़बान से तालू मे रगड-रगड-कर और भी घुलाना शुरू किया। मुह मे कसैला लुआब बढने लगा। पाचू उन्हे घुलाता ही रहा। दोनो गालो मे फूलने की हद तक वह लार को घोंट-कर बढाता ही रहा—यहा तक कि उसके जबडे दर्द करने लगे। तब वह मजबूरन उसे पी गया।

कसैला ही सही, आज चार दिन के बाद पाचू की फीकी ज़बान को किसी तरह का स्वाद तो मिला था। इससे उसे एक तरह का सतोष हुआ।

पानी पीना चाहिए। वह उठा और बाहर आया।

मुह का वह कसैलापन अब धीरे-धीरे फीकेपन मे बदल चुका था। यह पाचू को अखरने लगा। उसकी भूख एकदम तेज हो गई। सिर की झनझनाहट बढ गई। स्कूल के पीछे ही पोखर थी। पाचू कदम बढाकर वहा पहुचा। दोनो हाथो की अजुली बाधकर उसने पानी पिया। पानी खाली पेट मे लगा। उसने फिर पिया, तीसरी बार, चौथी बार, पाचवी, छठी बार—सातवी बार उसने अजुली भरकर फिर छोड दी।

उसका पेट तन गया था। उसमे अब पानी पीने की ताब नही थी। लेकिन पानी से अभी मन न भरा था। उसने अपना मुह धोया, सिर पर छीटे मारे, कुल्ला किया, और धोती के छोर से मुह और हाथ पोछते हुए

उठ खड़ा हुआ। उसने जानबूझकर अपने मे एक ताज़गी महसूस करना शुरू किया और सोचना शुरू किया कि उसका पेट भरा हुआ है, वह अब मज़े मे है।

पेट भरा होने की कल्पना उसके विचारो को अपने परिवार की ओर खीच ले गई।

उन सबो ने भी पानी पी लिया होगा। वे सब भी मज़े मे होगे। बस, अब देर ही कितनी है। दिन के ढलते ही '

पाचू ने धूप से अन्दाज़ लगाया, ढाई बज रहे होगे। एक घटा और यही बैठना चाहिए, साढे तीन बजे चलना ठीक होगा। लेकिन रोज़ तो साढे चार-पाच तक जाता है। दयाल बाबू अपने मन मे सोचेंगे कि आज चावल लेना है, इसलिए जल्दी चला आया। ऊह, सोचेंगे तो सोच ले। कह दूगा कि कोई काम तो था नही, इसलिए सोचा, लाओ जल्दी ही पढा आऊ। और जब जल्दी ही जाना है तो अभी क्यो न चला जाए? नही, अभी जाना ठीक नही। तब तो साफ खुल जाएगा कि चावल के लिए इतनी जल्दी की गई है। मगर यह कोई झूठ बात थोडी है। हा, आबरू का सवाल ज़रूर है। आबरू चली गई तो लाख का आदमी खाक का।

पाचू के मन मे प्रश्न उठा—"तो क्या चावल मागने से आबरू नही गई? नही, इसमे आबरू का कोई सवाल नही उठता। तनख्वाह न ली, चावल ले लिया। लेकिन चावल तो मोनाई की दूकान से भी "

आठ दिन पहले जब दयाल ज़मीदार से उसने वेतन के रुपयो के बजाय चावल मागा था और दयाल ने उसे देना स्वीकार कर लिया था तभी से उसे आशा बध गई थी कि दयाल बाबू वेतन के रुपयो से चावल न तौलेंगे। वह मोनाई तो है नही, ज़मीदार है इतने बडे, और फिर उसे इतना मानते है। वह उनके लडके का गुरु है, उन्हे अखबार पढकर सुनाता है, साहबो के लिए उनकी चिट्ठिया अग्रेज़ी मे लिख देता है। इन सबका कभी एक पैसा आज तक उनने नही लिया। कोई किसी तरह से समझता है, कोई किसी तरह से। लेकिन आठ रुपये मे मन दो मन तो उठाकर देने से रहे।

अरे, ज्यादा से ज्यादा पाच सेर के दस सेर दे देंगे, बस ! ज्यादा भी दे सकते हैं। हा भाई, जमीदार जो ठहरे। भला राजा के घर मोतियो का काल ? वो चाहे तो उठाकर मन-दो मन दे दे। उनके लिए कौन बडी बात है ? खैर, इतना तो नही, अगर पन्द्रह सेर भी दे दिया तो ठाठ से महीना बीत जाएगा। आध सेर मे रोज घर-भर निबट लिया करेगा। : सही भर पेट, अरे न होने से तो काने मामा ही भले। फिर किया क्या जाए ? जमाना कैसा आ लगा है ! जब तक लडाई चलेगी ये अकाल नही जाने का। लडाई की वजह से ही तो यह अकाल है।

पाचू ने अखबार मे दूसरे प्रान्तो से यहा के लिए अनाज भेजे जाने की खबरें पढी थी। गाव-गाव मे यूनियन बोर्ड खोले जा रहे है जो मिट्टी के मोल चावल बेचेगे। यह सुनकर दयाल भी हसे थे, सोनाई भी हसा था और उन दोनो की हसी मे सोने के बगाल के मरघट हो जाने की सूचना छिपी थी, उनके साथ इतने दिनो के अपने सबध की वजह से पाचू यह भी समझता था। फिर भी, अगर उसे और उसके परिवार को दयाल जमीदार से रोज आध सेर चावल मिलता रहे तो वह अपनी सारी सहृदयता को बगाल के साथ ही मरने दे सकता है।

पाचू सोच रहा था—"आठ रुपये मे तो वह हर महीने पन्द्रह सेर दे से रहे। हा, अगर वह तनख्वाह बढा दे तो अलबत्ता गुजारा हो सकता है अच्छी बात है, तो आज मैं दयाल बाबू से तनख्वाह बढाने की बात करूगा मान जाएगे ? अरे, मै उनका कोई दूसरा काम कर दिया करूगा। चाकरी ही सही, किसी तरह मेरा घर तो पेट की ज्वाला मे जलने से बचे ! ह तो मैं उनकी सारी जमीदारी मे झाडू लगाया करू। जान है तो जहान है पेट भरे पर आदमी भी भली लगती है। हे भगवान, बा [illegible] दो। हे नाथ, मेरी सुन लो। किसी तरह दयाल बाबू मान जाए, बस [illegible] कुछ कर दो !"

प्रार्थना से हृदय गदगद हो उठा। पाचू उस वक्त तक जमीदार-भ दरवाजे के सामने पहुच चुका था। फटे हुए पोस्टर पर नजर गई। पाच

खट् से पलटकर मोनाई की दूकान की तरफ देखा—पुलिसमैन ? नही आ रहा ! पाचू एक निसास छोडकर कमरे मे दाखिल हुआ। और कमरे की तमाम चीज़ो से जवरन निगाह वचाकर वह कुर्सी पर बैठ गया।

वह अव सूनी डेस्को की वात नही सोचेगा, दीमको की भी नही। भाड मे जाए स्कूल, उसे अव करना ही क्या है ? वस, दयाल ज़मीदार के यहा उसे काम मिल जाए।

दराज़ के अन्दर रख देने के लिए उसने दोनो रजिस्टरो को उठाया। उनके नीचे उसके कागज़ विखरे हुए पडे थे। छ्टते ही उसकी नजर पडी—मा की लिखावट। ढाई वरस पहले जिस पत्र ने उसे आई० सी० एस० होने से रोक दिया था, उस पत्र के ऊपर का कुछ हिस्सा दूसरे कागज़ो मे दवा हुआ था। जहा से दिखाई देता था, पाचू उस पत्र को वही से पढने लगा—

" कल रात तुलसी के व्याह के लिए वनवाए हुए सारे गहने जुए मे हार आया। मेरे सिरहाने से कुजी निकालते समय वहू की नज़र पड गई थी। मैं छत पर खडी रामतनु की घरवाली से वातें कर रही थी। वहू जव तक कहने आए, वह अपना काम कर चुका था। तेरे वावा के कानो मे जव कोठरी और सदूक के ताले खुलने की खटर-पटर गई, तो 'वह कौन है, कौन है' कहके पुकारने लगे। तू तो जानता ही है, अपनी कोठरी मे बैठे-बैठे वे उसकी कैसी ताक वजाते रहते हैं। पर वे पुकारा करें, वन्दा वोला तक नही। और मैं जव घवराकर नीचे आई तो वाहर के दरवाज़े से निकल रहा था। कितना पुकारा, 'शिवू ! शिवू !' पर शिवू किसकी सुनता है ? जव मा थी, तव थी। अव तो वह अपने मन का हो गया है भैया ! क्या करूँ, जो लिखा के लाई हू, वह भोगना ही पडेगा। तेरे वावा आज यो अधे हो के पडे हैं। शिवू के रूप मे नारायण मेरी यो परीक्षा ले रहे हैं। नही जानती और आगे क्या-क्या देखना वदा है। शिवू आज ऐसा न उठता तो भगवान के चरण पकडकर अपनी मौत मागती। मेरे ऐसा सोहाग किस स्त्री का है ? जिसके दो-दो जवान वेटे हो, उस मा को चिन्ता रहे ? पर

बेटा, ऐसे तप मैंने किए कहाँ थे ? मेरी हालत तो कंजूस के धन-सी है जो ईश्वर की दया से सब कुछ होते सोते भी उसका सुख नहीं भोग सकता।

"मैं अब शिवू की या तेरी बात नहीं सोचती बेटा ! तुम लोग तो, नारायण कृपा करे, अपने हाथ-पैर के हो गए हो। शिवू बहू के गहने पहले भी बेच चुका है। दो बार तो उसे मारा भी। बहू ने कल तक मुझसे ये सब बातें छिपाकर रखीं। जुआ खेलने लगा है, यह बात तो बहू ने एक बार पहले भी कही थी। मना करने पर कहता था, तकदीर का व्यापार है, जो लगाऊँगा, दूना-दस गुना मिलेगा। बार-बार न सही तो बस इकट्ठा, एक ही दांव में। और भी बहुत-सी बातें बनाता रहा। जोर-जुलुम भी शुरू हुए। बहू से लड़ता था, यह तो मैंने भी कई बार सुना। पर इतना नहीं समझी थी। शिवू की यही दशा रही तो घर का भगवान ही मालिक है। और मैं तो बेटा, जब तक जिऊँगी, चिन्ता करती रहूँगी—बहू की, तुलसी के ब्याह की। कनक भी अब दस बरस की हो गई है। इसके अलावा अब तो दीनू और परेश की भी चिन्ता है। वे दुधमुँहे बच्चे क्या समझें कि उनका बाप जुआरी है और जुआरियों के बेटे सदा पराया मुँह ही जोहते हैं।

"कल की घटना पर तेरे बाबा से भी बातें हुईं। कहने लगे, जब तक आँखें रहीं, तब तक दुनिया का न देख पाया। और अब अंधा होने पर, जिस दुनिया का भयानक रूप मैं अपनी आँखों से देख चुका था, उसका अंत कैसा भयानक होगा, यह साफ-साफ देख रहा हूँ।

"मुझसे कहने लगे—शिवू, तुम्हारे ही लाड-प्यार के कारण हाथ से निकल गया। बच्चे को एक उम्र से ज्यादा अगर बच्चे की तरह ही रखोगी तो उसकी गैर-जिम्मेदारियों का सारा दोष भी तुम्हारे ऊपर ही आएगा। अगर यह जानती होती बेटा, कि माँ का प्यार आशीर्वाद न होकर कभी-कभी शाप बनकर बच्चों को लग जाता है तो मैं उसे [illegible] बनाने की कोशिश करती। पाँच बच्चों को खोकर माता की गोद में दोबारा शिवू का मुँह देखा था। इसीलिए उसे गोद से उतारते भी डरती थी। तू इतना पढ़-लिख गया है, शायद माँ की यह बात समझ सकेगा। पर अब तू और कितना

पटेगा पाचू ? तू अपने मन मे कहेगा, मा मेरी तरक्की होते भी नही देख मकती। पर बेटा, एक तेरी ही सोचती रहू तो ये तुलसी, कनक कहा जाएगी ? दीनू, परेश का क्या होगा ? तुलसी अब सोलह बरस की हो गई है। इसकी पहाड-सी उमर कब तक दुनिया की आखो से छिपाती रहूगी। मात बरस मे तार-तार जोडकर इतने गहने बने थे सो भी भगवान ने छीन लिए। कैसे बेडा पार लगेगा ?

"तूने लिखा है, छुट्टियो मे नही आऊगा, विलायत की पढाई पढनी है। सो ठीक है, पर एक बात मुझे बता दे। तू तो विलायत चला जाएगा, लेकिन तेरी मा कहा जाएगी ? किसे अपना दुखडा सुनाएगी ?

"जो मन की थी सो तेरे आगे कह चुकी। आगे तू समझदार है। नही तो फिर भगवान तो हैं ही बेटा! तू जहा भी रहे सुखी रहे। मेरे जी से तो सदा यही असीस निकलती है।"

पत्र पूरा होते ही एक ठडी सास पाचू के मुह मे निकल गई। उसने अपनी पीठ कुरसी से टिका दी। बीते हुए दिन एक-एक करके उसके मन की आखो के सामने आने लगे। लाख अनिच्छा होने पर भी उसे अपनी मा के इस पत्र के सामने झुकना पडा था। और वह एक बार घर आया था, यह सोचने के लिए कि अब क्या किया जाए।

दादा उससे चिढते हैं। पाचू जानता है, अपना निरक्षर रह जाना उन्हे खलता है। जिसका छोटा भाई इतना तेज है, उसे उससे भी बढकर कुछ होना चाहिए, इसी एक धुन ने दादा को जुआरी बनाया है। बाबा जो कहते हैं कि मा के लाड-प्यार ने ही दादा को हठी, स्वार्थी और निकम्मा बना दिया, सो कुछ झूठ बात नही है। मा को अभी भी दादा का बहुत पक्षपात है।

मा का पत्र पाकर पाचू जब गाव आया, शिबू दिन मे दस बार उस-पर अपने बडप्पन की शान झाडने से नही चूकता था।

घर आकर पाचू अभी यह सोच ही रहा था कि जीवन निबाहने के लिए उसे कौन-सा काम करना चाहिए, कि एक दिन गाव का हीरू बाग्दी अपने

आठ बरस के लडके गणेश के साथ आकर उससे कहने लगा—"एकटु क्षमा करबेन मेज ठाकुर। आपको देखकर एक बात मेरे मन मे ये आई, कि हमारी तो सात पुरखो से आप लोगो के चरनो मे कट गई। बाकी इन लडको की न निभेगी। ये लोग तो अभी से ही गाधी बाबा का झण्डा उठाते है। बडे होकर मिट्टी खराब हो जाएगी इनकी। उससे, जो ये गनेसा चार अच्छर यस-नो के सीख लेगा आपकी दया से, तो सहर मे कही नौकरी पा जाएगा। और मेरा बुढापा भी आपके चरनो की दया से बन जाएगा।"

पाचू को उसी दिन यह मालूम हुआ कि गवई-गाव के डोम-बाग्दियो मे भी अब इतनी समझ आ गई है। यह समझते हुए भी पाचू के सस्कारी मन को डोम-बाग्दियो का अग्रेज़ी शिक्षक बनने मे सकोच हुआ। वह उसे मना करने जा ही रहा था कि पास खडे हुए बूढे रामलाल चक्रवर्ती, जो उधर से जाते हुए हीरू-पाचू की बाते सुनने के लिए खडे हो गए थे, अपने सम्पूर्ण ब्रह्मतेज को आखो मे दरशाकर बोल उठे—"छोट जातेर मुखे आगुन! शालार व्याटा, डोम-बाग्दी अब ऊच जाति की बराबरी करने चले है?"

दूसरे के मुह से, विशेषकर एक ऊची जाति वाले के मुह से छोटी जाति वालो के लिए गालिया सुनकर शहर की राजनीतिक और सामाजिक हलचलो मे प्रभावित पाचू की साम्यवादिता चेतन हो गई। उसका हृदय ऊची जाति वालो के प्रति विद्रोह से भर गया। उसकी निगाह गणेश के चेहरे पर जा पडी। भोला-सा चेहरा, आशा-भरी दृष्टि से उसकी ओर देख रहा था। रामदुलाल बूढो के व्यग्य की प्रतिक्रिया-स्वरूप सोच लगा, गणेश को न पढाकर वह सरस्वती का अपमान करेगा। और उसने रामदुलाल के देखते ही हीरू को आश्वासन दिया कि जब तक वह गाव मे है, गणेश उससे पढने आ सकता है।

गाव वाले कितने नाराज हुए थे! घर उसके दर मे ... माने भी पहले उसे मना किया। दादा ने तो कहनी न कहनी सभी सुना डाली।

सारा गाव उसकी निन्दा करने लगा। और ज्यो-ज्यो गाव का विद्रोह बढ़ता गया, पाचू का हठ भी जोर पकडता गया—"सबको विद्या पढने का सामान अधिकार है।"

पाचू के जीवन मे नया रस आ गया। केवल अपने उत्साह के बल ही वह अपनी ज़िद पर अड गया था। और उसी जोश मे एक दिन उसने गाव-भर के 'छोटे लोगों' के लडको को एकत्रित कर पेड के नीचे बैठकर पढाना शुरू कर दिया।

वह आया था घर के लिए कुछ सहारा करने, कहा इस मुसीबत को गले डाल लिया? लेकिन अब तो बात पर बात अड गई थी। उसने निश्चय किया कि वह स्कूल खोलेगा और धीरे-धीरे आगे चलकर स्कूल को ही अपनी आमदनी का ज़रिया बनाएगा।

जब सारा गाव स्कूल के खिलाफ, पाचू के खिलाफ, तब कानाई मिस्त्री ही बढ़कर उससे हाथ मिलाने आया था—"शहर जाके स्कूल के लिए मदद मागो। यहा मैं सभाल लूगा। बाकी एक बार ऐसा स्कूल बनाओ मास्टर, कि लाट साहब को भी यहा आना पडे।"

कानाई की शुभकामना फली। शहर जाकर प्रिंसिपल जॉर्डन के अदम्य उत्साह और सहयोग के कारण अनेक धनवान और सम्मानित नागरिको से उसने अपने स्कूल के लिए सहायता प्राप्त की। उन रुपयो से जब वह किताबे, स्लेट, पेन्सिल आदि लेकर गाव आया तब लडके कितने खुश हुए थे! और एक दिन जब अमेरिकन मिशनरी जॉर्डन अपने कुछ विलायती और देशी मित्रो के साथ उसका स्कूल देखने के लिए आए थे, तब गाव-वालो पर उसका कितना प्रभाव पडा था।

प्रिंसिपल जॉर्डन ने उनके स्कूल के लिए पक्की इमारत बनवा देने का वचन दिया। गवर्नमेंट कॉण्ट्रैक्टर राय भुवन मोहन सरकार तथा उनके द्वारा आसपास के बडे-बडे ज़मीदारो का सहारा पाकर स्कूल की इमारत देखते-देखते खडी हो गई। कलक्टर आए, बडे-बडे लोग आए, जल्सा हुआ, लड्डो की मिठाइया बाटी गईं। दयाल ज़मीदार भी अब उनकी पीठ पर

हाथ रखने लगे, उसे अपने लड़के का शिक्षक नियुक्त किया। अपने पिता की मृत्यु के बाद रामदुलाल चक्रवर्ती का लड़का गोविन्द भी किसी गाव-वाले साले की परवाह न कर, शुभ काम मे हाथ बटाने पाचू के स्कूल मे मास्टर हो गया।

गोविन्द मास्टर के आने से गाव मे खलबली-सी मच गई। रामदुलाल शुरू मे पाचू के स्कूल के सबसे बड़े विरोधी थे। जब उन्हींका लड़का नीच जाति को पढाने लगा तो चार उगलिया गोविन्द पर उठी। गोविन्द ने अपने कार्य का समर्थन करने के लिए ब्रह्मास्त्र खोज निकाला—"खास कलेक्टर साहब ने पाचू बाबू से यह स्कूल खुलवाया है। वह सबको राज-भाषा सिखाना चाहते हैं। कल यही डोम-बाग्दियो के लड़के अग्रेजी पढकर हमारे ऊपर राज करेंगे और कलेक्टर साहब के हुकुम से बामन-कायथो से मैला उठवाएगे—देख लेना। इतने बड़े-बड़े आदमी एक इशारे पर दौडे चले आए। हमारे पाचू बाबू क्या कोई मामूली आदमी है? कलेक्टर साहब के बड़े जिगरी दोस्त हैं। जो उनके स्कूल के खिलाफ बोलेगा, उसीको जेल हो जाएगी।"

गोविन्द मास्टर की अतिशयोक्ति मे थोड़ी-बहुत गुजाइश रखते हुए भी गाव वालो को यह मानना पड़ा कि पाचू मामूली लड़का नही है। उसके स्कूल के विरोधी को जेल न सही, जुर्माना अवश्य हो सकता है। लोग उसके प्रभाव के कारण अब उसका आदर भी करने लगे। पर बामन-कायथो की नाक न कटे, इसलिए सधि के प्रस्ताव मे एक शर्त यह रखी गई कि स्कूल मे नीच जाति के लड़को से अगर ऊचो को अलग बैठाने की राजी हो तो सब जने अपने लड़को को पढाएगे। प्रस्ताव पाचू की मा की मार्फत आया, और मा के विशेष आग्रह पर पाचू को ऐसी व्यवस्था करनी पड़ी।

पाचू को आज भी याद है, अपनी इतनी बड़ी सफलता पर बच्चा की तरह उल्लसित हो गणेश की पीठ थपथपाते हुए उसने कहा था—"गणेश अगर तू न आया होता तो गाव मे आज यह स्कूल भी न होता!"

बालक गणेश का भोला-सा मुह उस समय आत्म-गौरव और प्रसन्नता से चमक उठा था। आज भी पाचू की आखो के सामने वही चेहरा फिर रहा है।

"आज गणेश नही रहा, यह स्कूल भी नही रहा।"

पाचू की इच्छा हुई कि वह फूट-फुटकर रोए। गणेश और स्कूल दोनो, शरीर और प्राण की तरह एक थे। एक के न रहने पर दूसरे का न रहना भी ठीक उसी तरह स्वाभाविक था। गणेश को फिर से लाकर अपने स्कूल को पुनर्जीवित करने की असमर्थता को, आन्तरिक विद्रोह और पीडा के साथ अनुभव करता पाचू विकल हो उठा।

छोटे बच्चे जिस तरह किसी चीज को पाने के लिए पैर रगड-रगड-कर मचलते हैं, पाचू का मन उस समय ठीक उसी तरह गणेश को पाने के लिए मचल रहा। उसकी कल्पना कमरे के ज़र्रे-ज़र्रे से गणेश को खोज निकालने लगी। वह महसूस करने लगा, गणेश दरवाज़े से अन्दर आ रहा है। गणेश डेस्क पर है—गणेश सब डेस्को पर है। वह चार्के बटोर रहा है। ग्लोब के पास—हा, ग्लोब के पास गणेश ही खडा है। उसने ग्लोब घुमाया। सचमुच ग्लोब घूम रहा है? नकशे के अन्दर से भी गणेश निकलता हुआ दिखाई दिया। उसे एकसाथ कई जगह से गणेश अपने पास आता हुआ महसूस हुआ।

"सर।"

पाचू ने चौंककर अपने पीछे देखा। कुछ भी नही। "लेकिन आवाज़ गणेश की ही थी—साफ गणेश की। तब क्या?"

सहसा उसने खिलखिलाकर हसने की आवाज़ महसूस की। पाचू का दिल धक्-धक् करने लगा। साथ ही साथ दिमाग के अन्दर एकदम सुन्न पड जाने का अनुभव हुआ। पाचू का सिर अपने-आप ही झोका खा गया।

सारी शक्ति के साथ कुर्सी के पीछे लटकते हुए दोनो सुन्न हाथो को उसने अपने आगे मेज़ पर लाकर पटक दिया, फिर हथेलियो पर अपने

शरीर का सारा भार टिकाकर प्राणपण से उसने अपने शरीर को उठाने की कोशिश की—और वह उठ खड़ा हुआ। वह बदहवास होकर कमरे से बाहर झपटकर निकला। बरामदे में आकर कमरे की तरफ देखते हुए उसने महसूस किया कि उसका दिल अभी भी धड़क रहा है, उसकी सांस तेज़ हो रही है। तो क्या सचमुच

पाचू की चेतना वापस लौट आई। सभलकर उसने अपने को फटकारा—"फिर बहके! नहीं, नहीं मगर वो आवाजें और वो ?"

पाचू की सांस अपनी असली गति से चलने लगी, दिल की धड़कन भी स्वाभाविक हुई—"सब मेरी कल्पना थी, और कुछ नहीं। सब कुछ भी सच कुछ भी नहीं था।"

एक इच्छा हुई, अन्दर चलकर बैठें। पर

उसने एकाएक घूमकर धूप को देखा। साढ़े तीन बज रहे होंगे, बल्कि अब तो पौने चार होंगे। चलना चाहिए।

लेकिन ये रजिस्टर, कागज़—अजी, पड़ा रहने दो इन्हें। कौन आता है यहां ?

ताला दो कदम अन्दर जाकर डेस्क पर रखा था।

उठाता हूं—हां, उठा लाऊंगा। कोई बात नहीं है।

कदम तोलते हुए पाचू का साहस स्वयं उसे भी चकित कर गया। उसने ताला अन्दर से उठा लाया, और दोनों हाथों से खींचकर कमरे के दरवाजे बन्द कर दिए।

दरवाजे की कुण्डी लगाते हुए पाचू जरा मुस्करा गया—"बेकार में डर गया। डरा नहीं जी अच्छा होगा, दयाल बाबू के यहां जाना है। जरा से उठ आया, नहीं तो ख्यालों में ही बैठा रह जाता।

ताला लगाते-लगाते वह सोचने लगा—"क्या सचमुच दयाल बाबू ने मुझे आज चावल देने का वायदा किया था—या यह भी मेरी कल्पना ?"

'नहीं, बिलकुल सच है।" तत्क्षण इस विचार ने उसके मस्तिष्क में आनन्दपूर्वक प्रवेश किया और आत्मा की तृष्णा के साथ [illegible]

को विश्वास दिलाया कि दयाल ने उसे चावल देने का वचन दिया था।

फिर एकदम से पाचू को हसी आ गई।

२

बडी बहू ! चलो, चलो। वखत न गवाओ। चूल्हा सजोके तैयार रखो मा ! और पानी की पतीली गरम होने को रख दो। पाचू के आते ही चावल उसमे डाल दिया जाएगा—बस, छिन-भर मे भात रधकर तैयार !”

पानी पीकर रीता गिलास हाथ मे लिए पार्वती मा, एक सुर मे बोलती हुई, गिलास माजने मे अपनी सारी फुर्ती दिखाने लगी।

शिबू की बहू, दालान मे बैठी, पास ही चटाई पर पडी हुई चुन्नी को थपकी देकर सुला रही थी। अभी-अभी उसकी आख लगी है, बडी मुश्किल से सोई है।

पास ही कनक भी सो रही थी। शिबू की बहू चुन्नी को धीरे-धीरे थपथपाती ही रही। सास की बात पर मुस्कराते हुए उसने सिर उठाया और धीरे से बोली—“लेकिन, ठाकुर-पो (देवर) को घडी मे तो अभी बडा सवेरा ही दिखाई देता है न !”

बात कहते हुए उसके मुह का रुख, दीवाल से टिककर बैठी, दोनो घुटनो की 'वर्किंग टेबिल' सी बनाकर, तकिये के गिलाफ पर हरे-लाल डोरो से 'गुड लक' काढने में लीन, पाचू की पत्नी मगला की तरफ ही था।

आवाज के अदाज पर मगला का चेहरा उठा। चेहरे की विशेषता के रूप मे मगला की बडी-बडी सपनो-भरी आखो की पुतलिया चमककर शिबू की बहू की आखो मे समा गई, और दो जोडी होठो पर शैतान मुस्कराहट खिलवाड कर गई।

बात खत्म करने के बाद उसने जरा आहिस्ता से एक सर्द आह की सलामी मंगला को सुनाते हुए छोड़ दी। बनावटी आह भरने से उसके भूखे शान्त पेट में एक गति-सी मालूम हुई। यह उसके पेट में ठंडी-सी, भली मालूम हुई।

सपनों-भरी आंखों की पुतलियों में गुस्से का बहाना बरसाकर फिर अपने काम में लगी हुई मंगला चट-से बोल उठी—"अरे अभी तो जमींदार की घड़ी में दोपहर और शाम भी बीतने को पड़ी है। और फिर जमींदार की घड़ी ठहरी—उसमें कब जाने दोपहर हो और कब शाम! भई बकुलफूल, तुम तो भूख के मारे अभी से ही बच्ची बनी जा रही हो।"

"तुम चाहे जैसे समझो। आज तो तेरे उनकी बाट में मैं भी तेरी तरह ही मन मारे बैठी हूं सखी! हाय, तुझे रोज इतनी बाट जोहनी पड़ती है।"

बड़ी बहू ने फिर एक लम्बी सर्द आह खींचकर मंगला की तरफ फेंकी, लेकिन इस बार ठंडक पाकर पेट कुड़मुड़ाने लगा।

मजाक करते-करते ही बड़ी बहू अनमनी हो गई। पेट की कुड़मुड़ाहट से बेचैन हो, उसे भूलने के लिए वह खड़ी हो गई। जिठानी को उठते देख मंगला भी काम में हाथ बटाने के खयाल से अपना सारा सामान बटोर-कर, ऊपर अपने कमरे में रख आने के लिए उठी।

सूरज की रोशनी की एक लकीर दालान के आगे की टूटी मेहराब से गुजरकर दालान के अन्दर की दीवाल पर पड़ रही थी। मंगला के खड़ी होने पर रोशनी उसकी गर्दन, होंठ, नाक और सिर के कुछ हिस्से पर पड़ने लगी। उस रोशनी में नाक की सोने की कील में जड़ा हुआ लाल नग दमक उठा। आज चार दिन से, जब से इस घर में अनाज आया है पार्वती मां ने बचे-खुचे एक-एक, दो-दो गहने सब लड़की-बहुओं को पहना दिए हैं। रसोईघर में भी जरूरत से ज्यादा बर्तन सजाए हैं। औरतें जरूरत से ज्यादा काम-काज में व्यस्त, सबकी शान ही आन की ओर से, मन में पूर्ण निश्चिन्तावस्था का अभिनय करने के लिए [illegible]

कमरे मे ले गया। उसके बाद उसने अपनी डायरी मे लिखा—"आबरू के असत्य से दूर की सलाम रखनेवाला सच्चा जवामर्द अगर कोई इस देश मे मिल सकता है तो वह कोई छोटी उम्र का बच्चा ही होगा, जो भूख लगने की इन्सानी कमजोरी के लिए जरा भी लज्जित नहीं।"

वास की छोटी-सी मेज पर मगला के हाथ का कढ़ा हुआ मेजपोश बिछा हुआ था। बीच मे शीशे का छोटा-सा कलमदान रखा था, जिसकी दोनो दवातो की स्याही सूख गई थी।

बाईं तरफ एक ईंट के दो टुकडे कर, उसपर पन्नी चढ़ाकर, ऊपर से मगला के बनाए मोम के रगीन मोतियो की झालरे पड़ी हुई थी। इस तरह दोनो ईंटो के सहारे से उनके बीच मे आठ-दस किताबे सजाकर रखी गई थी। दाहिनी ओर पीतल की ॐकार बनी हुई छोटी सी धूपदानी और मेज के ऊपर दीवाल पर भारतीय चाय का एक कैलेण्डर टगा था। दीवाल के दोनो तरफ गाव की ओर खुलती हुई दो खिड़किया थी। दीवाल से सटी हुई बड़ी चारपाई, उसपर करीने से बिस्तर लगा हुआ। चारपाई से लगी हुई दीवाल के ठीक बीचोबीच एक राधाकृष्ण की तस्वीर, अगल-बगल सुभाष बोस और जवाहरलाल की तस्वीरे। एक तरफ तीन सदूक एक-दूसरे पर चुने हुए रखे थे, उसके ऊपर के आले मे रद्दी अखबार बिछाकर एक शीशा, कघा, तेल, आवला की शीशिया और बनारस की बनी हुई लकड़ी की सिन्दूर की डिबिया रखी हुई थी।

मगला ने मेज पर, धूपदानी के पास, अपने कातने-बुनने का सामान रख दिया।

था—"खुद मोनाई ने मुझसे कहा कि सरकार जबरदस्ती फौज के लिए उससे सारा अनाज खरीद ले जाती है। अरे "

मगला ने खिडकी वन्द कर दी और नीचे चली गई।

वह सोच रही थी—"चावल लेकर आते होगे।"

ज़ीने के नीचे पैर रखा ही था कि वाहर के दरवाज़े से तुलसी और दीनू-परेश अन्दर आते दिखाई दिए।

मगला को देखते ही वच्चे एकसाथ ही वोल उठे—"काकी मा, हमने छन्देच काये, दो-दो!"

सारे घर का ध्यान वच्चो की तरफ चला गया।

पार्वती मा और वडी वहू चौके मे वैठी थी। कनक तव तक जाग चुकी थी। हथेली पर सिर टिकाकर लेटी हुई, चटाई की सीक तोडकर, दातो से चवा रहा थी, उठ वैठी। पार्वती मा ने पूछा—"सदेश कहा पाए, दीनू ?"

वच्चो से पहले तुलसी वोल उठी—"काकी नम्वर आठ के भाई आए है कलकत्ते से।"

वात काटकर पार्वती मा वीच ही मे घुडक पडी—"फिर कहा काकी न० आठ! तुझे भी पाचू की आदत पड गई है? रामतनु की घरवाली सुनेगी तो क्या कहेगी? खवरदार, जो आज के पीछे फिर कभी कहा तो!"

तुलसी चुप हो गई। वच्चे सहमकर वही के वही खडे रह गए।

एक सेकण्ड चुप रहकर पार्वती मा फिर स्निग्ध स्वर मे वोलीं—"गोपाल का वाप सदेश लाया होगा। कव आया वो ?"

"अभी दिन मे ही तो आए हैं। गोपाल को ले जाएगे।" तुलसी ने सिर झुकाकर कहा।

परेश दादी के पास जाकर वोला—"ठाकुम्मा, छन्देच काया। मीथा-मीथा।"

दीनू से भी दूर न रहा गया, पार्वती मा के पास जाकर कहने लगा—

कमरे मे ले गया। उसके बाद उसने अपनी डायरी मे लिखा —"आबरू के असत्य से दूर की सलाम रखनेवाला सच्चा जवामर्द अगर कोई इस देश मे मिल सकता है तो वह कोई छोटी उम्र का बच्चा ही होगा, जो भूख लगने की इन्सानी कमजोरी के लिए ज़रा भी लज्जित नही।"

वास की छोटी-सी मेज़ पर मगला के हाथ का कढा हुआ मेज़पोश बिछा हुआ था। बीच मे शीशे का छोटा-सा कलमदान रखा था, जिसकी दोनो दवातो की स्याही सूख गई थी।

बाई तरफ एक ईंट के दो टुकडे कर, उसपर पन्नी चटाकर, ऊपर मे मगला के बनाए मोम के रगीन मोतियो की झालरे पडी हुई थी। इस तरह दोनो ईंटो के सहारे से उनके बीच मे आठ-दस किताबे सजाकर रखी गई थी। दाहिनी ओर पीतल की ॐकार बनी हुई छोटी-सी धूपदानी और मेज़ के ऊपर दीवाल पर भारतीय चाय का एक कैलेण्डर टगा था। दीवाल के दोनो तरफ गाव की ओर खुलती हुई दो खिडकिया थी। दीवाल से सटी हुई बडी चारपाई, उसपर करीने से बिस्तर लगा हुआ। चारपाई से लगी हुई दीवाल के ठीक बीचोबीच एक राधाकृष्ण की तस्वीर, अगल-बगल सुभाष बोस और जवाहरलाल की तस्वीरे। एक तरफ तीन सदूक एक-दूसरे पर चुने हुए रखे थे, उसके ऊपर के आले मे रद्दी अखबार बिछाकर एक शीशा, कघा, तेल, आलता की शीशिया और बनारस की बनी हुई लकडी की सिन्दूर की डिबिया रखी हुई थी।

मगला ने मेज़ पर, धूपदानी के पास, अपने काढने-बुनने का सामान रख दिया।

डायरी खुली हुई सामने ही रखी थी। बीच मे पेसिल रखी हुई थी। मगला ने पाचू का लिखा एक बार पढा। पेसिल उठाकर कलमदान मे रख दी, और डायरी बन्द कर किताबो के पास। फिर शीशे मे एक बार मुह देखा, कघे से बालो को ज़रा-सा 'टच' दिया और नीचे जाने लगी। दरवाज़े के इधर से ही फिर लौटी, खिडकी बन्द करने के लिए। बाहर देखा, पाच-छ आदमियो के बीच मे बैठा हुआ शिबू ज़ोर-ज़ोर से कह रहा

था—"खुद मोनाई ने मुझसे कहा कि सरकार जबर्दस्ती फौज के लिए उससे सारा अनाज खरीद ले जाती है। अरे "

मंगला ने खिड़की बन्द कर दी और नीचे चली गई।

वह सोच रही थी—"चावल लेकर आते होंगे।"

जीने के नीचे पहुंचा ही था कि बाहर के दरवाजे से तुलसी और दीनू-परेश अन्दर आते दिखाई दिए।

मंगला को देखते ही बच्चे एकसाथ ही बोल उठे—"काकी मा, हमने छन्देच खाये, दो-दो।"

सारे घर का ध्यान बच्चों की तरफ चला गया।

पार्वती मा और बडी बहू चौके मे बैठी थीं। कनक तब तक जाग चुकी थी। हथेली पर सिर टिकाकर लेटी हुई, चटाई की सींक तोडकर, दातों से चबा रही थी, उठ बैठी। पार्वती मा ने पूछा—"सदेश कहा पाए, दीनू ?"

बच्चों से पहले तुलसी बोल उठी—"काकी नम्बर आठ के भाई आए हैं कलकत्ते से।"

बात काटकर पार्वती मा बीच ही मे भड़क पड़ी—"फिर कहा काकी न० आठ! तुझे भी पाचू की आदत पड़ गई है? रामतनु की घरवाली सुनेगी तो क्या कहेगी? खबरदार, जो आज के पीछे फिर कभी कहा तो!"

तुलसी चुप हो गई। बच्चे सहमकर वहीं के वहीं खडे रह गए।

एक सेकण्ड चुप रहकर पार्वती मा फिर स्निग्ध स्वर मे बोलीं—"गोपाल का बाप सदेश लाया होगा। कब आया वो ?"

"अभी दिन मे ही तो आए हैं। गोपाल को ले जाएगे।" तुलसी ने सिर झुकाकर कहा।

परेश दादी के पास जाकर बोला—"थाकुम्मा, छन्देच खाया। मीथा-मीथा।"

दीनू से भी दूर न रहा गया, पार्वती मा के पास जाकर कहने लगा—

"ठाकुम्मा, हमको तो मामा ने एक-एक दिया, और बुआ को तो बौत ने खिलाए।"

तुलसी एक सदेश छिपाकर लाई थी। उसे चुपके से कनक को देकर वह उसके पास ही चटाई पर बैठ गई थी। तड से डपट पडी—"झूठ बोलता है। दो दिए थे मुझको। मैं तो बहुत मना करती रही मा।"

दीनू भी कम नही, लड पडा—"नई, दो तो अपने हात से तुमे खिलाए ते मामा ने। हमने गिना ता—एक, दो—आ, जब काकी आई थी कमरे मे, आ।"

"और तुम लोगो को भी तो दो-दो दिए थे उन्होंने।"

"वो तो हमे बाद मे काकी न० आ ..."

"फिर कहा, आ तो सही।" पार्वती मा दीनू पर घुडक पडी।

दीनू चट से भागकर चाची के पैरो से चिपक गया। मगला तुलसी-मडप के आस-पास बुहार रही थी। दीनू के अचानक पैरो मे आ लिपटने से वह ज़रा लडखडाई, फिर सभल गई।

"अरे-अरे ..."

"काकी मा," दीनू ने उससे धीरे-धीरे कहना शुरू किया—"काकी मा सच्ची! अमको तो एक-एक सन्देश दिया मामा ने, और बुआ को तो बौत-से सन्देश बी दिए और बौत-सा प्यार बी किया। अमको तो प्यार बी नई किया मामा ने।"

दीनू रूठी हुई आवाज़ मे धीरे-धीरे कह रहा था। बीच-बीच मे अपनी दादी की तरफ भी देखता जाता था, गोया इशारा हो—"तुमने हमारी शिकायत नही सुनी तो हम अब सुनाने के भी नही, हम तो अपनी चाची को सुना रहे है, चुपके-चुपके।"

गुस्से को बेबसी से दबाए, सकपकाई हुई नज़रो से, तुलसी दीनू की तरफ ही देख रही थी। मगला ने यह बात सुनकर कटी नज़र से तुलसी की तरफ देखा। आखें मिलते ही उसने आखे चुरा ली और झुककर चटाई की सीक तोडने लगी। उसे इस समय अपने ऊपर बडा गुस्सा आ रहा था।

वह दीनू-परेश को काकी नं० आठ के यहा अपने साथ ले ही क्यो गई। पर उसे मालूम थोडे ही था कि मामा आए है, और मामा उसके साथ ऐसा बर्ताव करने लगेगे।

मामा के बर्ताव का ध्यान आते ही तुलसी ने अपनी रग-रग मे गुदगुदी से भरी हुई सिहरन महसूस की। झुका हुआ चेहरा अपनी तमतमाहट को रोकने के लिए दोनो घुटनो के बीच और भी गड गया। बाल की एक लट खिसककर चेहरे पर आ गिरी। तुलसी अपने सारे बदन को और भी सिकोडकर बैठ गई। मामा के रूप मे एक पुरुष ने आज उसकी कल्पना की दुनिया मे पहली बार कदम रखा था। घर मे, पास-पडोस मे, बराबर की ब्याही हुई लडकियो मे, बकिम-शरत् के उपन्यासो मे, और अपनी उम्र के तकाजे ने, सारी समझी-समझाई हुई बातो को वह जिस तरह आप-बीती बनाने के लिए पिछले दो-ढाई बरसो से दिल ही दिल मे तडपा करती थी, मामा से उन्ही बातो का कुछ-कुछ आभास उसने पाया था। फिर दीनू-परेश गडबड कर उठे। काकी नं० आठ आ गई। उन्हे देखते ही वह कैसी धक्-से रह गई थी। फिर काकी की मुस्कराहट और मतलब-भरी निगाहो से उसकी और मामा की तरफ देखना, फिर दीनू-परेश को बहलाकर बाहर ले जाना। उसके बाद मामा की रसीली बातें, उनकी वह प्यार-भरी छेड-छाड। वह लाज के मारे पसीना-पसीना हो गई। बाहो से निकलकर भागी। मामा की बेकरारी, कमरे के दरवाजे पर चट से उसका हाथ पकडकर मामा ने कहा—"शाम को आना। ज़रूर-ज़रूर! उमा दीदी कुछ न कहेगी—किसीसे कुछ न कहेंगी ।"

"शाम को आना! शाम को आना!"—गर्दन उठाने की ताब नही, वह देखे कैसे कि अधेरा हो रहा है, शाम हो रही है ।

तभी कनक ने उसका हाथ झटककर पूछा—"मामा ने तुम्हे कितने सन्देश दिए थे दीदी ?"

"कह तो दिया कि दो—एक तुझे ठुसा तो दिया।"

तुलसी तटपकर उठ खडी हुई लेकिन उसकी समझ मे ही नही आ रहा

था कि वह घर मे और कहा जाकर बैठे। उसके लिए कही एकान्त नहीं। घर मे हर एक का चेहरा उसे दुश्मन जैसा नजर आ रहा था। उसका सारा वदन अकड रहा था। खडे रहने की ताव न थी। वह कहीं जाकर चुपचाप लेट जाना चाहती थी, अपने मे खो जाना चाहती थी।

"अरे सुनती हो, एक गिलास पानी तो दे जाना!" वावा की कोठरी से आवाज़ आई।

आवाज़ के कानो मे पडते ही तुलसी के खयालो ने करवट ली। "शाम को आना।"—वह जानती है, जव वावा पानी मागते हैं तो मा को जाना पडता है। तुलसी ने अपने मे स्फूर्ति का अनुभव किया। आखें मा की ओर उठ गईं।

पार्वती मा मन ही मन मे कटी जा रही थी। झुझलाहट पेशानी की नसो मे तनी जा रही थी। लटके हुए गालो पर शर्म का वोझ पड रहा था जिसे उठाना अव उनकी उम्र के लिए दूभर था। काश कि कान वहरे हो जाते। उनकी आखें क्या फूटी हैं कि दिन और रात का लिहाज़ भी न रहा!

"अरे सुना नही, तुलसी! अपनी मा से कह, एक गिलास पानी दे जाए।"—फिर आवाज़ आई।

दालान मे खडी हुई तुलसी ने फौरन ही वडे उत्साह के साथ कहा—"मा, वावा पानी माग रहे है।"

पार्वती मा की आत्मा पर तमाचा पडा। वह तिलमिला उठी। जवान-जवान वहुए, वेटिया—तीन-तीन पोती-पोतो की दादी के पद की प्रतिष्ठा को आघात लगा। गुस्सा उतारा तुलसी पर—"तो तू्स ऐसी खडी-खडी सुन क्या रही है? दे क्यो नही आती एक गिलास पानी उन्हे? अन्धे क्या हो गए है, मेरी जान पर सकट आ गया है। दिन-रात हाय-हाय, हाय-हाय। पानी चाहिए, औ' पान चाहिए, औ' पत्ता चाहिए। वैठ के वूढो की तरह से राम का नाम नही लिया जाता। उह!"

अपनी कोठरी मे केशव वावू चारपाई पर अधलेटे-से पडे थे। पार्वती

मा का एक-एक शब्द उनके दिल को, अन्धी आखो पर ही, चुभता हुआ महसूस हो रहा था। मोतियाविन्द से भरी हुई आखो की पुतलिया इधर-उधर फडफडाने लगी। फीके चेहरे पर तमतमाहट छा गई। केशव वावू एक वार उठकर वैठ गए। वेतावी और झुझलाहट से उनके वदन मे एक किस्म की फुरती आ गई। मगर दूसरे ही क्षण वह फिर निढाल होकर तकिये के सहारे टिक गए, टागे ऊपर की ओर समेट ली।

एक हल्की-सी निसास केशव वावू ने छोड दी।

आज पाच वरसो से वह अन्धे होकर पडे हैं। राम का नाम भी कोई कहा तक लेता रहे। चौवीस घटे कोठरी मे पडे रहो। नरक के कुत्ते की तरह दो रोटिया खा ली, वस। कोई वात भी पूछनेवाला नही "अरे, जव पत्नी ही अपने कहे की न रही, तव और किससे आशा की जाए? वो तो भाई, अव जवान-जवान वेटो की मा है। कमाऊ-धमाऊ वेटे हैं, वहुए हैं। मेरी वात भला अव वो क्यो पूछेगी? परन्तु उसे वेटोवाली वनाया किसने? आज मैं अन्धा हो गया हू तो क्या मेरी वात भी नही सुनेगी?"

पानी का गिलास लेकर आए हुए तुलसी को एक मिनट से ऊपर ही हो चुका था, लेकिन वह चुपचाप खडी हुई वावा की तरफ देख रही थी। केशव वावू का चेहरा उस धुधली रोशनी मे भी भारी और तमतमाया हुआ उसे दीख रहा था।

केशव वावू ने एक भारी निसास छोडी और टागें फैलाकर तकिये के सहारे ज़रा और झुक गए। तव कडी आवाज मे तुलसी ने कहा—"वावा, पानी।"

तुलसी की आवाज़ कानो मे पडते ही केशव वावू उत्तेजित हो उठे। लडकी के हाथ पानी भेज दिया। अव इतनी अवहेलना होगी मेरी- नही चाहिए मुझे उनका ऐहसान!

"नही चाहिए पानी-वानी, ले जा! जव भगवान ने आखें ही छीन ली, अन्न ही छीन लिया तव पानी पीकर क्या करूगा।"

केशव वावू ने अपनी अन्धी आखो को तुलसी की आवाज़ के अन्दाज़

पर टिकाकर गुस्से से कहा। पार्वती मा की इस अवहेलना ने केशव बाबू के पुरुष-मन को विरक्ति से भर दिया था।

"प्राणो से अधिक प्यार किया—उसका ये फल दे रही है मुझे ? इच्छा करने ही पचास विवाह कर सकता था। एक से एक बढी-चढी, इन्द्र की अप्सराए इन चरणो पर शीश झुकाती। बडे-बडे श्रीमान् और धीमान जिसके आगे हाथ जोडे खडे रहते थे, उसकी अवहेलना करती है यह नारी ! आखिर तो ठहरी स्त्री की जाति, जवानी रहे की साथी।— फिर ज़रा-सा भी बुलाओ तो हजार नखरे · पर दोष तो मेरा ही है। मैंने ही इसको लाड कर-करके सिर पर चढा लिया है। जो यह कहती थी, करता था। इसका दिल न दुखे, इसलिए शिबू को इसके पास ही रहने दिया। इसके कारण ही मैं उसे पढा-लिखा न सका, नही तो आज वह भी पाचू की तरह ही विद्वान होता। अरे विद्वान के बेटे विद्वान ही होंगे—परन्तु यह मूर्खा मेरी कदर क्या समझे ? फिर, अपने को बडी पतिपरायणा और बुद्धिमती समझती है। पत्थर पड़ें ऐसी बुद्धि पर ! आना चाहे तो सौ बहाने निकालकर आ सकती है। मगर नही, इसमे भी जैसे उसकी कोई जमा जाती है। दो घडी इस शुष्क जीवन मे रस आ जाता है, सो भी इसे "

केशव बाबू के खून मे फिर गर्मी चढने लगी। अपनी परवशता पर वह मन को मसोस-मसोसकर रह जाते थे। भूखे शरीर और भूखी वासना के घात-प्रतिघात से उनका मन जर्जर हुआ जा रहा था। सिर मे चक्कर आने लगा। तन थकने लगा। सास भारी चलने लगी।

केशव बाबू ऊब गए, हार गए। सारा मन खीझ से भर गया। अगर ये लडके-बच्चे न होते तो अवश्य चली आती। लडके-बच्चे, बहुए, पोती-पोते उन्हें ज़हर-से लगने लगे। इन्हीके कारण वह इच्छा करने पर अपने जीवन मे रस नही पा सकते। पत्नी के ऊपर भी क्रोध आ रहा था— "इशारा नही समझती। पत्थर है पत्थर ! अपनी इच्छा हो तो सारी दुनिया की आखो मे धूल झोककर मेरे पास आ सकती है। परन्तु इच्छा करे तब न ! दादी और सास बनकर वह भूल गई है कि पहले वह पत्नी है। शास्त्रो

ने पत्नी के लिए पतिसेवा ही श्रेष्ठ धर्म बताया है। परन्तु किसका शास्त्र ? किसकी पत्नी ? ये सब मोह है। मायाविनी ! नारी आखिर है तो माया की ही मोहिनी। बडे-बडे ऋषि-मुनियो की तपस्या भग कर दी। अरे, दूर कहा जाऊ—मुझे ही इसने पथभ्रष्ट कर दिया, अन्यथा आज लोक-परलोक सुधर गया होता मेरा। किन्तु नारी। नरक का द्वार ! हरे ! हरे ! कहा इस गृहस्थी के माया-जाल मे फस गया ? गोविन्द ! गोविन्द ! इस स्त्री ने मुझे बहुत लुभाया।"

केशव बाबू की अन्धी आखो ने कोठरी मे इधर-उधर दौडकर चारो तरफ टाडो पर लदे हुए अनेक ग्रथो और पोथियो के बस्तो को अनुमान से देख लिया। स्वय शास्त्री, तर्करत्न, तिसपर विद्यावागीश के पुत्र ! बडे-बडे इनकी विद्वत्ता का लोहा आज भी मानते है। ढाका-कॉलेज मे सस्कृत के प्रोफेसर थे। इन अन्धी आखो ने उन्हे कही का न रखा। और इस नारी, नरक द्वार

कोठरी के दरवाजे की कुण्डी धीमे से खनक उठी। सारा दर्शन, ज्ञान और पाण्डित्य कपूर की तरह पल-भर मे उड गया। "आई शायद पत्नीजी"—केशव बाबू की अन्धी आखें आशा की ज्योति से चमक उठी। किन्तु 'चू-चू-चू'—चिडिया थी। कुण्डी पर आकर बैठी, और फिर पर फडफडाकर उड गई।

केशव बाबू के मुह से बरबस एक ठडी आह निकल गई—"अरे, वह भला क्यो आने लगी। कुछ नही, अब तो बस सन्यास ले लूगा। ऐसे घर से लाभ ही क्या ? ऐसी पत्नी से सुख ही क्या ? यो ही देश के ऊपर ईश्वर का कोप हो रहा है। और उसके ऊपर घर मे अपनी पत्नी ही जब अपने सुख की शत्रु हो जाए हो जाने दो नारी नरक का द्वार ! गोविन्द ! गोविन्द !"

काम-वासना की उत्तेजना क्रोध बनकर फिर धीरे-धीरे, मन ही मन मे, विरक्ति भाव धारण कर मन को सन्यासी बना चुकी थी। परन्तु यह कोई नई बात नही। ऐसा अक्सर होता है। केशव बाबू का पुरुष-मन जब

रस नही पाता तो सन्यासी हो जाता है। और एक बार तो ऐसे ही सन्यासी-पन के 'मूड' मे उन्होने खिझलाकर दीवाल से अपना सिर फोडकर खून निकाल लिया था। जब सन्यास आता, तब शकराचार्य की चर्पट-मजरी का पाठ आरम्भ कर देते हैं। आज भी हारे हुए सन्यासी मन ने चर्पट-मजरी की शरण ली। विरह-कातर क्षीण वाणी को सन्यास का कुश्ता चटाने लगे—

'का ते कान्ता कस्ते पुत्र
समारोऽयमतीव विचित्र ।
कस्य त्व वा कुत आयात
तत्त्व चिन्तय तदिद भ्रात !

भज गोविन्द भज गोपाल गोविन्द भज मूढमते।

शिवू की बहू चूल्हे के पास बैठी थी। मगला चूल्हे मे जलाने के लिए लकडिया लेकर आई थी, वही खडी थी। पार्वती मा जरा दूर पीढे पर बैठी थी। बाबा की कोठरी से चर्पट-मजरी सुनाई पडने लगी। शिवू की बहू ने मतलब-भरी आखे ऊपर उठाई। मगला की आखो से मिली। दो जोडी होठो पर शैतान मुस्कराहट खिलवाड कर गई।

सास की तरफ मगला की पीठ थी, शिवू की बहू ने अपनी मुस्कराहट छिपाने के लिए मुह फिरा लिया, फिर भी पार्वती मा से छिपा न रहा। पद-गौरव और बुढापे की झुझलाहट बेबसी मे झेप बनकर रह गई। बहुए जानती है, सास भी स्त्री है।

चर्पट-मजरी 'भज गोविन्द, भज गोपाल' तक पहुच गई। यदि कुछ देर तक और इसी तरह 'मूढमते' को गोविन्द-गोपाल भजने पडे तो सिर फोडने की नौबत आ जाएगी, यह डर पार्वती मा को समर्पण के लिए धीरे-धीरे प्रस्तुत कर रहा था। अठारह-बीस साल की जवान बहुओ की कक्षा मे बैठते हुए सुहागिन सास की उम्र का अडतालीसवा बरस बूढी लाज के घूघटे से जवान बनकर झाकने लगा—"फिर क्या किया जाए नही मानते तो ।"

पर जवान कुंवारी बेटियों के आगे, दिन-दहाड़े सन्यासी पति को फिर से गृहस्थ बनाने के लिए जाते हुए बूढ़ी सुहागिन के पैर कैसे उठेंगे ?

चर्पट-मजरी का पाठ चल रहा था—"प्राप्ते सन्निहिते मरणे · "

"तुलसी ! जा बेटी, रामतनु की घरवाली से पूछ तो आ, एकादशी कब की है ?"

अन्धे को जैसे आखें मिल गई। तुलसी चल दी। कनक को एक ही सदेश मिला था, वह भी उठ खडी हुई—"मैं भी जाती हू मा !"

'तू क्या करेगी चलकर ?" तुलसी भडकी।

मगला तुलसी को कडी निगाह से देखकर बोल उठी—"ले जाओ न उसको। कनक, दीनू, परेश को भी ले जाओ। और तुम लोग सब मामा के पास ही रहना—अच्छा !"

तुलसी झुझला उठी—"तो फिर कनक ही पूछ आए न, मैं क्या करूगी जाकर ?"

" पुत्रादपि धनभाजा भीति "बाबा की कोठरी बोल रही थी।

मा तडककर बोली—"ले क्यो नही जाती उसे ? बिचारी दिन-भर से कही गई नही, आई नही। और वो भला क्या पूछेगी एकादशी-दुआदशी ? खेल मे भूल जाएगी, मेरा बरत रह जाएगा। जा, और दिया-जले से पहले ही लौट आना—भला ! और किसीको सदेश न मागने देना, सुना ?"

कनक, दीनू और परेश पहले ही जा चुके थे। तुलसी गुस्से मे मुह लटकाए सुनी-अनसुनी-सी करके तेजी से निकल गई।

कोठरी मे आवाज तेजी पकड रही थी—"भज गोविन्द, भज गोपाल—भज गोविन्द, भज गोपाल "

"ऊह, मौत भी नही आती मुझे नसीबोजली को।" कहते हुए पार्वती मा पीढे से उठी। खडे-खडे एक सेकड के लिए ठिठकी, फिर कोठरी की तरफ सिर झुकाए हुए चल दी।

बडी बहू और मगला ने आजादी के साथ मुस्कराने के लिए सिर उठाया। सास का पीढा पास खीचकर उसपर बैठते हुए मगला ने कहा—

"तुम क्यो हसती हो रानी ? जब सास बनोगी तब मालूम पडेगा। ज्याठा मोशाई आखिर हैं तो अपने ही बाप के बेटे। तुझे बुढापे मे मारना अपने के लिए छोड थोडी देंगे।"

मजाक करने का हौसला और चेहरे की मुस्कराहट एकदम गायब हो गई—"जान दे दूगी, अगर ऐसी नौबत आएगी तो।"

बात कहते-कहते बडी बहू का चेहरा तमातमा उठा। अपनी बेबसी से विद्रोह करते हुए वह केवल मौखिक रूप मे ही जान दे सकती है बडी बहू इसे अच्छी तरह जानती है। तन की मशीन ज़िदा रखनेवाली अन्तिम सास तक वह अपने स्वामी की मिल्कियत है। पारसाल एक सौ तीन डिगरी के भरे बुखार मे भी न छोडा था—मरने से बची थी उस बार।

बडी बहू सिहर उठी। भूख की कमज़ोरी से दिमाग की उत्तेजना उसे चक्कर देने लगी। किसी तरह अपने को सभालकर एक उसास लेती हुई बोली—"स्त्री-जीवन भी भला कोई जीवन है! मा पर तरस आता है मुझे तो।"

"पर मैं कहती हू, दोप इसमे मा का ही है। कठोर बन के बैठ जाए, बाबा कर ही क्या लेंगे ? एक बार सिर फोडेंगे, दो बार फोडेंगे—अत मे पित्ते मारकर आप ही बैठ जाएगे।"

"भोला-भाला पा गई है न! सारी दुनिया के मरदो को ठाकुर-पो जैसा ही समझती है तू तो। उनके ऐसा "

चुन्नी जाग पडी थी, रोना शुरू हो गया था। दालान की तरफ एक बार देखकर बडी बहू बात कहते-कहते रुक गई। तन और मन की थकान चेहरे और आखो के भावो मे उभरकर सामने आई। रीढ की हड्डी उचकाकर पीठ को तानते हुए बडी बहू ने दीनता-भरे स्वर मे मगला से कहा—"उसे उठा तो ले फूल! मेरे बदन मे तो सत नहीं रहा।

चुन्नी के रोने और मा के फर्ज मे आत्मीयता की नाजुक डोर गज-ग्राह-द्वन्द्व-सी खिच रही थी। दूध उतरता नहीं, नन्ही-सी जान रोते-रोते सदा के लिए खमोश हो जाएगी। मा अपनी छातियो मे दूध कहा से पैदा करे ?

और अपने कलेजे की कोर के बिलख-बिलखकर मुँह में जाने की कल्पना से मा का दिल अपनी पूरी शक्ति के साथ क्या न धड़क उठे? क्या न चीख उठे?

चुन्नी के आसू वडी वहू की आखो मे आ गए। आसू आते गए, बढ़ते गए। गोदी के बच्चे की तरह उसका वेबस मन अपने नारीत्व की जिम्मेदारियो को उठा सकने मे अशक्त होने के कारण हुमक-हुमककर रोने लगा।

चुन्नी के रोने की आवाज वरावर नजदीक आते-आते वडी वहू के कानो मे कही गुम हो गई। चुन्नी को लेकर मगना पौरी-घर मे आ गई थी। चुन्नी—वडी वहू की सावन वरसाती हुई आखो ने उसे 'शायद' देखा—आखे अपनी आदत से लाचार होकर सिर्फ अपना फर्ज अदा कर रही थी, लेकिन मन उनसे अलग होकर आसुओ मे डूबता जा रहा था। डूवता ही चला गया—कही थाह नही, कही थाह नही। मन के पैर उखडने लगे, दम घुटने लगा। दिमाग नही, शरीर नही, सिर्फ दम है—और वह आसुओ के वोझ से दवता जा रहा है, घुटता जा रहा है। आसुओ से होश का साथ अब छूट रहा है। अधेरा, भूरा, मटमैला-सा घुआ-"घुआ "

"फूल, ओगो।"

कही असीम-अनन्त से फिर प्राणो के साथ शरीर का नाता जुडता हुआ जान पडा। प्राण हिल रहे है, ऊपर उठ रहे है। शरीर हिल रहा है। कही दूर से एक परिचित स्वर सुनाई पड रहा है—"फूल, ओगो।"

डूवते हुए मन को शब्दो का सहारा मिला। चेतना से दूर उस अधेरे मे वे परिचित शब्द प्राण और चेतना के वीच की टूटती हुई कडी को जोड रहे है—"फूल, ओगो ओगो।"

ये शब्द उस दम घोटनेवाले अधेरे से उसे उवार रहे है। उसे सतोष मिल रहा है। प्राणो मे उत्साह आ रहा है। आसुओ के वेग को चीरकर वह उस परिचित स्वर को अपनी चेतना का सदेश सुनाना चाहती है।

स्वर का उद्वेग वढ रहा है। प्राण फिर तेजी से अपनी शक्तियो का

मचय कर रहे हैं। आवाज़ को अपनी ताकत मिल रही है। आवाज अपनी पूरी ताकत के साथ कहना चाहती है, कहती है—"ह-अ-आ, ह-अ-आ !"

मगला हक्की-वक्की-सी हो गई थी। चुन्नी को लेकर आई। देखा, वकुलफूल रो रही है। अरे क्या हुआ, क्यो रो रही है ? कितना ही पूछो, कुछ जवाव नही देती। रोती जा रही है, फूट-फूटकर रो रही है। हिच-किया घुट-घुटकर आ रही हैं। उसने देखा, वडी वहू का शरीर अपने कावू मे नही रहा है। गिरना ही चाहती है। उसकी गोद मे चुन्नी थी। वह भी रो रही थी। मगला पल-भर के लिए तो घवरा गई। फिर अपने को झटपट सभालकर चुन्नी को जल्दी से वही जमीन पर लिटा दिया और वडी वहू को लपककर उसने दोनो हाथो से रोक लिया। वडी वहू के कधो को ज़ोर से झकझोरकर उसने घवराहट के साथ पुकारा—"फूल, ओगो फूल, फूल !"

वडी वहू वोली—"ह ! हा !"

"क्या हो गया है तुम्हे ? अरी वोलती क्यो नही, वोल ना ?"

वडी वहू ने अव तक अपने को काफी सभाल लिया था। वह सुवकियो से लड रही थी। सुवकियो को काफी तौर पर उसने अपने कब्ज़े मे कर लिया। गला खखारकर साफ किया।

"अरी क्या हो गया तुझे ?" मगला ने फिर पूछा, और अपने आचल से उसके आसू पोछती हुई वोली—"पागल कहा की। इस तरह अपने को मिटाते है भला। पगली, कहा की वात कहा जोड ले गई। ले, लडकी को सभाल। रोते-रोते गला वैठा जा रहा है विचारी का।

मगला ने चुन्नी को उठाकर उसकी गोद मे दे दिया। वडी वहू ने अव तक अपने को अच्छी तरह सभाल लिया था। आखें और नाक अपनी धोती के पल्ले से पोछकर उसने चुन्नी को ठीक तरह से अपनी गोदी मे लिटा लिया और घुटने हिलाते हुए उसे थपकिया देकर चुप कराने लगी।

मगला की सपनो-भरी आखे वरावर अपनी सहेली के चेहरे को ही टकटकी वाधकर देख रही थी। जिस दिन से इस घर मे आई, उसी दिन

"शैतान कहीं की ! रो-रो के मेरा जी दहला दिया है ..."

मगला रसोईघर के दरवाजे की तरफ मुड़ते हुए बोली— "... भूख की मारी, दूसरे तेरी ये रोनी सूरत देखकर घबरा ... गया ...। पानी पिएगी, पीले थोड़ा-सा, लाती हू।"

अपनी फूल का हा-ना कुछ सुने बिना ही मगला रसोईघर के अन्दर चली गई। बड़ी बहू छिन-भर तो दरवाजे की तरफ देखती रहीं, फिर चुन्नी को गोदी से उठाकर अपनी छाती से चिपका लिया। पुचकारने लगी—"आ-आ-आ ...!"

चुन्नी बहलती नहीं। अब तो रोया भी नहीं जाता। हाफ रही है। बड़ी बहू ने हारकर अपनी छाती खोलकर उसका मुह लगा दिया। चुन्नी चुप हो गई। दूध उतरता नहीं। भूख की बावली नन्ही-सी जान मा का स्तन खींच-खींचकर अपनी खूराक के लिए जान लड़ाए दे रही है। मा को

तकलीफ हो रही है, लेकिन यह तकलीफ इस वक्त वर्दाश्त कर सकती है। वडे जो पाप करते है, उसका ये फल भोग रहे है। लेकिन इस बिचारी वच्ची ने ऐसा कौन-सा पाप किया है जो धरती पर आते ही ये अकाल के दिन देखने पडे !

"ले पानी।" मगला ने पानी का गिलास लिए हुए रसोईघर मे प्रवेश किया।

वडी वहू की विचार-धारा टूटी। फीकी हसी हसकर गिलास के लिए हाथ वढाते हुए बोली—"हम लोग तो पानी पी-पीकर जी लेंगे फूल, पर इसका क्या होगा ?"

"क्या होगा ?" इस प्रश्न का उत्तर दोनो जानती हैं, यही नही, वल्कि उन्हे मालूम है, सारा गाव जानता है, सारा वगाल जानता है, फिर भी मौत का नाम लेते हुए हर एक की जवान लडखडाती है। दिल दहल उठता है।

मगला चुप हो गई। गम्भीर हो गई। भूख को व्रत का वहाना देकर सारा घर आज चार दिन से टाल रहा है। घर मे अनाज भरा हो तो चार दिन क्या, आठ दिन भी व्रत रखा जा सकता है, पर यहा ? कुछ नही, आते होगे चावल लेकर।

"अरे अभी आते होगे चावल लेकर। तू घवराती क्यो है ?" मगला सात्वना देती हुई बोली—"भगवान सव ठीक करेगे। ला, चुन्नी को मुझे दे। खीच-खीचकर जान निकाल लेगी तेरी।"

पास आकर चुन्नी को वडी वहू की गोद से लेकर मुस्कराते हुए चुन्नी की ओर देखकर मगला बोली—"अरी वस कर। सव दूध तू ही मत पी जा, कुछ अपने होने वाले भाई-वहिनो के लिए भी छोड दे।"

उसने चुन्नी को अपनी गोद मे खीच लिया। खुराक पाने के उस भूखे सहारे को चुन्नी किसी तरह भी छोडना नही चाहती थी। वह पूरी ताकत से मा की छाती को अपने मसूडो से दवाकर जोक की तरह चिपकी ही रही। वडी वहू का भूखा और कमजोर तन इसे वर्दास्त न कर सका।

तिलमिला उठी—"मौ आह कमबख्त मर।"

गाली देना चाहती थी। तमाम हिन्दुस्तानी माताओं की तरह बड़ी बहू को भी अपने बच्चों को गालियां देने की आदत थी। "मर जा। भाड़ में जा।" वगैरह किस्म के आशीर्वाद वह दिन में पचासों बार अपने बच्चों को दिया करती थी। और अगर कोई इसपर कुछ कहता तो जवाब देती—"मा की गालियों से ही बच्चे अगर मरते तो ये दुनिया आज न दिखाई देती।" मगर आज चुन्नी को मर जाने की गाली देते हुए बड़ी बहू की आत्मा बेसाख्ता चीख उठी। यों बिना बुलाए ही मौत हर घड़ी मेहमान बनने को तैयार रहती है। जबान से 'उफ' निकालने में सांस के तार टूटते हैं। तब भला ये गाली ।

बड़ी बहू का जी उस गाली को वापस लेने वा बे असर करने के लिए अंदर ही अंदर बेताब हो घुटने लगा—"ये बच्चे सलामत रहें। सब आदमी सलामत रहें। मुसीबत तो आती-जाती रहती है। राम करे सबकी मौत मुझे "

मौत जब दूर थी, गांव में कभी-कभी किसीके यहां आया करती थी, तब उसमें इतना डर न लगता था, लेकिन आज मौत सिर पर नाच रही है। इन लड़ाई और अकाल का लाभ उठाकर मौत अपनी भूख को बेतरह से इज़ाफा दे रही है, इसलिए आज बड़ी बहू बच्चों से लेकर अपने तक, किसीके लिए भी, मौत नहीं चाहती। वह मौत से भागना चाहती है, जान चुराना चाहती है।

तभी नदर दरवाज़े पर शिबू की आवाज़ सुनाई पड़ी—"नि शक होक मोशाई। मैं तुम्हारा लीडर होकर एस० डी० ओ० के यहां चलूंगा, आमि गभरमेन्ट के बोलबो, जे शाला तूमि आमार देश को भूखा मार डालोगे?"

शिबू के साथ और दो-तीन लोग दहलीज़ पारकर अब दालान में आ चुके थे। शिबू आगे, उनके पीछे सोमेन, पांचू का अनन्य मित्र। वह अक्सर पांचू के साथ घर आता है। बड़ी बहू, मंगला, सभी उसे जानते हैं।

शिबू सबको ऊपर अपने कमरे में लिए जा रहा था।

चुन्नी अभी भी रो रही थी। शिवू ने रौब जमाया—"अरे क्यो रो रही है चुन्नी ? उसे दूध पिला दो—और ?

शिवू ने अपने साथियो की तरफ देखकर कहा—"तुइ चाय खावे शोमेन ? अच्छा, चार-पाच प्याला चाय भी बना देना। और थोडा-सा नाश्ता भी—हलुवा बना लेना। और कुछ नमकीन भी ? अच्छा नमकीन भी सही, सुना। हा तो, वाट आई वाज स्पीक हा, गभरमेन्ट "

शिवू और उसके साथी सीढिया चढकर ऊपर जा चुके थे। मगला और बडी बहू एक-दूसरे को देखकर मुस्कराने लगी। बडी बहू बोली—"चाय बनाओ रानी ! और हलुवा भी बना लेना। भडारघर खाली हो जाए तो मोनाई के यहा से रवा और शक्कर के बोरे खुलवा लेना। कल तुम्हारे ज्याठा राजा तगडे बनकर सुराज लेने जाएगे।"

"स्वराज ? अरे आई नो, तूमि मागो स्वराज,—एण्ड दे वोले, जे तुम शाला हिन्दुस्तानी लोक, यू वाण्ट स्वराज ? आच्छा शाला, आमि तोमाके जमराज देवो।" ऊपर शिवू जी लीडराना मूड मे चहक रहे थे—"अरे बाबा, आमि जानी, एइ तो गभरमेन्टेर पालिसी। एइ शाला चालीस कोटि भारत मातार शोन्तान खिदे पेये विल डाई, फेमीन विल एण्ड और तब शाला हू आस्क स्वराज ? शे बोलबे आमि ब्रिटिश गभरमेन्ट ! इण्डिया इज अवर थिंग—आमार वोस्तु !"

शिवू की लीडरी मे एक शान है—दस हो, हजार हो, दस हजार हो, किसीको बोलने नही देता। यह काम वह सिर्फ अपने जिम्मे ही रखता है। लोगो को लीडर की जरूरत हो या न हो, मगर शिवू मुखर्जी हर वक्त लीडर हैं। काग्रेस से लेकर, कम्युनिस्ट पार्टी तक और हिन्दू महासभा से लेकर मुस्लिम लीग तक, मनुष्य-मात्र के जन्मजात लीडर शिवगोपाल मुखर्जी अभी कुछ देर पहले अचानक ही घोषपाडा अकाल-निवारिणी महासमिति के दफ्तर मे पहुच गए थे। सोमेन उसका सहायक मत्री है। दफ्तर मे कुछ युवक बैठे हुए तय कर रहे थे कि एक डेपुटेशन लेकर एस० डी० ओ० से मिला जाए। शिवू फौरन लीडर बन गया।

सुनाने-काविल गालियो की लिस्ट, उसे और उसके साथियो को अकाल-पीडितो की सेवा करने का विचार त्याग देने पर मजबूर करती रही। जान छुडाने के लिए सोमेन के सारे बहाने और हीले-हवाले खत्म हो गए। ज़वान वद हो गई, मगर (पाचू के शब्दो मे) दादा की 'मेड इन इण्डिया' अग्रेज़ी का धाराप्रवाह भापण वद न हुआ।

दादा को अपनी इस 'मेड इन इण्डिया' अग्रेज़ी पर भी नाज़ है। ज़ोर-शोर से वोलते हैं, ज़बर्दस्ती वोलते है। और नौजवान कौमी कार्यकर्ताओ के सामने जव कभी मौका पा जाते हैं तव तो खास तौर पर इस स्वदेशी-अग्रेज़ी का प्रचार करने के लिए वोलते ही चले जाते हैं—"शाला यू मेड दि अवर स्लेव, आमि शाला मेड फेलिवो योअर दि लैंगवेज दि स्लेव। एज़-एज़, आमि हार्सेर मुखे लागाम देवो, एण्ड दैन ह्वेन आमि एकटू वेरी विग फोर्स ए लागाम विल वी पुलिंग एण्ड तोमार हॉर्से जखन आमि शडाक-शडाक दुइ हाण्टर मारवो शाला!—योर हार्स ड्राउन इन सी एण्ड यू गो इगलैण्ड शाला।"

सोमेन वार-वार अपनी घडी देख रहा था। साढे पाच वज रहे थे। सोमेन के साथी परेशान होकर उसकी सूरत देख रहे थे। मगर लीडर किसी वात की परवाह नही करता। वह अपनी ही धुन मे मस्त है। वाह पकड-पकडकर अपनी वात सुनाता है।

आखिर सोमेन को एक तरकीव सूझी—"दादा, तो कल डेपुटेशन लेकर चलना है न?"

दादा को झटका लगा—"चलना माने की, अरे आई गो "

ज़बर्दस्ती वात काटकर सोमेन वोला—"मगर हम नही चाहते कि हमारा लीडर मामूली ढग से एम० डी० ओ० के पास जाए।"

"दैट्स राइट। दैट्स राइट "

सोमेन ने शिवू को इससे आगे वोलने ही न दिया। जोर देकर वोला—"तो वस, मैं जाता हू। जुलूस का प्रवन्ध करता हू। आज दस गावो के आदमी इकट्ठा करके आपका जुलूस निकाला जाएगा। तव असर पडेगा।"

"भेद आमि नाट " [illegible] की। सोमेन [illegible] ने उठते हुए बोला—"बस, [illegible] एक अर्जी लिख डालिए। पाचू से [illegible] लीजिएगा। [illegible]

शिबू की महत्ता को सोमेन की [illegible] दिया—"पाचू क्या देगा ? [illegible] हिम टेन इयम।'

सोमेन ने मन ही मन अपने कान पकड़े और [illegible] बनाने के लिए बोला—"आप मेरा मतलब नहीं समझ [illegible] मेरा मतलब यह है कि गाव के सब आदमियों [illegible] पड़ेगी ही। पहले पाचू को दिखाकर दस्तखत [illegible]।'

गम्भीरता के साथ शिबू ने जवाब दिया—"पाच [illegible] नही होने चाहिए—एम० डी० ओ० सोचेगा, [illegible] कौडी का। लीडर माने लीडर। रोब पड़ेगा। [illegible] खत पहले चाहिए। तुम बैठ जाओ। मैं लिखता हूँ, तुम [illegible], एज वन लीडर एण्ड "

"तब फिर पहले दस्तखत आप ही कीजिए। बल्कि अकेले आप [illegible] बगाल के लीडर की हैसियत से दस्तखत कीजिए। और हम जाते हैं [illegible] का प्रवन्ध करने। चलिए, आइए।" उसने अपने साथियो से कहा और एक सेकड भी न रुका।

३

दयाल जमीदार के यहा पाचू यह आस लगाकर गया था कि सहारे के लिए एक और जुगाड लगाएगा सो उलटे टचूशन भी गई। जमीदार अपनी

पत्नी और बच्चों को कल पछाह भेज रहे हैं। भुखमरों की बढ़ती हुई लूट-पाट और हमलों से दयाल भी डरते हैं। डाकू को डाकुओं का डर है। पचास भोजपुरिये लठैत और दो-दो बन्दूकें पास रखकर भी सपनों में चौंक-चौंक उठते हैं कि कहीं !

दयाल वर्ग के प्रति पाचू का निष्क्रिय विद्रोह अपनी असमर्थता पर व्यंग्य बनकर उसके मस्तिष्क में चुभ रहा था। अन्तर्चेतन मन में छिपा हुआ यह व्यंग्य पाचू को चिढ़ा रहा था। अपनी इस खीझ को उलट-पुलटकर अनेक पहलुओं से देखते हुए सोचने लगा कि हमारी कमजोरी ने ही उन्हें बढ़ावा दिया है। हमारे निष्क्रिय त्याग और सहनशीलता ने ही इनकी स्वार्थी प्रवृत्तियों को हमपर अधिकाधिक अत्याचार करने को उकसाया है। सदियों की आदत ने इन्हें एक झूठा बल दे दिया है। मदाग्नि रोग से पीडित, चर्बी बढ़े हुए फुसफुसे बदन के मसनदी गद्दों के आगे तगड़े से तगड़ा पहलवान भी एड़ियां रगड़ने लगता है। बड़े से बड़ा बुद्धिमान भी इन कुदज़ेहन पैसे-खोरों की अक्ल को इनकी तिजोरी की तरह बड़ी बताकर अपने अस्तित्व को साफ भुला देने में अपनी रक्षा समझता है। यह सब इसलिए न कि इनके पास पैसा है।

एक दयाल, एक मोनाई, गाव-भर का अनाज खा जाता है, गाव-भर के कपड़े पहन लेता है। हमारी खूराक, हमारे तन ढकने के कपड़े, उनकी तिजोरियों में नोटों के बंडल, सोने, चादी और हीरे-जवाहिरात के तोड़ों की शक्ल में हिफाज़त से रखे हैं। उनकी हिफाज़त के लिए भोजपुरिये लठैत हैं, बन्दूकें हैं, पुलिस है, कानून है—और हमारी हिफाज़त ?

पाचू की झुकी हुई आखें मोहनपुर की ओर उठीं। दयाल ज़मींदार की हवेली गाव-हद के पार थी। पाचू अब मोहनपुर में प्रवेश कर रहा था। झोपड़िया दिखाई पड़ने लगीं। अब तो इन्हें झोपड़िया कहना भी पाप होगा—मिट्टी की चार टूटी हुई दीवालों के ढूह, जिनके बास बिके, छप्पर बिके, चिथड़े-गुदड़े बिके, घर-गृहस्थी लुटी।

दो बच्चों की नगी लाशें पड़ी हुई थीं रामू की झोपड़ी के पास। बच्चे

शायद रामू के ही हैं। पाचू से रहा न गया। पास जाकर देखा, मौत अभी बच्चो के साथ खेल रही रही थी। घडी-पल के मेहमान हैं। रामू की वह बहुत पहले ही भाग गई थी और रामू लुटेरो मे मिल गया था। घर-बार, मा-बाप, सब साथ छोड गए, बस ये थकी-थकी सासे, एक-एक कर पल-दिन गिनती, किसी तरह अपना फर्ज़ पूरा होने तक साथ दिए जा रही है।

पाचू मौत को बहुत नज़दीक से देख रहा था। बहुत गौर से देख रहा था। इस अकाल मे यही हालत एक दिन उसकी और उसके घरवालो की । लेकिन अभी तो उसके पास चावल हैं। घरवाले उसकी प्रतीक्षा कर रहे होंगे—दीनू, परेश, नन्ही-सी चुन्नी, कनक

पाचू फौरन ही वहा से हट आया और तेज़ी से अपने घर की तरफ चलने लगा।

यह फजलू काका अपनी झोपडी से टीन निकाल रहे हैं, बेचने के लिए। और यह पेड के नीचे बूढी खेश्रमनि, कमर मे एक लगोटी लगाए दोनो हाथो से मिट्टी की एक हडिया थामे, सिर झुकाए खोई हुई-सी बैठी है। कभी गाव-भर की परिक्रमा किया करती थी। पाचू ने इसका नाम नारदजी रख छोडा था। ब्राह्मणो के टीले से यह मछुओ की बस्ती की ओर कैसे चली आई? यह भी एक दिन यो ही बैठे-बैठे मर जाएगी। रामू के बच्चे तो शायद अब तक मर गए होगे। उन्हे कौन उठाएगा? योही लाशें सडती रहेंगी? क्या आदमियो की लाशें यो ही सडती रहेगी। क्या एक दिन उसकी भी लाश इसी तरह ?

पाचू ठिठका। उसकी तबीयत हुई कि लौटकर बच्चो को देख आए। लेकिन उसे घर जाना है। दीनू-परेश, चुन्नी-कनक, सब भूखे होगे।

रामू के बच्चो को लावारिस लाशो से लेकर अपनी कल्पना तक, सारी विचार-धारा से हठपूर्वक मन मोडकर, वह आगे बढा। कदम तेज़ी से आगे बढ रहे थे।

यह बेनी की झोपडी है। बेनी वो बैठा है। अपने घुटनो पर सर झुकाए उनकी पत्नी बैठी हैं। दो महीने पहले ही उसका ब्याह हुआ था।

नई जवानी, नई उमगें और यह अकाल। वसी वजाने मे वेनी अपना सानी नही रखता था। पाचू ने देखा, दोनो की जवानी बूढी हो गई है। पास-पास बैठे रहने पर भी न औरत को मर्द का होश है, न मर्द को औरत का। पाचू सोचने लगा, अकाल-पीडित नव दम्पती का यह मधुचन्द्र उसे मगला की याद आई—वे सपनो-भरी आखे, उसका अल्हडपन, उसकी मुस्कराहट·

चार दिन से वह भी भूखी है। पाचू के कदम और तेज पडने लगे।

आखो के सामने, थोडी ही दूर पर मोनाई की दूकान थी। मास की पतली-पतली झिल्लियो मे चमकती हुई खुदा की खुदाई डगमगाते हुए कदमो मे इधर-उधर डोल रही थी। गड्ढो मे धसी हुई डगर-डगर आखें घूर-घूरकर, अन्न के एक दाने की तालाश मे मोनाई की दूकान के आस-पास मडरा रही थी। कितने ही नर-ककाल झुके हुए, ज़मीन मे चावल की सिर्फ एक कनी को खोज रहे थे। बेतरतीवी के साथ उनकी दाढिया वढी हुई थी। औरतो के वाल अस्त-व्यस्त, तमाम जिस्म की नसें और हड्डिया चमक रही थी। वच्चे इन्सान के वच्चे नही मालूम पडते—ये समूची वस्ती ही इन्सान की वस्ती नही मालूम पडती।

झुटपुटी साझ धीरे-धीरे घिर रही थी। उसके मद्धिम उजाले मे ये हिलते-डोलते प्राणी·

पाचू सोचने लगा, "रईसो और अफसरो की दुनिया मे क्या इन इन्सानो को कोई इन्सान मानेगा ? वे इन्हे भूत कहेंगे, भूत। हालाकि वे खुद मुर्दा इन्सानियत के भूत वनकर हमारे सिरो पर सवार हैं। हमारी भूख की नीव पर उन्होने अपनी सोने की हवेलिया वनवाई हैं। आदमखोर, हैवान !"

शहर के राजनीतिक वातावरण मे पनपा हुआ पाचू का दिमाग इस समय शौकिया तौर पर जोश खा रहा था। उसके पास इस समय पाच सेर चावल है। वह आज खाना खाएगा। चावल पाने के पहले वह भी भुख-मरो मे से एक था। वह भी भूख की तकलीफ को उसी तरह महसूस कर रहा था जैसे कि ये चलते-फिरते नर-ककाल। लेकिन यह सतोप कि उसे

और उसके परिवार को आज भोजन मिलेगा, उसे तमाम भुखमरो से अलग किए दे रहा है। इसके साथ ही साथ वह यह भी जानता है कि उसका यह सतोष अस्थायी है। उसका मन इसलिए इन भुखमरे साथियो का साथ छोडने से इन्कार करता है। परसो से उसके परिवार का भविष्य भी इन्ही-की तरह कठोर हो जाएगा। लेकिन इस वक्त तो वह खुश है। फिर भी, अपने साथ ईमानदारी वरतते हुए, वह अपने आनन्द को अस्थायी बना देनेवाले दयाल और दयाल-वर्ग के लोगो पर, बौद्धिक वडप्पन के साथ, झुझला रहा है। खाने के मामले मे आज वह दयाल और मोनाई के बरा-वर का ही दर्जा रखता है। फिर क्यो न वह उनपर झुझलाए, और क्यो न अपने भविष्य के साथियो का पक्ष ले ?

सहसा पाचू का ध्यान टूटा। मोनाई की दूकान के सामने पाच-छ जीवित ककाल एक को घेरे हुए छीना-झपटी और हाथापाई कर रहे थे। उनकी अस्पष्ट और भयावह आवाज़ो के सामूहिक स्वर साझ की वढती हुई अधियारी को मनहूसियत का गहरा रग दे रहा था। फिर पाचू ने देखा, उस घिरे हुए आदमी की चीख इस मनहूस शोर मे एक दर्द पैदा करती हुई अचानक घुट-सी गई और वह घिरा हुआ आदमी गिर पडा।

पाचू दौडकर पास पहुचा। उसने देखा, मुनीर वढई था। सास नही चल रही थी। मर गया। हार्ट फेल हो गया शायद। मुनीर की लाश के आस-पास चावल विखरा था, जिसे वटोरने के लिए लोग गिद्धो की तरह टूट पडे थे। उन्हे इस बात का कोई खयाल न था कि उनके पास ही एक आदमी की—उनके ही एक साथी की—लाश पडी हुई है। वे इस समय पूरे उत्साह के साथ ज्यादा चावल वटोर लेने के प्रयत्न मे थे। एक वार लाश को, फिर एक वार पाचू को, कुछ खोई हुई दृष्टि से देखकर वे अपने काम मे लग गए। उनके हाथ छीना-झपटी करने लगे।

पाचू चिल्लाया— 'मार डाला न तुम लोगो ने इस वेचारे को।"

पाचू की आवाज़ सुन जीवित ककालो के चेहरे उठे। उनके चेहरे पर चिढ का भाव था। वे सूखी हुई झुर्रिया, वे धसी हुई आखें गोया

प्रश्न कर रही थी—"क्या वक्ता है। हम अपना काम कर रहे हैं।"

दो-एक निगाहें पाचू के हाथ की पोटली पर भी गई। पाचू भक-भकाया। वह उठ खडा हुआ। उसने एक बार मुनीर की लाश की तरफ देखा। मुनीर ने उसके स्कूल की बिल्डिंग मे लकडी का बहुत-सा काम किया था। बडा भला आदमी था बेचारा।

लेकिन मन कह रहा था, कहीं उसके चावल के लिए भी छीना-झपटी न करे। उसे यह चिन्ता नहीं थी कि उसका चावल ये लोग छीन सकेंगे, बल्कि इस छीना-झपटी मे उसके धक्के मे अगर एकाध और मर गया तो ?

एक लाश और बढ जाएगी। लाशें—मुनीर की लाश, रामू के लावारिस बच्चो की लाशें, और एक दिन वह खुद भी

नहीं-नहीं, वह इसे दफनाने का प्रबन्ध करेगा। इन्सानियत का तकाजा है। और फिर मुनीर ने उसके साथ स्कूल मे काम किया था।

बढई नूरद्दीन आज चार दिनो से दोनो जून पेट पर हाथ फेरकर डकार ले रहा है। अजीम के घर मेहमान है। साझ होते ही बडे सुरीले गले से टीप लगाता है—

जीवनेर आज फुल फुटे छे,

आशवे बोले शाझ वेलाय

बेफिक्री से गूजता हुआ स्वर पड़ोस के सूने घरो की दीवालो मे टकराकर लोगो के दिलो मे टीसें उठाता है। नूरद्दीन के घर मे कोई नही। बाप बहुत पहले ही मर चुका था। एक बहन थी, जिसकी शादी हो चुकी थी। मा थी तो पिछले हफ्ते एक रोज सात दिन की भूख का गुस्सा नूरद्दीन ने उसके गले पर उतार दिया। गला घुटते ही भूखी लागर बुढिया की रूह तडपकर अर्शे मोअल्ला को छेदती हुई खुदावन्द करीम से फरियाद करने पहुच गई। मा के मरते ही गुस्से की लगाम

काबू मे आई, लेकिन भूख मे साभीदार के लिए नफरत इतनी थी कि गुनाह को गुनाह न समझा। भूख से मर गई, इस तरह मन को समझाकर, अजीम की मदद से, उसे दफनाने का इन्तजाम किया। उस दिन अजीम ने उसे अपने घर खाना भी खिलाया।

अजीम मोनाई का दाहिना हाथ है। बचपन से ही उसकी दूकान पर नौकर है। अकाल कभी उसके घर झाकने की हिम्मत भी नही कर सकता। नूरुद्दीन ठहरा उसका लगोटिया यार, एक जान दो कालिब। मुसीबत मे दोस्ती का हक अदा करना इन्सान का फर्ज है। अलावा इसके नूरुद्दीन बडे काम का आदमी है। अजीम समझता है, जैसे रोजगार-बेपार मे वह दूर की कौडी ले आता है, वैसे ही नूरुद्दीन भी कहो तो राजा इन्दर के घर से परी निकालकर ले आए। अजीम को जब से मोनाई का विश्वासपात्र और प्रधान मत्री का पद मिला है, वह अपने को (मोनाई के बाद) गाव के बडे आदमियो मे समझने लगा है।

नूरुद्दीन की दोस्ती से अजीम को भी कभी-कभी शेर के शिकार मे सियार की जूठन मिल जाया करती है। इसीलिए उससे दबता है। नूरुद्दीन के साथ रहते-रहते बहुत दिन पहले एक बार खुद उसने भी मुनीर की बीवी के साथ छेड-छाड करने की हिम्मत की थी, पर मुह की खाई। तब से उस औरत पर उसके दात है। पर जूठन चाटने की तबीयत अब नही होती। इसीलिए नूरुद्दीन से उसने मुनीर की बीवी के लिए फरियाद न की।

औरतो के सामने ही नूरुद्दीन मजाक-मजाक मे उसका पानी उतार लिया करता था। इस बार वह पकड मे आया है। एहसान का फर्ज पाटने का अच्छा मौका हाथ लगा है। अजीम ने मोनाई के यहा उसका घर और चार बीघे जमीन बिकवाकर पच्चीस रुपये उसे दिला दिए, अपने घर लाकर उसे रखा, दोनो वक्त भरपेट खाना भी उसे खिलाया। इसके एवज मे अजीम ने नूरुद्दीन से मुनीर की बीवी तलब की। साथ ही उसकी यह शर्त भी थी कि इस बार शेर वह खुद बनेगा और सियार नूरुद्दीन। यह शर्त

नूरुद्दीन के लिए सख्त थी, मगर अजीम से उसे चावल मिलते थे। अलावा इसके वे पच्चीस रुपये भी अभी अजीम ही के पास थे।

नूरुद्दीन के चक्कर मुनीर के घर की तरफ लगने लगे।

सात दिन से मुनीर के यहा किसीके मुह मे अन्न का एक दाना भी न पहुचा था। दो छोटी-छोटी लडकिया, चाद और रुकिया, अन्न बिना मुर्दे-सी पडी रहती थी। मुनीर भूख के साथ-साथ मलेरिया से भी लड रहा था। लेकिन मुनीर की बीबी को आज भी पाचो वक्त की नमाज़ का सहारा था।

नूरुद्दीन हमदर्दी दिखाने आया। पर मुनीर की बीबी उसकी परख मे खरी उतरी।

नूरुद्दीन ने दाव पलटा। मुनीर की बीबी के खुदा मे साझा लगाया। इलहाम के चर्चे होने लगे।

मीरगज की मसजिद मोहनपुर और मीरगज की हद पर थी। पीढियो से 'भूतो की मसजिद' के नाम से मशहूर थी। नूरुद्दीन ने बताया—"यहा एक भूत सवाब करता है। पिछले हफ्ते मैं उधर से आ रहा था। छ रोज से फाके हो रहे थे। शाम की नमाज़ का वखत। फिर सोचा, भूतो के डर से खुदा बहुत बडा है। जी कडा करके वही नमाज़ पढी। नमाज़ पढकर मसजिद से बाहर आया, तो देखा कि जीने पर एक केले के पत्ते पर भात और भुनी हुई मछलिया रखी हैं। मैं चकराया। मुह मे पानी भर आया, मगर भूतो का डर था। तभी कही से आवाज आई—"ऐ खुदा के बन्दे, ये तेरे ही वास्ते हैं। ढाई सौ बरस के बाद तू ही एक ऐसा इन्सान मिला, जिसने खुदा के खौफ को हमसे बडा माना। आज की दुनिया मे अज़ाब बढ गया है। दुनिया, खुदा को भुला बैठी है। मगर जो खुदा को नही भुलाता, उसको खुदा प्यार करता है। ले, खा ले। और रोज़ आकर यहा नमाज़ पढ। तुझे कोई खौफ नही। मैं भूतो का सरदार हू। खुदा के हुक्म से खुदा के बन्दो का इम्तिहान लेता हू। तुझे यहा रोज खाना मिलेगा। खुदा के बन्दे कभी भूखे नहीं रह सकते।"

नूरुद्दीन एक दिन शाम को वह रास्ता दिखाने के लिए मुनीर की बीबी को ले गया। नमाज के बाद मसजिद के कोने पर उसे अपने लिए खाना परोसा हुआ मिला।

उस दिन, पूरे सात दिनों के बाद, मुनीर की बीबी ने भरपेट खाना खाया था।

बच्चियों का खयाल आता था, बीमार और भूखे मुनीर का ध्यान आता था, मगर नूरुद्दीन ने साफ जता दिया था कि खुदा की मर्जी के खिलाफ अपना हक अपने प्यारे से प्यारे को भी तुम देने की हकदार नहीं।

अपनी भूखी बेटियों और बीमार पति के सामने खुदा के घर से खाना खाकर लौटने पर मुनीर की बीबी की आखें न उठती थी। जी बेहद कलपता था, मगर शाम होते ही नमाज के बाद परोसी हुई पत्तल का खयाल आता, जिसमे खुदा के हुक्म से उसके सिवा और किसी का हक ही नही।

खुदा के खौफ ने मुनीर की बीबी को झूठ बोलना सिखाया। आत्मा सोने लगी, स्वार्थ जगने लगा।

मुनीर की बीबी रोज नमाज पढ़ने जाने लगी।

नूरुद्दीन थाली परोस चुका था। अजीम आज खाने पहुचेगा। चालाक नूरुद्दीन जानता था, वह हर तरह से अजीम के हाथ मे है। उसने मुनीर की बीबी को अपना हथियार बनाया। पहले अपने पच्चीस रुपये वसूल किए और सोचा कि शहर जाकर मिलिटरी मे बढ़ई का काम ढूढूगा। उसके लिए औजार चाहिए। अपने औजार, घर की तमाम चीजों के साथ बेचकर, पहले ही वह अपना और अपनी मा का पेट, जब तक चला, भरता रहा। उसने सोचा, भूखे मुनीर से औजार खरीदे जा सकते हैं।

नूरुद्दीन मुनीर के घर आया। उसकी बीबी से बोला—"अपना हक भी आज से तुम्हे देता हू। मैं शहर जाऊगा। मेरा हक खुदा की मर्जी से तुम्हारी बच्चियों और तुम्हारे शौहर को मिलेगा।"

मुनीर की बीबी खुशी-खुशी नमाज पढ़ने गई।

यह पहला मौका था जब नूरुद्दीन नहीं गया और अज़ीम को शेर बनने का मौका मिला। आज अज़ीम खुद खाना लेकर मसजिद पहुंचनेवाला था। अपने पच्चीस रुपये वसूल करने के बाद नूरुद्दीन ने उसे सब कुछ समझा दिया—"भूखी बच्चियों और शौहर से चुराकर अकेले खाने की आदत डलवाकर मैंने उसका ज़मीर चूर-चूर कर दिया है। अब सच्चाई और पाक-दिली की वह अकड़ उसमें नहीं रही है। थाली दिखाकर सामने से घसीट लेना। वह तुम्हारे पीछे-पीछे चली आएगी। सबज़ बाग दिखाना, सबज़ बाग।

मुनीर की बीबी नमाज़ पढ़ने गई, इधर नूरुद्दीन ने अपना जाल फैलाया। भूख हाथ काटने के लिए तैयार हो गई। मुनीर ने सिर्फ एक अठन्नी के लिए सारे औज़ार बेच दिए। अठन्नी पाकर बारह रोज़ के भूखे और बीमार मुनीर के डगमगाते हुए कमज़ोर पैर जल्द से जल्द सोनार की दूकान पर पहुंच जाने के लिए उतावले हो उठे थे।

मुनीर की लाश को उठाकर ले चलने के लिए पाच ने अपनी ही तरह के सहृदय और मृत्यु-भीरु दो 'मज़बूत' मरभुखो को राज़ी कर लिया। चावल की गठरी अपने गले से बाधकर पीठ की तरफ कर ली। चलने मे पाच सेर चावलो की गठरी इधर-उधर हिलती, और उसका गला घुटने लगता। हाथो पर एक आदमी की लाश का बोझ और मन भारी, बड़ी मुश्किल से रास्ता तय हुआ। चाद और रुकिया बाप की लाश को देखकर बेहाल हो गईं। भूख की कमजोरी और बाप की मौत का गम नन्ही-सी रुकिया की बर्दाश्त से बाहर हो गया। वह बेहोश हो गई। चाद दस बरस की थी रुकिया से ज्यादा समझदार, बाहोश और इसलिए ज्यादा तकलीफ मे।

मा घर पर नहीं है, बाप की लाश घर पर आई है और छोटी बहन बेहोश पड़ी है, वह क्या करे ? बिलख-बिलखकर रो रही है, दम घुटन

लगता है, एक दुःख मे हजार दुःख याद आ रहे है। अब्बा गए ये चावल लाने और खाली हाथो, यो जाए। हाय अब्बा !

अब्बा की याद मे भूख की तडप थी, जो उस वक्त अब्बा की तरह ही अज़ीज़—अब्बा से भी ज्यादा अजीज़ थी।

भूतो की मसजिद के पास, झाडी की आड मे, मुनीर की बीवी खाना खा रही थी। और अज़ीम उसके पास ही बैठा उसके बदन पर हाथ फेर रहा था। अज़ीम की आखो मे वहशत थी, उतावलापन था। जब्त की शिद्दत से बीच-बीच मे होठ काटने लगता था। उसकी आखे चढ जाती थी। मुनीर की बीवी के बदन पर उसके हाथो का दबाव सख्त होता जाता था और मुनीर की बीवी—वह खाना खा रही थी, और उसीमे अपने को खोए रखना चाहती थी।

नूरुद्दीन मुनीर के मरने की खबर सुनकर उसके घर आ पहुचा। बगला-भगनी मुहब्बत बगैर आसुओ के उसे जोर-जोर से रुला रही थी। दिमाग मे पेच पड रहे थे—"औरत खाली हुई है। शहर ले चले। इस तरह से अपने काम आएगी। दो लडकियो की मा हो जाने पर भी अभी टली नही है। काठी अच्छी है इसकी। चार दिन और अच्छी तरह से इसकी खिलाई-पिलाई करूगा, निखर उठेगी।"

मुनीर की लाश उठाकर लानेवाले तीनो आदमियो मे से किसीमे इतनी ताकत नही थी कि लाश को कब्रिस्तान तक ले जा सके। घर के पिछवाडे जरा दूर पर एक ऊसर खेत था। नूरुद्दीन कही से फावडा ले आया। किसी तरह ज़मीन खोद रहा था। साथ ही साथ उसका दिमाग भी चल रहा था—"लौटकर आए तो दाव फेकू। कही भडकी हुई न जाए ! फुसलाना चाहिए। दो रुपये दू। मुसीबत मे हमदर्दी ! मगर रुपये तो शायद अज़ीमा भी दे। यो तो घाघ है, मगर औरतो के मामले मे साले की अक्ल घास चरने चली जाती है। और फिर इसपर तो महीनो से तबीयत आई थी। इसे तो जरूर ही रुपये देगा वह। तब फिर ? लौंडियो को हथियार बनाना चाहिए। मा का दिल लूटने के लिए सबसे अच्छा यही

तरीका होता है। करें क्या? खिलाओ सुसरियो को। बस, यही ठीक है। मास्टर बाबू की गठरी मे अनाज मालूम पडता है। इसे ही उड़ाना चाहिए। मगर टटोल तो लिया जाए। देखें, अनाज है या और कुछ।"

नूरुद्दीन ने फावडा रख दिया। हाफने लगा, जैसे थककर चूर-चूर हो गया हो। दूसरा आदमी उठा। आप पाचू के पास बैठ गया। बातो-बातो मे बहाने से गठरी पर हाथ रखकर टटोल देखा, चावल है। सोचा—"उडाना चाहिए। ऐसे तो हाथ नही आएगा। तिकडम करें। लडकियो को उकसा दें। पढे-लिखे तो बेवकूफ होते ही है। रहम-दया बहुत रहती है इनमे। और जिसमे मास्टर बाबू तो बस मोम का दिल रखते हैं। चाद और रुकिया को उकसा दें कि मास्टर बाबू चलने लगें तो पैरो से लिपट जाए, खाना मागें। बस, फिर गठरी मैं धरवा ही लूगा। मगर समझो कि न पसीजें तो? यकीन तो नही होता। अगर ऐसे ही पत्थर-से बन गए होते तो यो लाश लेकर न आते। नही, दाव खाली न जाएगा। अल्ला ने चाहा तो कौडी चित्त ही पडेगी। और जब वह आएगी तो ताज़े गम मे यह तसल्ली बडा काम देगी। बस, फिर काबू मे आएगी। मगर ये लडकिया इन्हे साथ ले जाना तो बेवकूफी होगी। लेकिन इन्हे उससे अलग कैसे किया जाएगा? खैर, यह फिर सोच लेंगे। अभी तो मास्टर बाबू की गठरी "

नूरुद्दीन ने झट से एक लम्बी आह छोडी। पाचू की तरफ देखकर बोला—"इसकी बीवी बेचारी मसजिद मे नमाज पढने गई है। घर लौटकर देखेगी तो (गला भर आया। आसू पोछने के बहाने कमीज के पल्ले मे मुह छिपाकर दो एक सुबकिया भी ले डाली) क्या बताऊ, मास्टर बाबू खुदा जाने क्या-क्या दिखाने वाला है आगे। अभी थोडी देर पहले तो मैं मुनीर को दो रुपये देकर गया था। आप लोग तो राजा आदमी हैं। मेरी तो कोई औकात ही नही, पर अपनी-सी हालत सबकी जानता हू। दस रोज़ खाने को न मिला। मा बिचारी मर गई। घर-जमीन बेचकर रुपये लाया था, सो उसमे से पहले इसे दो रुपये निकालकर दे दिए। पर

पाचू स्तब्ध। अपने जीवन मे मुनी[illegible]

वह देख रहा था। जिस त[illegible]

तो वह हाथ सुन्न पड जाता है, उसी त[illegible]

इस समय तक पूरी तरह से [illegible]

लाश के स्थान पर वह अपनी लाश दे[illegible]

बात उसके मन की ऊपरी सतह को छूती हुई, [illegible]

जैसे उसके मर जाने के बाद उसकी तथा उसके प[illegible]

नूरुद्दीन किसी दूसरे को सुना रहा हो।

पाचू मुनीर की लाश की तरफ देखता रहा। उस[illegible]
देख रहा था। गड्ढा खुद गया। बगैर कफन के लाश दफ[illegible]। मिट्टी पड रही है। पाचू की लाश पर मिट्टी पड रही है। पा[illegible] देख रहा है। लाश है। ढक रही है। मिट्टी का बोझ लाश पर पड़ता जाता है। लाश अब दिखाई नही देती। गड्ढा भर रहा है। मुनीर की लड़कियो के रोने की आवाज उसके कानो को सुनाई दे रही है। नूरुद्दीन का जोर-जोर से आहे भरना भी वह सुन रहा है।

गड्ढा भर गया। लोग फावडे और पैरो से मिट्टी दबा रहे है।

मुनीर इस ससार से चला गया। मुनीर अब ससार मे दिखाई नही देता। मुनीर ने उसके स्कूल की बेंचें बनाई थी, ब्लैक-बोर्ड बनाया था। मुनीर हसता था, बोलता था, चलता-फिरता था, काम करता था। थोडी देर पहले तक उसका शुमार 'है' मे किया जाता था, अब 'था' मे किया जाएगा। एक कहानी बन गया। कालिदास था, शेक्सपियर था, अकबर, सीज़र, चन्द्रगुप्त था। मुहम्मद था, ईसा था, बुद्ध था, राम, कृष्ण—

मुनीर था, पाचू था। यह अकाल इस देश को कहानी ही बनाकर छोडेगा। लोग कहेगे, एक सूवा था, जिमका नाम वगाल था।

अपनी बुद्धि पर पाचू मन ही मन सदा से अभिमान करता आया है, पर इस समय उसे अपनी महामूढता पर तनिक भी अविश्वास न था। वह खुद अपने से चिढा हुआ था।

मुनीर की पितृ-हीना लडकियो का करुण विलाप सुनकर अपनी असमर्थता पर मन ही मन आसू बहाकर उसने सतोष कर लिया था। नूरुद्दीन तथा तीन-चार अन्य लोगो से अपनी उदार प्रकृति, दरियादिली, और दान के मोहक बखान सुनकर भी उसे अपने भूखे परिवार का ध्यान रहा था। जिस समय नूरुद्दीन कह रहा था—"आप राजा आदमी हैं मास्टर बाबू, दो मुट्ठी इसमे से निकालकर दे देंगे, तो आपको जरा भी न अखरेगा और इन बेचारियो का गम गलत हो जाएगा," उस समय तक पाचू का स्वार्थ उसे इतना कस चुका था कि उसे अपनी गठरी मे से एक दाना देना भी असम्भव-सा प्रतीत होता था।

लोगो ने जब यह कहा कि तुम्हारे यहा तो मनो अनाज होगा, तुम गाव के इतने बडे आदमी हो, तुम यह हो और तुम वह हो, उस समय पाचू मन ही मन (सस्कारवश) यह सोचकर प्रसन्न हो रहा था कि गाव वाले उसे बहुत अमीर आदमी समझते है।

यह प्रसन्नता पाचू की सहृदयता का पोषण कर रही थी। वह अपने मुह से यह नही कह सकता था कि वह भी अपने पूरे परिवार के साथ-साथ चार दिन से भूखा है, और बडी मुश्किलो से उसे यह पाच सेर चावल मिले हैं। उसे बडा आदमी समझनेवाले गाव के लोग अगर उसकी असलियत जान जाएगे तो आबरू चली जाएगी। पर उसने सोचा, चावल न देने से भी तो बदनामी होगी। होने दो। यह लोग ज्यादा से ज्यादा यही तो कहेगे कि दयाल और मोनाई की तरह मास्टर बाबू भी

कठोर है। इस हालत मे भी उसका दर्जा दयाल और सोनाई के बराबर ही रहेगा।

तभी नूरुद्दीन की एक बात ने सहसा उसकी बुद्धि को झटका दिया—"मुर्दे से छुआ हुआ अनाज ब्राह्मन होके घर कैसे ले जाओगे मास्टर बाबू, और वह भी मुसलमान का मुर्दा! तुम्हारे तो किसी काम का नही रहा। इन लडकियो का पेट भर जाएगा।"

तर्क अकाट्य था। पाचू जैसा प्रतिष्ठित कुल का ब्राह्मण मुसलमान मुर्दे के स्पर्श से अपवित्र चावल चार लोगो की जानकारी मे कैसे ले जा सकता है। धर्म और जाति जाएगी, आबरू जाएगी।

पाचू के मन का विद्रोह स्वय उसे ही खाए जा रहा था। उसने चावल दिया ही क्यो? उसे शर्म क्यो आई? क्या यह शर्म, यह आबरू और धर्म का यह भय, उसे और उसके परिवार को इस अकाल की मौत से बचा लेंगे।

पाचू खाली हाथो घर की तरफ जा रहा था। अधेरा हो चुका था। कहीं-कहीं एकाध घर मे दिये की टिमटिमाती हुई रोशनी झलक जाती थी। इन घरो मे आबरू अभी भी पूरी तरह सुरक्षित थी। पाचू ने अपने घर मे भी रोशनी देखी। उसके विचार ठिठके, पैर ठिठके। वह खाली हाथो घर जाएगा। सब लोग आस लगाए बैठे होगे। कनक बेजान-सी पडी होगी। दीनू-परेश भूख के मारे बिलख रहे होगे। सारा घर भूख से व्याकुल होगा।

पाचू की कल्पना प्रखर होने लगी, वह खाली हाथो घर पहुचेगा। सारा घर एक बार तो उसका स्वागत करेगा, पर दूसरे ही क्षण ?

पाचू लौट पडा। घर जाने की हिम्मत नही हो रही थी। वह अपने आत्मीयो को भूख से तडपते हुए नहीं देख सकता, और जब कि वह स्वय उनके इन दुःख का कारण हो। उसकी मूर्खता के कारण ही उसके सारे

परिवार को तड़पकर मरना होगा।

पीड़ा और क्रोध से उसके पैरों की निरुद्देश्य गति और भी अधिक शिथिल हो गई। पाच सेर चावलों की गठरी लेकर आते वक्त उसमें उत्साह था। पाच सेर चावलों की गठरी के वज़न ने मुनीर की लाश को उसके घर तक पहुचाने के लिए उसे जो शक्ति प्रदान की थी, वह इस समय छिन चुकी थी। चार दिन की भूख, निराशा और कमज़ोरी के साथ ही साथ लाश उठाने और ले जाने की थकान उसे इस समय तक अत्यधिक अशक्त कर चुकी थी। और उसके ऊपर से ताज़ी चोट, यह आत्मग्लानि और निराशा उसे चक्कर आ गया, उसके पैर लड़खड़ाए—बड़ी मुश्किल से उसने अपने को गिरने से बचाया।

पाचू के आस-पास, कुछ दूर पर उसीकी तरह जीवित ककाल डोल रहे थे। उसे उनसे घृणा हो गई। उसे अपने से घृणा हो गई। उसे तमाम अकाल-पीड़ितों से घृणा हो गई। उसे मरे हुए मुनीर से भी घृणा हो गई। कम्बख्त को उसके ही रास्ते में आकर मरना था! और अगर मरना ही था तो किसी दूसरे वक्त न मरा—जब वह चावल लेकर आ रहा था, तभी साले को मौत आई!

पाचू को मुनीर की लड़की पर क्रोध आ रहा था, नूरुद्दीन पर क्रोध आ रहा था, उन शास्त्रकारों पर क्रोध आ रहा था जिन्होंने शव को छूने से उसकी पाव सेर चावलों की गठरी के अपवित्र हो जाने का विधान बनाया। उसे अपने ब्राह्मण और आबरूदार होने पर क्रोध आ रहा था। नपुसक क्रोध के कारण पाचू की आखों से आसू बहने लगे। पर इस बार उसे अपने आसुओं पर क्रोध न आया। उसे इस समय रोने में ही शान्ति मिल रही थी।

आसू ज़ोर पकड़ने गए। अपनी हीन और असहाय अवस्था के ध्यान से रह-रहकर पाचू के अह को चोट लगती। रह-रहकर पीड़ा के दौरे-से उठते, जिससे उसका मानस तूफानी समुद्र की तरह उमड़ने लगता। आसू हुमड़-हुमड़कर आखों से बहने लगे।

पाचू फूट-फूटकर रो रहा था। सुबकिया सास खीच-खीचकर उठने लगी।

पाचू के पैरो मे दम न था। वह वही, खेतो के पास ही जमीन पर धम्म से बैठ गया। मन मे राम-राम की रटन थी। नि सहाय अवस्था मे वह 'निर्वल के वल राम' से सहारे की प्रार्थना कर रहा था। अज्ञात शक्ति के नाम का सहारा पाचू को धैर्य धारण करने मे सहायता देने लगा। आसू रुके, सुबकिया खत्म हुई। आखे खुश्क हुई, दो-एक सर्द आहे दिल से निकली।

मगर फिर चिन्ता—"आखिर इस तरह से वाहर भी कव तक रहा जा सकता है। मुनीर के यहा चावल दे आने की वात भी शायद घर मे सवको मालूम हो चुकी होगी। मैं अव तक नही पहुचा, इससे और भी चिन्ता होती होगी। लेकिन खाली हाथो—घर मे अधेरा और मसजिद मे दिया वालकर "

तभी, अचानक ही, उसे खयाल आया, स्कूल का कुछ फर्नीचर मोनाई के हाथ वेचकर वह उससे चावल खरीद सकता है।

विचार ने उसे एकदम स्फूर्ति दी। नया उत्साह आया, नया वल आया। पाचू एकदम से उठ खडा हुआ। मोनाई के घर की तरफ चला।

रास्ते मे वह सोच रहा था, स्कूल की चीजें वेच देने का उसे हक ही क्या है? वह उसकी निजी सम्पत्ति तो है नही। लेकिन कौन पूछता है? और फिर उससे? अगर वह चाहे तो सारा स्कूल ही उठा के वेच दे। उसने ही तो इस स्कूल को वनाया है। इसकी एक-एक ईट मे उसके जीवन का त्याग छिपा है। दिन और रात एक करके उसने ही ये चीजें इकट्ठा की। और वही इन्हे वेच भी देगा।

आत्मा कह रही थी, यह चोरी है। पर आत्मा के इस उपदेश पर इस समय उसे झुझलाहट आ गई। वह खाएगा क्या? उसका परिवार भूखा रहेगा? ये आदर्श, धर्म, पाप-पुण्य, सव पेट-भरे की लीला है। अकाल पडने पर विश्वामित्र ने भी डोम के घर मास चुराकर खाया था। उन्होने

तो बाहर चोरी की थी, वह तो अपने ही स्कूल में चोरी करेगा। दरअसल यह चोरी है ही नही। दीमकें लग गई हैं। अगर ये डेस्कें वगैरह ज्यादा दिन तक स्कूल मे रही तो तमाम स्कूल को खा जाएगी। इन डेस्को को न बेचने से सैकडो रुपयो की स्कूल-बिल्डिग नष्ट हो जाएगी।

डेस्कें बेचने के पक्ष मे यह दलील पाचू को मन ही मन और भी अधिक उत्साहित कर रही थी। अपने-आपको इस सफाई से धोखा देने के कारण उसे इस समय अपनी बुद्धि पर घमण्ड हो रहा था। सारा घर भूख के भूत से छुटकारा पा जाएगा। और इस बहाने तो जरूरत पडने पर एक-एक, दो-दो करके स्कूल की बहुत-सी चीजें बेची जा सकती हैं। इस तरह वह अपने परिवार के साथ बहुत दिनो तक अकाल से लड सकता है।

मोनाई का घर दस कदम पर सामने था। पाचू ठिठका—स्कूल की डेस्कें बेचने की बात वह मोनाई से कैसे कहेगा? मोनाई उसके बारे मे क्या सोचेगा? मोनाई उसका बडा अदब करता है। आज उसकी आखे सदा के लिए मोनाई के सामने नीची हो जाएगी। घर की बात खुल जाएगी—उसकी चोरी खुल जाएगी। हा, चोरी तो यह है ही। पब्लिक के पैसे का अपने लिए उपयोग करना। मोनाई अगर यह सवाल कर बैठा तो?

सारा जोश ठडा पड गया। निराशा सिर मे चक्कर बनकर छाने लगी। लेकिन वह लडखडाया नहीं, हिला-डुला तक नही, पत्थर की मूर्ति की तरह निश्चल, स्तब्ध खडा रहा। उसकी आखो के आगे तारे छूट रहे थे, और कुछ भी नही सूझ रहा था—कुछ भी नहीं। उस क्षण वह चेतना-शून्य हो गया था।

"अहा! मास्टर बाबू हैं?"

पाचू के कानो मे मोनाई की आवाज पडी। जोश ने फिर से उसे अपने कब्जे मे लिया। पाचू चौंका। देखा, मोनाई अपने घर के दरवाजे पर खडा था।

"कहो, इस वक्त यहा कैसे?"

"कुछ नही। अरे यो ही चला आया।"

मोनाई पास आया। बोला—"मुनीर बेचारे की मिट्टी ठिकाने से लगा दी तुमने। दूसरा कोई होता तो नज़र भी न डालता।"

पाचू चुप। वह सोच रहा था, अपनी बात मोनाई से कहे कि न कहे।

मोनाई उसे चुप देखकर आगे बढा—"सुना, बेचारे की लडकियो को चावल भी दिया है तुमने ? नूरू जस गा रहा था तुम्हारा। बडा धरम करते हो मास्टर बाबू! नही तो आजकल का ज़माना! गोपीकृष्ण, कोई किसीका नही। भगवान जी ने क्या ज़माना दिखाया है! राधे-राधे, कैसे नैया पार लगेगी!"

मोनाई ने एक नि श्वास छोडी। पाचू ने भी एक नि श्वास छोडी—वह मोनाई से अपनी बात कहने का विचार त्याग रहा था। कैसे कहेगा, यही सबसे बडी उलझन थी, यही उसके त्याग का कारण था। लेकिन घर-भर भूखा मरेगा। तो फिर

मोनाई की व्यावहारिक बुद्धि भापने लगी। चेहरे का भाव पढना चाहता था, अधेरे मे दिखाई नही पड रहा था। हाथ जोडकर बोला—"जब यहा तक आए हो तो मेरे घर मे भी अपने पैरो की धूलि डालते जाओ। आओ न।"

मोनाई के पीछे-पीछे पाचू चला। दहलीज़ मे चारपाई पर बैठाकर, लालटेन की रोशनी मे, मोनाई बाते करने लगा। आप नीचे ज़मीन पर बैठा, पाचू को मान दिया। मास्टर बाबू आए किसी पेच से है, मोनाई ताडने लगा, लेकिन मौका साधकर पाचू से ही दिल की बात निकलवानी है। दम देने लगा—"और इखबार मे आज क्या-क्या खबरें हैं, मास्टर बाबू ? लडाई की क्या खबर है ? भाव कुछ और चढेगा ?"

पाचू को मोनाई से घृणा हुई। स्वार्थी अभी और भी लूटना चाहता है। गाव वालों की लाशें भी खा जाएगा क्या ? घृणा व्यग्य बनकर फूटी—"खबरें क्या, चादी है तुम्हारी।"

बुद्धू की तरह मोनाई ने हाथ मलते हुए खीसें निपोरी—"हे हें हे।

चादी क्या मास्टर बाबू, मेरा तो जी कलपता है। गीता जी मे जो अरजुन जी ने भगवान जी से कहा था कि जब अपने ही न रहेंगे तो तीन-तिलोक का राजपाट लेके मैं क्या करूगा, सो ही गत अपनी है मास्टर बाबू। कठी की कसम, दिये तले बैठा हू, झूठ नही कहूगा। मुह मे कौर नही दिया जाता। पर भगवान जी ने कहा है कि करम करो अपना, मरना-जीना सिसार का धधा ही है। बस, यही सोचके (आह भरी) राधे, राधे!"

देखा, पाचू अब भी चुप है, खोया हुआ है। बोला—"आज बहुत उदास हो, मास्टर बाबू। अरे, मुनीर का गम न करो ज्यादा। आया था, चला गया। देखो, परभू जी की लीला! मुझसे आठ आने का चावल खरीदा, मैंने उसे ज्यादा तोलकर दिया। मेरी आदत गुपत दान करने की है, मास्टर बाबू। पर सो भी उसके भाग मे नही था। कौडी-कौडी पर मोहर है, भगवान जी ने सच कहा है। लेकिन वो तुमने, मास्टर बाबू, चावल कहा से खरीदा था?"

"दयाल बाबू के यहा से।"

"हा!" मोनाई ने गम्भीर होकर एक पल के लिए सिर झुकाया। फिर पूछा—"क्या भाव दिया?"

गए हुए की बात पूछ रहा है कम्बख्त! जले पर नमक छिडक रहा है। पाचू बेरुखी से बोला—"क्या करोगे भाव पूछकर? तुम सब एक ही थैली के चट्टे-बट्टे तो हो।"

"नही बाबू, फरक है," मोनाई जोर देकर बोला—"जमीदार बाबू से दो पैसे कम पर दूगा। तुम घर के आदमी हो, जितना कहो, उठाकर दे दू।"

पाचू खुश हुआ। उसे लगा जैसे मोनाई ने सचमुच ही उसके आगे चावल की बोरिया लाकर ढेर कर दी हो।

मोनाई अपनी धुन मे कहे जा रहा था—"ये जमीदार बाबू अब हमसे काट करने लगे है। इन्हे अब यह डर लगता है कि मोनाई अब आधे का साझीदार बन गया है। अरे, इन्होने सरकार का यूनन बोट बुलवाया है

यहा। अपना धान सीधा सिरकार मे ही वेचा। अढतिये को एक पैसा लिया-दिया नही। और अव इस काट मे हैं कि यूनन वोट से दस रुपये मन के भाव से विकवाएगे, जिसमे मैं चौपट हो जाऊ। पर इन्हे यह पता नही है कि मैं भी केवट का वच्चा हू। वो फास मारूगा कि ज़मीदार वावू देखते ही रह जायगे। हा!"

मोनाई ने दभ के साथ पलथी वदली और अन्दर के दरवाज़े की तरफ मुह करके आवाज़ लगाई—"अरे न्याडा रे, ज़रा चिलम तो ले आ वेटा।"

पाचू के मन मे फिर आशा जगी। तिकडम और दाव-पेच के अखाडे मे खुद भी कुछ कर दिखाने की तवीयत हुई—"अरे, मैं जानता हू मोनाई। दयाल वावू क्या खाके तुम्हारा मुकावला करेंगे। और मुझे क्या मालूम नही है, इस वक्त तुम्हारी हैसियत उनसे ज्यादा है।"

मोनाई के मक्खन लगा। गद्गद हो कर पाचू के पैर छुए और वोला—"सव भगवान जी की दया है, मास्टर वावू। मोनाई केवट ने जव से कठी ली तव से किसी वामन, साधू और गोमाता का वुरा नही चेता, मास्टर वावू। सत्त कहता हू तुमसे! फिर मेरा वुरा कौन चेत सकता है?"

"ठीक है। ठीक कहते हो।" पाचू ज़रा उत्साह मे था—"वडा दया-धर्म है तुम्हारे मन मे। मैं क्या जानता नही हू।"

मोनाई का हुक्का लेकर न्याडा आया। देखा, मास्टर मोशाय वैठे हैं। हडवडाकर हुक्का रक्खा, और पाचू के पैर छुए।

शिक्षक का अभिमान जागा। रौव से पूछा—"क्यो रे, आज स्कूल नही आया तू?"

न्याडा सकपका गया। वाप वोला—"मैंने ही नही भेजा था इसे। आज दो दिन से इसकी मा ज़रा वीमार है। हे हें, कुछ भगवान जी की दया होने वाली है घर मे—हे हें।"

खुशामदाना तौर पर उल्लसित होकर पाचू वोला—"अच्छा, कव?"

"अभी तो दिन हैं। छठा महीना है। वाकी सिर भारी रहता है

आजकल उसका—सो लड़के से बढ़कर मा की सेवा और कौन कर सकता है, मैंने सोचा।"

यह मोनाई की तीसरी पत्नी है। न्याडा दूसरी का है। सौतेली मा ठहरी, बूढ़े की जवान बीवी। बेटे से डटकर सेवा कराती है।

मोनाई न्याडा की तरफ देखकर बोला—"जा रे, मा के पास जाकर बैठ। और वही बैठकर पढ।"

न्याडा सिर झुकाए चला गया। कश खीचते हुए मोनाई बोला—"ये न्याडा एक बार बीए पास हो जाए, बस! भगवान जी! अब तो तुम्हारा स्कूल बन्द ही हो गया समझो। आहा! तुमने भी क्या चमत्कार कर दिखाया मास्टर बाबू! गाव की सात पीढी मे तुम्हारे जैसा कोई नही हुआ। सत्त कहता हू।"

पाचू ने एक नि श्वास छोडी, बोला—"हा, पर अब दीमकें सारी डेस्कें चाटे डालती है।"

"राधे, राधे! मेरी मानो तो कुछ कहू।"

पाचू चौंका। शायद अब बात बन जाए। उत्साहित होकर बोला—"कहो, कहो!"

"मेरे हाथ बेच डालो न लकडी का सामान। दीमकें चाट डालें उसमे फैदा? अरे, अकाल के बाद तुम्हे बिचें यो ही बनवानी पडेगी। यों स्कूल के खाते मे पचीस-पचास दिखा तो सकोगे।"

बिल्ली के भागो छीका टूट रहा था, पर अभी एक मजिल और थी—आज का चावल। पाचू अब तो गगा के किनारे आ ही गया था। प्यासा हरगिज नही लौटेगा—"कहते तो ठीक हो। पर "

"पर," मोनाई ने पर निकाले, बोला—"मैंने तो स्कूल के भले की बात कही थी, बाकी मैं जोर नही देता। मुझे गरज नही है। सत्त कहता हू।" मोनाई सत्य कहकर हुक्के मे लवलीन हो गया।

पाचू का नशा उतरा। बात बनते-बनते बिगड न जाए। हडबडाकर खुल पडा—"नही, मुझे इनकार नही। लेकिन बात ये थी कि तुम तो

जानते ही हो, लूट मार का जमाना है, इसलिए घर मे पैसा-कौडी नही रखते। ढाका के बैंक मे जमा है। और इस वक्त अ हाथ जरा तगी मे आ गया है। तुम तो समझते ही हो, यह स्कूल बन्द हो गया और "

मोनाई ने हुक्का गुडागुडाते हुए ? समझदारी के पूरे बोझ से गर्दन हिलाते हुए कहा—"सब समझता हू, मास्टर बाबू ! मोनाई केवट ने भी अंधेरे-उजाले दिन देखे हैं। मैं चावल देने को भी तैयार हू।"

पाचू ने देखा, मोनाई ने नस पकड ली। बडी झेंप मालूम हुई। बात बनाने के लिए रौब जमाया—"हा, अभी तो ले ही लूगा। पर यह रकम तुम उधार ही समझो। जो तुमसे फर्नीचर बेचकर पाऊगा, उतनी रकम बैंक से लाकर खाते मे जमा कर दूगा।"

बात कहते-कहते पाचू ने खुद ही महसूस किया कि वह बगैर जरूरत के सफाई दे रहा है। मोनाई ने एक बार गौर से पाचू के मुह की तरफ देखा, फिर गर्दन झुकाकर हुक्का गुडगुडाने लगा। उसने थाह का अनुमान किया। अनुमान पक्का करने की गरज से बोला—"अच्छी बात है, तो फिर दो-तीन दिन मे कभी चलकर लकडी देख लूगा। सौदा हो जाएगा।"

पाचू ने देखा, हाथ आए चावल फिर दूर खिसके जा रहे हैं। वह एकदम से अधीर हो उठा। मन का सत्य उबल पडा। घबराकर दीनता-भरे स्वर मे बोल उठा—"आज ही सौदा कर लो न मोनाई। घर मे चावल की एक कनी भी नही है। पाच सेर की गठरी मुसलमान का मुर्दा छूकर बरबाद कर दी। मैं धर्म-सकट मे पडा हू।"

मोनाई चुप। हुक्का गुडगुड कर रहा है। पाचू की आखें भिखारी बनकर एकटक मोनाई के चेहरे पर ही अडी हुई हैं। अपनी आबरू मोनाई के हाथो समर्पित कर, वह उससे सरक्षण की भीख माग रहा है। पाचू अनुभव कर रहा है, वह गिर गया। सदा से पोषित उसका स्वाभिमान इस समय मिट्टी के खिलौने की तरह गिरकर चूर-चूर हो गया। इतना महान त्याग करने के बाद भी अगर मोनाई ने ना कह दी तो ? नही-नही, वह ऐसा न होने देगा। ऐसी नौबत आने पर वह मोनाई केवट के पैरो पर अपना

सिर झुका देगा। भूखे घर मे चावल की गठरी के साथ प्रवेश करने के लिए वह आज हर तरह का अपमान सहने के लिए तैयार है।

तभी मोनाई हुक्का सरकाते हुए बोला—"मैं अभी ही तुम्हे दस-पाच सेर दिए देता हू। इस वखत का काम चलने दो, फिर पीछे हिसाव-किताव कर ले-दे लिया जाएगा। कोई फिकर मत करो।" यह कहकर मोनाई उठा। अन्दर जाते-जाते दरवाज़े पर ही ठिठककर बोला—"इसकूल की कुजी न हो, मुझे ही दे दो मास्टर वावू। रातोरात वेंचे निकलवानी होगी, जिसमे तुम्हारी इज्ज़त पर कोई आच न आने पाए।"

मोनाई की इस आत्मीयता ने तो पाचू का हृदय जीत लिया। फौरन ही तालियो का गुच्छा निकालकर मोनाई को दे दिया—"मेज़ो मे जो कागज़-पत्तर और रजिस्टर वगैरह है, उन्हे तुम मेहरवानी करके अपने सामने ही करीने से अलग रखवा देना। समझे।"

पाचू के स्वर मे अत्यधिक दीनता थी।

मोनाई तालियो का गुच्छा लेते हुए वोला—"तुम निसाखातिर रहो। मैं अभी दस सेर चावल लाए देता हू।"

मोनाई अन्दर चला गया। वह खुश था, भगवान जी ने वैठे-वैठे ही ये पचास-साठ रुपये का फायदा करा दिया। दस सेर चावल दे के सारी वेंचें अपनी। फिर कोन देता है, कौन लेता है? मास्टर वावू की नजर तो उठेगी नही उसके सामने—"भगवान जी, तुम धन्न हो! राधे, राधे!"

और पाचू सोच रहा था—"भगवान वडा दयालू है। पाच सेर दिए, दस सेर पाए। और भी आगे मिलेगा। दो मन तो मिल ही जाएगा, कम से कम मोनाई देवता है। वडे आडे वक्त काम आया!"

४

वडी किफायत के साथ, आधा-चौथाई पेट [illegible], [illegible] चावल चार दिन मे निवट गए। पाचू मोनाई से [illegible] [illegible]। [illegible] ने अब तक शायद स्कूल का फर्नीचर औने-पौने [illegible] [illegible]। [illegible] सोचा—"चलकर मोनाई से हिसाब समझ लिया जाए। [illegible] काइया, दस के दो टिकाएगा। पर जो कुछ भी [illegible] [illegible] ही वडी रकम समझो। अडतालीस वेंचें और इतनी ही [illegible]। [illegible] कम पचास तो देगा ही। न सही पचास, चालीस ही दे। [illegible] चावल आ जाएगा। एक महीना तो आनन्द से [illegible]। [illegible] माल तो ज्यादा का है। दो मन न सही, डेढ मन चावल तो [illegible] मे मिलना ही चाहिए। यो तो आज कट्रोल का ढिंढोरा भी पिट गया। उसके हिसाब से तो उसे दस रुपये मन बेचना पडेगा। पर [illegible] सरकारी हुक्म मे भी वह कोई पख लगा दे। पक्का 'चार सौ बीस' है ये मोनाई। खैर! मैं उसके नकद रुपये ले लूगा। मोनाई कहता ही था—दो-एक रोज मे यूनियन वोर्ड का चावल आने वाला होगा। तब तो चालीस रुपये मे चार मन चावल मिलेंगे। ठाठ से चार-पाच महीनो तक मूछो पर ताव देकर डकार लेंगे। आगे फिर राम मालिक है। अरे हा, जिसने मुह चीरा है, वही खाने को भी देगा।

दूसरे ही क्षण पाचू को यह कहावत निस्सार जचने लगी। इतने मर गए, और भूखो ही मरे। लोगो ने व्यर्थ ही ईश्वर को इतना दयालु समझ रक्खा है। ईश्वर कहा है? क्या वह घट-घट व्यापी, अतर्यामी, अपनी आखो मे इन भूखो मरते हुए लाखो निर्दोष जीवो को नही देख पाता? अगर वो है तो उसने ही इन सबो के मुह भी चीरे है, लेकिन इन्हे खाने को नही देता!

× × ×

पाचू की आखो के सामने जीवित ककाल—मर्द, औरते, बच्चे अपने कमजोर तन की सारी स्फूर्ति को वटोरकर दौडते हुए चले जा रहे थे। उनकी गड्ढो मे धसी हुई आखो मे आज खुशी की चमक थी, सूखी हुई हड्डियो मे आज उत्साह नज़र आ रहा था। किसीके हाथ मे फटे चिथडे है, कोई एलुमुनियम या पीतल-तावे के घिसे-घिसाए वर्तन लिए हुए मोनार्द की दुकान की तरफ भागा जा रहा है। चारपाई के पाये, हल के फाल, मछली पकडने के जाल और काटे, वढई और लुहारो के औजार—जिसके घर मे जो कुछ भी वचा था उसे लिए हुए वह दौडा चला जा रहा था।

आज गाव मे कट्रोल का ढिंढोरा पिटा था। दुअन्नी-चवन्निया भी आज अरसे वाद चावल खरीदने मे समरथ हुई है। अव अकाल के पाव उखडे। सरकार मे सुनवाई हो गई। सुना है, कुछ दिनो वाद अनाज मुफ्त मे वाटा जाएगा। अव फिर से अच्छे दिन वहुरेगे। इस वार ईश्वर ने चाहा तो फसल पहले से भी अच्छी होगी। जव कटेगी तो सारा देश फिर से स्वर्ग वन जाएगा।

कट्रोल का आर्डर मौत से लडती हुई इन ज़िदा लाशो मे फिर से ताजगी ले आया है। पाचू सोच रहा था—"हमारे देश के निवासी कितने सरल हृदय के हैं! उन्हे खुश करने के लिए सिर्फ वहाना ही काफी होता है। एक लगोटी और मुट्ठी-भर अन्न तक ही उन्हे स्वर्ग के सुखो की चाह है। उन्हे न मोटरें चाहिए, और न महल। पाचू को याद आया, एक दिन दयाल वावू ने स्कॉच व्हिस्की की एक दर्जन वोतलें मगवाने के लिए एक आदमी को खास तौर पर कलकत्ते भेजा था। मगर अस्सी रुपये फी वोतल तक खर्च करने के लिए तैयार होने पर भी व्लैक मार्केट मे न मिली। दयाल वावू कितने परेशान नज़र आते थे! कितने दर्द के साथ कहा था—"देखिए मास्टर वावू, क्या ज़माना आ लगा है! अस्सी रुपये खर्च करने पर भी स्कॉच नही मिल रही!'

"दयाल ज़मीदार को शराव की एक वूद तडपा रही थी, और दयाल की प्रजा को चावल की एक कनी। कैसा विचित्र साम्य था! उसके

कुछ दिनो के बाद जब कट्रोल से तीस रुपये पर स्कॉच मिलने की खबर दयाल बाबू को मिली थी, तब वे कितने उत्साह मे आए थे। आज चावल पर कट्रोल हुआ है। प्रजा का उत्साह देखो। मोनाई का उत्साह देखो।"

मोनाई की दूकान के आगे भीड लगी हुई थी। कान पडे बात न सुनाई देती थी। नाक पर चादी की कमानी का चश्मा चढाए मोनाई एक-एक चिथडे-गुदडे को उपेक्षा के साथ देखते हुए उनकी परीक्षा मे व्यस्त था। अज़ीम पास ही बैठा हुआ इस कबाडखाने की प्रदर्शनी का हिसाब मोनाई के आदेशानुसार खाते पर टाकता जाता था।

मोनाई की दूकान से दस कदम दूर, बाये मोड पर एक पेड था, जिसकी पत्तिया इसान के पेट की आग को बुझाने के काम आ चुकी थी, जिसकी कई डालें इसान की भूख से उलझ कर टूट चुकी थी, और जिसका नगा ककाल भूखे बगाल का प्रतिनिधि बनकर मोनाई की दूकान के सामने गूगे गवाह की तरह खडा था। पाचू उसके नीचे खडा-खडा मोनाई की दूकान के सामने का तमाशा देखने लगा।

"दो कटोरे और एक धोती। ये धोती है? हि ससरी फोकट मे भी महगी है। लिख ले, लिख ले, ६ पैसे भोलू के नाम। साला कट्रोल का भात खाएगा।" कटोरे-वर्तनो और धोती-कपडो के ढेर पर फेकते हुए मोनाई ने अज़ीम से कहा।

अज़ीम की न रुकनेवाली कलम आगे बढी। सिर झुकाए हुए, लिखते-लिखते वह बोलता भी जाता था—"भोलू—६ पैसे।"

भोलू नाम के नर-ककाल की कापती हुई धीमी आवाज़ गिड-गिडाई—"पेट न भरेगा मोनाई। चार आने चार आने तो लिख लो। दस दिन के भूखे हैं।

मोनाई डपट पडा—"अबे तू भूखा है तो यहा कौन पेट भरके खाता है? तुम लोगो की दशा देख-देख के सास तक तो अमाती नही पेट मे। ६ पैसे कम हैं वे? सालो को जित्ता जादा दो उत्ता ही हाथ पसारेंगे।

भगवान जी ने गीता जी मे कहा है कि सतोख से काम लो, सो नही होता। हु! ये अलमुनिया का कटोरा और थाली · चार डबल पटन के नाम।"

बेचने वाले को सौदा करने का हक न था। खरीदनेवाला मनमाने दाम लगा रहा था। लोग जल्द से जल्द अपनी चीज़ें बेचकर चावल पाना चाहते थे। सत्तर-अस्सी आदमी खडे थे। मोनाई की दूकान मे कपडो का ढेर था, टूटे-पुराने बर्तनो का ढेर था, लोहा-लगड, मछुओ के जाल, चारपाई के पाये वगैरा जमा हो रहे थे। चावल कही भी नही दिखाई देता था। मोनाई का कैश-बाक्स भी वहा नही था। मोनाई बकता था, गालिया देता था, माल रखता था, और अज़ीम से चिट्ठे मे दाम टकवाता चलता था। सबके नाम लिखकर बाद मे पैसे वगैरह बाटे जाएगे, यह सबसे कह दिया गया था।

हर शख्स जल्दी मे था। हर शख्स यह चाहता था कि उसकी चीज़े पहले खरीद ली जाए। चिट्ठे पर अपना नाम और दाम टक जाने के बाद हर आदमी अपने चावल पाने के अधिकार को सुरक्षित समझता था। भूख की बेचैनी ज़रा देर के लिए बुझ-सी जाती थी। चिट्ठे पर नाम लिख जाने के बाद लोग दूकान से हटकर, आसपास ही धरती पर या तो लेट जाते थे, या दो-चार की टोली मे बैठकर बाते मठारते थे। कोई आठ, कोई दस, कोई बारह दिनो से भूख के शिकञ्जे मे अपने परिवार के साथ जकडा हुआ, पास आती हुई मृत्यु को भयानक, भयानकतर, भयानकतम रूप से देख-देखकर, भय और चिन्ता के जड-स्वरूप को अनुभव करते हुए शून्य से लड रहा था। पैरो तले दबी हुई चीटी की तरह, सत्ता के भार से दबा हुआ गुलाम इसान बडी ही मुश्किल से जीवन का मोह तोडकर, अन्तिम क्षण की प्रतीक्षा मे अपनी सारी मनोवृत्तियो को बडी लाचारी के साथ मृत्यु मे एकाग्र कर रहा था। कट्रोल की शह पाते ही वह मृत्यु के पजे मे जान छुडाकर भाग निकला। जीने के लिए अगर प्राणी को एक पल भी और मिल जाए तो इससे बढकर खुशी की दूसरी बात ही क्या हो

सकतो है ?

पेड के सहारे टिककर खडा हुआ पाचू यह तमाशा देख रहा था। अपनेपन को इन तमाम लडती हुई जानो मे लीन कर, एकात्म भाव से अपनी चेतना और बुद्धि को वह इस तस्वीर मे एकाग्र कर चुका था। हर आती-जाती शह के साथ उसकी निगाहे दौडती, दिमाग दौडता। शहर के राजनीतिक समाज मे पनपा हुआ बगानी, दिमाग मजबूरी की जजीरो मे गले-गले तक जकडे हुए, भूखे-नगे गुलाम (मगर इन्सान) की हालत पर गौर कर रहा था—"इसे अहिसा का आदर्श भी तो नही कह सकते। किसी योगी का मोहत्याग भी नही कहा जा सकता। कुत्ते-विल्ली की मौत!" फिर सोचा—"कुत्ते-विल्ली भी आसानी के साथ अपने पेट के हक से हटाए नही जा सकते। वे मरते-मरते भी अपनी पूरी ताकत और आवाज के साथ मौत वनकर सामने आने वाले हर जुल्म से डटकर मोर्चा लेगे। मगर हम तो भुनगो की मौत मर रहे है, न आवाज, न जोर !"

पाचू सोच रहा था—"क्या दुनिया के किसी देश, किसी कौम का आदमी अपने लिए यह मौत पसद करेगा ? फिर क्यो नही उसे अजाम का खयाल आता! वह क्यो यह भूल जाता है कि जो अत्याचार मनुष्य अपनी सत्ता के जोम मे किसी दूसरे पर करता है, वे ही उलटकर कभी उसके ऊपर भी हो सकते है ?"

पाचू तस्वीर को उलटकर देखने लगा। मोनाई की दूकान पर, समझो कि उसकी जगह पर नोलू, पटल, तिनकौडी या कोई भूख का सताया हुआ आदमी जवरदस्ती चढकर वैठ गया हो, और मोनाई को वह अपनी ही तरह दस-वारह रोज़ तक भूखा रखने के वाद चावल की आस दिला-दिलाकर ललचा रहा हो, उस हालत मे ककाल मात्र मोनाई किस तरह गिडगिडाया, परेशान होगा—इसकी कल्पना करने से पाचू को एक तरह की खुशी हुई। उसकी इच्छा होने लगी कि एक वार भूखा रखनेवालो को भूखे रखकर उनका तमाशा देखा जाए।

दयाल वावू, राय भुवनमोहन सरकार, मिस्टर जॉर्डन, लेडी चटर्जी,

लार्ड—पाचू की कल्पना हर एक 'बडे आदमी' की भूख से तडपते हुए चित्र देख-देखकर हिंसक आनन्द लूटने लगी। व्यक्तिगत सत्ता के लिए लडने-वाले एक बार भूख से भी तो लडकर देखें। दुनिया को राहत की नेमत बख्शने का दावा रखनेवाले ये बने हुए मसीहा खुद अपने पेट से भी तो एक सवाल पूछकर देखें—क्या वे पेट की गाली बर्दाश्त कर सकेंगे ? कोई कर सका है ? तब फिर वे किसी दूसरे को क्यो देना चाहते हैं, क्यो दे रहे हैं ?

थाली के पानी मे चाद को छूकर बहले हुए बच्चे की तरह घमड को उभारती हुई खुशी की तमक पाचू के चेहरे पर छा गई। अपने सामने अपने ही बडप्पन को ढील दे-देकर बढाते हुए, अपनी ही आवाज़ को वह एक महान आत्मा की वाणी की तरह सुन रहा था।

उस वक्त पाचू मास्टर का पेट भरा हुआ था। मोनाई से बेचो का हिसाब-किताब समझने के लिए आया था, सो यह भुखमरो का हिसाब सामने आ गया। उसके आस-पास, चारो तरफ, टोलियो मे जगह-जगह फैलकर बैठा हुआ जन-समूह चावल की आस मे, सतोष-सुख का स्पर्श पाकर बहक रहा था। यो तो, आजकल हर वक्त, हर रोज़ आदमी बहकता ही रहता है, मगर आज अरसे के बाद जरा खुशी मे बहका।

बीच-बीच मे चारो तरफ निगाह दौडाकर पाचू लोगो के चेहरो पर खुशी का अन्दाज़ा लगा रहा था। उसकी पीठ पीछे ही, पेड के पल्ली तरफ, केष्टो नन्दी अपने फटे हुए स्वर को अपनी पूरी ताकत खर्च करके, पुराने ज़माने की खुद अपनी ही बुलन्द आवाज़ के स्टैण्डर्ड तक ऊचा उठाने की कोशिश कर रहा था। कहावत थी कि केष्टो बोलें तो मीर घाट तक आवाज़ जाए। अपनी पूरी आवाज़ के साथ बोलने की कोशिश मे जल्दी-जल्दी हाफता हुआ केष्टो कह रहा था—"उसने मेरी बहन को घर से निकाल दिया। कह दिया, हमारे घर मे तेरे लिए खाने को नही है। कहा, भाई के जा, जब अकाल खतम हो जाए तो लौट आइयो। अरे पूछोऽऽ मैं भाई हू तो क्या तू उसका कोई नही ? एँ! धरम की मानो तो तू तो

उनका पति है—स्वामी ! तूने उसका हाथ पकडकर जीवन-मरन की गाठ बाधी। और जब विपता पडी तो वही हाथ पकडकर उसे घर से बाहर निकाल दिया। ऐ ! इससे बढकर नीचता और क्या हो सकती है ? उस वखत, सच्ची मानो निमाई, इत्ती घिरना हुई, कि देखो, आदमी कित्ता नीचे गिर गया है ! मन मे बडा वैराग उपजा, तुमारी कसम। इस सनमान से चित्त फट गया मेरा। मगर, समझे, निमाई ? उत्ती वेला अपना धरम करने से मैं भी नही चूका। चट-से मैंने भी उसी दम कुमू नोनी की मा को हात पकडकर घर से बाहर निकाल दिया। वो साला समझता होगा कि उसके निकाल देने से मेरी बहन का कोई ठिकाना न रहेगा। अरे, केष्टो नदी अपनी जान देके भी अपनी बहन को बचाएगा। मैंने गिन्नी से सफा कह दिया कि बिदो अपने भाई के आई है, तू अपने भाई के जा। चल निकल। मेरा बेटा समझता होगा कि वही अकेला अपनी गिन्नी को निकाल सकता है। अरे मैं उससे भी बटकर साढे सात हात का कलेजा रखता हू। केष्टो नदी अपनी आन का पक्का है—हाऽऽऽ!"

पाचू ने अनुभव किया कि अन्तिम वाक्य कहते हुए केष्टो नदी ने अपनी आवाज़ को खीच-खाचकर, किसी तरह अपनी बुलन्दी का फिर से नया रिकार्ड स्थापित कर ही दिया। वह सोचने लगा—"शर्म जब अपनी हद से गुज़रकर बेशर्मी बनती है, तब उसकी चेतना से बचने के लिए आदमी अपनी असलियत का ज़ोर-शोर से ढिंढोरा पीटकर उसे न्याययुक्त सिद्ध करता है। चेतना बेशर्मी का बाना छोड, न्याय और सत्य का अभिमान बनकर, इन्सान को हीनभावना की नज़रो से बचाती है। इस बात को वह अपने गाव के आदमियो मे इधर बराबर नोट कर रहा है। हर आदमी जिसके शरीर मे ज़रा भी ताकत है—और आबरुदार तो करीब-करीब सभी, एक किस्म की झूठी अकड की आड मे दर्द को छिपाए हुए मन ही मन मे मचल रहे हैं। खाने को मिलता नही। परिवार के पुरुष अपनी ज़िम्मेदारी को महसूस करते-करते, अपनी मजबूरियो का ध्यान करते-करते, पागल हुए जा रहे है। आखो के सामने देख रहे हैं—बच्चो की हड्डिया दिन-ब-

दिन चमकती जा रही हैं और मास सूखता जाता है। पसलियो के उभार मे पेट दबा चला जाता है। आखें घनी अधेरी कोठरी मे टिमटिमाते हुए दिये की तरह गड्ढो मे दिखाई देती हैं। हाथ-पैर सूखकर लकडी हो गए हैं। खाने की आस मरती जा रही है---और बच्चे भी। यह देखकर कौन ऐसा बाप होगा जिसकी मर्दानगी पर लानत न बरस जाती होगी। अपना और अपने आश्रितो का पेट न भर सकने की मजबूरी किसका कलेजा पकडकर न मसोस देती होगी ? वह अपने बच्चो का पेट नही भर सकता, अपनी पत्नी, बूढे मा-बाप, आश्रित भाई-बहनो को खाना नही दे सकता, वह खुद अपने को भी नही खिला सकता। और फिर भी वह जी रहा है। यही उसे खल रहा है।

जीवन की सबसे बडी असफलता का तमाचा खाकर इन्सान तिल-मिला उठा है। ईश्वर से लेकर अपने तक, वह हर एक के प्रति विद्रोह का भाव रखता है। जीवन की टूटती हुई डोर और जीवन के मोह मे बराबर खीचतान चल रही है। सुबह होती है, हर रोज़ आदमी अपने खयालो मे ताज़गी लेकर उठता है कि आज खाना मिलेगा—कही से अचानक कुछ करिश्मा हो जाएगा और सबके सामने खाने की थालिया आ जाएगी। जो कही ऐसा हो जाए तो चारो तरफ खुशी की लहर दौड जाए। गाव का चेहरा पलट जाए। "मोनाई का मू इत्ता-सा होके रह जाए कि अरे, मेरा अब माल कौन खरीदेगा ?"

आदमी दिन-भर अपने को आस दिला-दिलाकर बहलाता रहता है। ज्यो-ज्यो दिन ढलता है, रात आती है, उसकी उम्मीदो पर भी अधेरा मड-राने लगता है। वह गम्भीर और फिर चिडचिडा होने लगता है। मौत के आलम मे तारो को भूखी निगाहो से देखते हुए किसी दर्द-भरे की चीख बेसाख्ता कराह उठती है। अधेरी रात मे दूर-दूर तक चीखने और कराहने की आवाज़ें आती हैं। हिस्टीरिया के दौरे मे रोने-चीखने और इधर-उधर भागते हुए इन्सानो के साथ कुत्तो का शोर मौत की दहशत से लोगो का दिल हिला देता है। रात आखो मे कटती है, और धीरे-धीरे, चमत्कार

की तरह आनेवाले रुपहली उजाले की शह पाकर सूनी शाखो पर चिडिया चहचहा उठती है।

आस को टूटता हुआ देखकर आदमी चिडचिडा रहा था। भूख बेआसरा, बेसहारा हो गई थी। भूख का ध्यान छोडकर लोग किसी और तरफ अपना ध्यान लगाना चाहते थे, मगर उसके लिए भी कोई चारा न था। स्त्री और पुरुष का सम्बन्ध शारीरिक बल के साथ-साथ टूटता जा रहा था। बहुत उत्तेजना होने पर एक-दूसरे के शरीर से नोचा-खसोटी कर के हाफ जाते थे। यह पस्ती भूख की पस्ती के साथ-साथ दिल की आग को दुबाला करके भडकाती थी। मन के किसी पर्दे मे शारीरिक सुख का मोह होने पर भी, अपनी पूरी चेतना के साथ, मनुष्य स्त्री-पुरुष के शारीरिक योग से नफरत करने लगा था। कितने ही घरो से पत्निया निकाली गई, और कितनी ही पत्निया अपने पतियो को छोडकर चली गई। औरतो और छोटे बच्चो से रिश्ते टूटने लगे। मा-बाप, बहन-भाई भी खलने लगे। एक-दूसरे की सूरत देखते ही आखो मे खून उतर आता। हर आदमी यह सोचने लगा कि अगर दुनिया मे वही अकेला होता तो कभी भूखो न मरता। आदमी आदमी को अपना जानी दुश्मन समझने लगा। पडोसी और नाते-गोते के लोग तीन-तीन पीढियो की छोटी से छोटी बातो को याद कर एक-दूसरे से लडने के मौके खोजने लगे।

मध्यवर्गीय आबरूदार अपने दिल के गुबारो को आबरू की फटी चादर मे बाधकर, गाव-भर मे उसे बिखेरते हुए चलते। इनकी दशा और भी बुरी थी। नगे घूमने पर शातिपुरी धोती-जोडो की बातें करना, बाबाराज के छत्तीस पकवानो की चर्चा। हर एक आबरूदार के दादा या परदादा के यहा दयाल जमीदार का दादा या परदादा गुमाश्ता रह चुका था—भूख से तडपते हुए पेट को बडी-बडी बातो से बहलाकर अपने दर्द को दिल ही दिल मे कस रखने की हर कोशिश पानी की तरह बह जाती थी।

पाचू अपने ही घर मे देखता है, पास-पडोस मे भी देखता है, आदमी भूख से ज्यादा अपनी आबरू की रक्षा करने के लिए परेशान है। तरह-

तरह के उपाय सोचता है, और उसके सारे उपायों, मनसूबों पर पानी फिर जाता है।

हारान भट्टाचार्य के घर में तीन दिनों से फाके हो रहे थे। अपने घर के दरवाजे बन्द रखने पर भी उसे बराबर यही शक बना रहा कि दुनिया वालों को उसके यहा अकाल आने की खबर लग गई है। यह चीज उसे बराबर परेशान करती रही। तीसरे दिन एक उपाय सूझा। घर से बाहर निकला और लोगों से बात निकाल-निकालकर यह ज़ाहिर किया कि उसे बदहज्मी हो गई है और वह बाड़ुज्ये मोशाय के यहा चूरन लेने जा रहा है।

रिश्ते बेहद खल रहे थे। परेश घोषाल ने एक दिन अचानक ही अपने छोटे भाई और विधवा बहन पर अनैतिक संबंध का दोषारोपण कर दोनों को घर से निकाल दिया।

कानाई घटक के बाप मर गए थे। आबरू की रक्षा के लिए श्राद्ध करना ज़रूरी था। कानाई ने दयाल के एक समृद्ध गुमाश्ते परान हालदार से सौदा तय किया, अपनी पत्नी को ज़बर्दस्ती वेश्या बनने पर मजबूर किया। और जब परान बगैर पैसा-कौडी दिए हुए ही जाने लगा तो वह गुस्से से पागल हो गया। दोनों की गाली-गलौज और चीख-पुकार सुनकर मकान में आसपास के लोगों की भीड़ जमा हो गई। जिस आबरू को बचाने के लिए उसने अपने ही हाथों अपनी पत्नी की आबरू गवाई थी, वह देखते-देखते ही लुट गई। कानाई की भुखमरी पत्नी भीड़ से घिरी हुई अपनी लाज की लाश को यों सड़ते हुए देख रही थी। कानाई घटक को धक्का देकर जमीदार का गुमाश्ता परान हालदार भीड़ चीरकर चलता बना। कानाई आज पागल होकर घूमता है। पागलपन में वह किसीका नुकसान नही पहुचाता, सिर्फ अपनी आबरू की शेखी बघारता है।

हर एक के घर की कहानी हर एक को मालूम है। फिर भी आबरू की टूटी ढाल का सहारा नहीं छोड़ा जाता।

अस्सी प्रतिशत भले घरों की बहू-बेटिया मजबूर किए जाने पर, पैसा या खाने के लालच से, अथवा भूख और चिंताओं की उलझन में छटपटा

दो घडी गम गलत करने की नीयत से वेश्याए हो चुकी है।

जातिया सिर्फ नाम लेने के लिए ही रह गई है। वर्ण-भेद को कोई टके सेर भी नही पूछता। हिन्दू-मुसलमान का भेद मिट चुका है। सभी भूखे है, सबकी एक-सी ही हालत है। सब लोग दुनिया से परेशान नजर आते हुए भी दरअसल खुद अपने से ही परेशान हैं।

पाचू सोच रहा था, अगर उसके घर मे भी कभी बहुत दिनो तक अकाल पडने की नौबत आई तो क्या रिश्ते, आबरू, अपने-पराये का ममता-मोह, शील, विनय—क्या यह सब कुछ उसके घर मे टिक सकेंगे ?"

इस प्रश्न ने पाचू को मन ही मन चौंका दिया, दहला दिया। मन मे एक बार यह बात उठ आने पर इससे बचना भी पाचू को मुश्किल मालूम हो रहा था। इस नग्न सत्य के तेज को वह बर्दाश्त नही कर पाता था। वह अपने घर के हर आदमी को, दुनिया की रफ्तार देखते हुए, आने वाले समय के तराज़ू पर तौलने लगा।

सबसे पहले उसका ध्यान शिबू की ओर ही गया। घर मे जो कुछ भी बुराइया आएगी तो वह दादा के ही कारण। मा तो ऐसी दशा होने से पहले ही मर जाएगी—जरूर मर जाएगी। उसे मर ही जाना चाहिए। भावज को दादा वेश्या बनाने पर मजबूर कर सकते हैं—हालाकि बौदी ऐसी है नही। वह बडे ही दृढचरित्र की हैं। तुलसी के आसार यो भी अच्छे नजर नही आ रहे। मगला बतलाती थी कि वह काकी नबर आठ के भाई से कुछ गडबड कर आई है। और मगला ? नही, नही, न न

इस दिशा मे कल्पना की ढील पाकर पाचू का मन एमदम से अस्थिर हो उठा। उसके सिर की नसें तन गई। दिमाग पर जरूरत से ज्यादा बोझ पड गया। मन की बेचैनी ने पागल-खूनी की तरह हिंसक रूप से उत्तेजित होकर उसे बुरी तरह से अस्थिर कर दिया। उसकी आखो मे खून उतर आया, मुट्ठिया तन गई, जबडे भिच गए—उसका सारा शरीर आतरिक उत्तेजना के वेग से काप उठा। उसकी चेतना और विचार-शक्ति कुछ

क्षणो के लिए लुप्त हो गई। तभी सहसा उसका ध्यान वाहर की एक घटना की तरफ बरबस खिच गया। और वह बच गया।

उसके पास ही, थोडी दूर पर हगामा मचा हुआ था। तुलसी वोष्टम अपनी पत्नी की फटी हुई धोती खीच रहा था। और वह अपनी शक्ति-भर चीख-चीखकर रोती हुई, उस हज़ार जगह से फटी हुई मैली धोती को अपने तन से चिपकाए रखना चाहती थी।

तुलसी कहता था—"अपनी धोती दे दे। सोनाई से चावल लूगा।"

उसकी पत्नी कहती थी कि तुम अपनी धोती क्यो नही बेच देते ?

तुलसी का कहना था कि मैं मरद हू, दस वार बाहर-भीतर दौड-धूप करूगा तो खाना मिल भी सकेगा। तू औरत-जानी, तेरा क्या, दरवाजा वन्द करके कोठरी मे पडी भी रह सकती है।

तमाशाई दोनो तरह के थे। तुलसी के पक्ष वाले ही ज्यादा थे। नजीरें पेश की जा रही थी—कइयो के घरो मे औरते इस तरह नगी वैठी है।

पुरुष-शक्ति के आगे अन्त मे स्त्री को झुकना ही पडा। गहरी चोट खाकर अशक्त नागिन की तरह, तुलसी की पत्नी अपनी लाचारगी पर फुफकार कर उठी। कुचला जाने पर अह उत्तेजित होकर उसके भूखे शरीर मे फुर्ती ले आया था। आसुओ ने बहुत दिनो से आखो मे आना छोड दिया था, मगर लाज से विदा लेते हुए आज उसका दिल पानी पानी होकर बहने लगा। जाते-जाते कह गई—"औरतो की लाज भी बेचकर खा लो! कै दिन पेट भर लोगे ?"

तिनकौडी अच्छे दिनो मे नम्बरी पियक्कडो मे गिना जाता था। आज भी उसी रिन्दी फिलासफी मे अपने दिल के दर्द को छिपाए रखता है। तुलसी की घरवाली के फिकरे पर उसने आखिरी चुटकी छोडी—"लाज ही नही लक्खी, औरतें भी विकेंगी। वाकी रहा पेट—हेऽहेऽहेऽ!"

गले से बनावटी हंसी निकालकर तिनकौडी ने सचाई को मनहूसियत का जामा पहना दिया।

कोलाहल! गला घुटते हुए कमजोर, मजबूर जगली जानवरो का बेदम गुस्से से भरा हुआ करुण आर्तनाद!

अपने खयालो से चौंककर पाचू ने मोनाई की दूकान की तरफ देखा। लोग आपे मे न थे। दूकान पर चढे दौडते थे। जोश मे अपनो को भी कुचलते हुए बढ रहे थे। अपनी मर्मान्तिक पीडा और क्रोध को जताने के लिए उन्हें अपनी हजारो बरस की भाषा मे ढूढे दो अच्छर भी न मिले; आदिम युग के मनुष्य की तरह, अपने प्राकृतिक रूप मे, व्यक्ति की पीडा समाज बनकर चीख उठी।

छतरीनुमा पेड के नीचे बैठे हुए पाचू के कानो से लेकर आत्मा तक, उस चीख की दिल पर आरा-सा चलाती हुई गूज से बिंध गई।

हजारो साल की अनुभवी सस्कृति के नीचे दबी हुई भाषा को मानव ने टूट लिया—चारो तरफ से मोनाई को घेरकर गालिया और सख्त बाते सुनाई जाने लगी।

दूर से कुछ भी समझ मे नही आता था। पाचू सोचने लगा, ये माजरा क्या है? जान पडता है, मोनाई ने कोई नया टारपीडो चलाया है। वह उठकर दुकान के पास गया। आसपास के दूसरे तमाम लोग भी दूकान की तरफ भागे।

मोनाई कहता था, "चावल तो सरकार के पास है। पैसे ले जाओ।"

लेकिन पैसो का होगा क्या? पैसे खाए नही जा सकते। उन्हे देख-देखकर अपना जी भले ही भर लो। सोना, चादी, हीरे, जवाहरात—ये सब पेट भरे का खिलौना है। भूखे के लिए इनका कोई मोल नही। लाखो-अरबो का हीरा अगर खा लिया जाए तो वह जान का दुश्मन बन जाता है। जहर को आदमी ने कोहेनूर का रुतबा दिया है। खुदी के प्यार मे

आदमी इतना चालाक बना कि खुद को ही अपना दुश्मन मान बैठा। चमकते हुए पत्थरों और धातुओं से आदमी अपनी खुदी की कीमत आकने लगा। स्वार्थी व्यक्ति मुर्दा चमड़े की थैलियों में सोने-चांदी की चमक को भरकर अपने कलेजे को ठंडा करता है, जब कि ज़िन्दगी समाज के लाखों प्राणियों के पेट की खाली थैलियों से अपना हक़ पाने के लिए ज़िद करती है—जोश में तड़पती है। और वह अपना हक़ लेके छोड़ेगी।

खाज के कारण खटिया की तरह निकल आनेवाली खुरदरी चमड़ी में पसलियों की लकीरें चमकती थीं। कइयों के हाथ-पैरों में सूजन आ गई थी। शरीर में जगह-जगह से पानी रिसता था। गर्मी, सूज़ाक और खून की बीमारियों से सड़े हुए शरीर एक-दूसरे से रगड़ते, धक्कमधुक्का करते, मोनाई पर अपना अपार, अकर्मण्य रोष प्रकट करने के लिए उसकी दूकान पर चढ़े जा रहे थे। इतनी दुर्गन्धपूर्ण देहों से घिरे हुए मोनाई का दम घुटने लगा। शिकायतें चारों तरफ़ से उसके ईमान को घेरकर उसका नाकों दम कर रही थीं—"तुमने हमें पहले क्यों नहीं बताया कि चावल नहीं है। तुमने हमारा सामान क्यों खरीदा? हमें धोखे में क्यों रखा? मोनाई, हज़ारों की आत्मा को तड़पाकर तुम सुखी नहीं हो सकते। तुम्हारे रोम-रोम में कीड़े पड़ेंगे। हमारे पेट की ज्वाला में तुम्हारी लाखों की दौलत जलकर राख हो जाएगी। तुम कुत्ते-बिल्ली की मौत मरोगे। सड़-सड़कर मरोगे।"

मोनाई उठकर गरज उठा—"अभी तो तुम लोग ही सड़-सड़कर मर रहे हो। मेरा क्या दोष है? मैं किसीका गला नहीं काटता, किसीके घर डाका नहीं डालता। जो रूखी-सूखी भगवान जी मुझे इस बैपार में दे देते हैं उसीमें सन्तोष कर लेता हूं। सरकार से क्यों नहीं मांगते, जिसने कंट्रोल किया है? चलो, जाओ। भीड़ हटाओ मेरी दूकान से। अपने-अपने पैसे लो और चल दो।"

पल-भर के लिए मोनाई का रोब जमा। उसके तमतमाए खड़े होते

ही लोग एक कदम पीछे हट गए थे, मगर ठगे जाने की खीझ लोगो मे मोनाई के रौब मे भी ज्यादा तेज़ थी। भूखे भेडियो की तरह लोग उसके ऊपर टूट पडे। बुरी तरह से उसकी गत बनाने लगे। हर चीज़ फेंकनी शुरू कर दी। कुछ लोग उसके घर के दरवाज़े तोडने लगे। अज़ीम अपनी जान बचाकर भाग निकला।

बदले के जोश मे भीड मोनाई के घर के अन्दर भी जा घुसी। घर की हर चीज तोडी-फोडी जाने लगी। मोनाई की पत्नी छाती कूट-कूटकर लोगो को कोसने लगी। उसपर भी मार पडी। ज्यादा पिटा। मोनाई पर तो लोगो ने थूका, उसके बाल नोचे, उसे बुरी तरह से मारा। घर मे लूट-पाट मचा दी। जो चीज़ सामने आई उसीपर गुस्सा उतारा जाने लगा। कुछ लोग रसोईघर मे घुस गए। तैयार रसोई को खाने के लिए आपस मे भी चल गई। सारा अन्न इधर-उधर बिखर गया। घर की एक-एक कोठरी उलटकर रख दी गई। कुछ लोगो ने तहखाने का पता पा लिया। भूख की सम्मिलित शक्ति ने दरवाज़े तोड दिए।

गोदाम मे बोरियो पर बोरिया चुनी हुई थी। सारा गाव महीनो खाए और अन्न न चुके—इतनी! उन्हे देखकर जनता खुशी से पागल हो उठी। चारो ओर कोलाहल और भयानक अट्टहास गूज उठा।

मोनाई की पत्नी और ज्यादा चीख-चिल्ला रहे थे। मोनाई पिट-पिटाकर, चुपचाप निर्विकार मुद्रा से खडा-खडा अपने घर की लूट-पाट को देखता रहा। चावलो की बोरिया चीरी जा रही थी। चावल गोदाम मे बिखर रहा था। जनता हस रही थी।

अचानक हसी की गूज मे गोलियो की आवाज़ गूज उठी। कई लोगो के लगी। लोगो ने देखा, दयाल के सिपाही गोलिया दाग रहे थे, डडे बरसा रहे थे।

खुशी मौत की चीखो-कराहो मे बदल गई।

अज़ीम दयाल ज़मीदार के लट्ठ और बन्दूकधारी सिपाहियो को लेकर लौटा था। वह टे बजोश फे सिपाहियो को लोगों पर डडे और गोलिया

बरसाने की ताकीद कर रहा था।

चारो तरफ छटपटाहट, चारो तरफ चीख पुकार। खून के दागो से मोनाई का घर रंग गया। मरभुखो की लाशो से मोनाई का घर श्मशान बन गया। सत्तर-अस्सी आदमियो मे से बीस-पचीस भूख मे शहीद हो गए।

मोनाई बचा लिया गया। न्याटा बच गया। मोनाई की पत्नी रो-रोकर कोसने लगी। भीड तितर-बितर होने लगी। जान बचाने के लिए इधर-उधर भागने लगी। हिम्मत छूट गई। जनता के हाथ मे एक बार चावल आकर फिर चला गया। इतनी जाने चली गई। हार का गुस्सा आखो की लाली मे दफन हो गया। भीड प्रलाप करती हुई, डगमगाते हुए पैरो पर अपनी हार का बोझ डालकर घर से बाहर भागने लगी।

पाचू दूर एक कोने मे खडा हुआ यह सारा काड देख रहा था। जनता का भीषण विद्रोह भी देखा और उसका अमानुषिक दमन भी। आवरू और स्वार्थ ने उसे कायर बनाया था। मध्यवर्ग का, कुलीन, सद्गृहस्थ, अग्रेजी पढा-लिखा हेडमास्टर भला इन छोटे लोगो का साथ कैसे दे सकता है? जब लोग न्याय के लिए लड रहे थे, तब भी वह दुबका हुआ खडा रहा, और जब लोगो पर अन्याय की मार पडने लगी तब भी वह वैसे ही दुबका रहा। हा, दिमागी जोर बराबर दिखाता रहा। जब लोग मोनाई के यहा लूट-पाट मचा रहे थे तब पाचू जोश के साथ खुश था, और जब उनपर लाठिया, गोलिया बरसने लगी तो वह जोश के साथ मोनाई, अजीम और दयाल के साथियो का गला घोटने की बात सोच-सोचकर अपने मन को मसोसकर खडा रहा। वह 'बुद्धिमान' आदमी है। उसके दिल मे आवरू का डर है। अपने घरवालो से और खुद अपने से उसे प्यार है। बेचारा जनपक्ष का साथ कैसे दे सकता है? मोनाई से तो उसे चावल लेना है। जनपक्ष का साथ देने से उसे और उसके परिवार को भूखो मरना पडेगा। लिहाजा वह अपना स्वार्थ और आवरू सभाले हुए, दुबककर खडा रहा। हा, तमाशा देखने के शौक मे वह अब तक यहा खडा रहा,

यह क्या कुछ कम वीरता है ? अपनी कायरता के प्रति अचेतन, पूजीपतियो के अत्याचार और श्रमजीवी किसानो की दीन दशा के लिए उसके मन मे ग्लानि और दु ख की लहरें उठ रही थी।

मोनाई अब परिस्थिति का राजा बन गया था। उसके गोदाम मे, उसके आगन और दालान मे खून से सनी हुई लाशे पडी थी। उसका सारा घर अस्तव्यस्त हो गया था, चीजें टूटी फूटी और लुटी हुई पडी थी। उसके घर मे कई ज़ख्मी पडे थे। खून बह रहा था। कइयो के जीव निकलने से पहले तडप रहे थे, प्राण छोडने की पीडा कराह-कराहकर दीवारो मे भी दर्द पैदा कर रही थी।

अपने चारो ओर का वातावरण देखकर मोनाई मन ही मन काप उठा। इन ज़ख्मियो और मुर्दो को देख-देखकर उसका दिल दहल रहा था। मन ही मन मे वह प्रार्थी था—"भगवान जी ! मेरा कुछ भी दोष नही है। तुम तो घट-घटवासी, सब कुछ देखनहार हो, अतरजामी हो, दीनदयाला !"

अज़ीम अपनी शेखी बघार रहा था कि किस तरह उसने दयाल ज़मीदार से जाकर मदद मागी, और इन सिपाहियो को लेकर यहा आया।

दयाल के सिपाही अपनी बहादुरी की डीग हाककर मूछो पर ताव दे रहे थे। लाशो को गालिया दे रहे थे और मोनाई से अपनी बहादुरी के लिए इनाम माग रहे थे। मोनाई ने चारो सिपाहियो को पाच-पाच रुपये दिए। सिपाही उसपर रौब जमाकर पाच-पाच और मागने लगे। मोनाई अपने नुकसान की दुहाई देने लगा, गाव वालो को, अपने घर मे पडे हुए ज़ख्मियो को, लाशो को गालिया देने लगा, गिडगिडाने लगा—मगर उसे पाच-पाच रुपये और देने ही पडे।

मोनाई पाचू की तरफ देखकर कहने लगा—"देख लिया मास्टर बाबू, ये है ऐसान का ज़माना ! होम करते हाथ जल गए। मेरे मन मे तो धरम उपजा कि लाओ, चार डबल का नुकसान ही सही, इनके चिथडे-गुदडे खरीद लू, बिचारे कट्रोल का चावल लाके अपना पेट भर लेगे। मैं

तो मन मे विचारे-विचारे कहू और ये ससरे ऐसे पापी निकले कि उपकार का वदला मुझे यो दिया।"

पाचू चुपचाप खडा रहा।

अपनी पीठ सहलाते हुए मोनाई बोला—"धरम का जमाना नही रहा वावू। सत्त कहता हू। सालो ने ऐसी मार मारी है कि हड्डिया कडकडाय के धर दी। कमीने ससरे, जमाने-भर के पापी—ससुर, घर की औरतो की इज्जत तक तो वेचके खा गए। इत्ता पापाचार फैलाया कि भगवान जी भी तिराह-तिराह करने लगे। सत्त कहता हू। भला वताओ, कित्ती नीचता है कि मेरी घरवाली विचारी पर भी हाथ उठा दिया! दुरदसा कर डाली विचारी अवला की। मेरे न्याडा को पीटा। राच्छस कही के!

"क्या हुआ मोनाई?" दरवाज़े से एक रोवदार आवाज आई।

मोनाई, अज़ीम, पाचू और वे सव गोलीमार, लट्ठमार सिपाही चौंककर दरवाज़े की ओर देखने लगे, अदव से खडे हो गए। मोनाई हाथ जोडकर गिडगिडाते हुए आगे वढा। दयाल ज़मीदार आए थे।

मलमल का चुना हुआ कुरता, कलावत्त् किनार की चुनी हुई वारीक धोती, गले मे विना शिकन पडा हुआ रेशमी दुपट्टा, वाई कलाई मे सोने की घडी, दोनो हाथो की उगलियो मे चार नगीने जडी हुई अगूठिया दमक रही थी। दाहिने हाथ मे हाथीदात की मूठवाली खुशनुमा छडी, पैरो मे पम्प शू, कानो मे इत्र की फुरहरी, मुह मे पान, आखो मे रात की पी हुई मद का खुमार, साथ मे चार हाली-मुहाली—दयाल ज़मीदार ने अपनी चरणरज से मोनाई केवट का घर पवित्र किया था। दालान, तहखाने और आगन मे पडी हुई लाशो और घर की टूटी-फूटी चीजो का उन्होने निरीक्षण किया। मोनाई वरावर हाथ जोडे हुए उनके पीछे-पीछे घूमता और वीच-वीच मे रोकर कहता जाता—"मै तो लुट गया अन्नदाता!"

दयाल ज़मीदार ने तहकीकात की। सारा हाल सुना। वदमाश गाव-वालो को गालिया दी और यह भी बताया कि दारोगा साहव को खबर भेज दी गई है। दारोगा के आने से पहले, दयाल ने मोनाई को सलाह दी,

कि तहखाने से लाशो को हटवाकर चावल के गोदाम मे छिपा दिया जाए।

फौरन ही दयाल बाबू के लिए एक चौकी पर ऊची गद्दी लगा दी गई। वे उनपर बैठ गए। दयाल का छतरीबरदार छतरी को बगल मे दबाकर उनको पखा झलने लगा। एक नौकर ने पान का डिब्बा पेश किया, दूसरा उगालदान लेकर आगे बढा। दयाल बाबू ने मुह मे दबी हुई गिलौरी उगालदान मे थूकी, दो नये पान जमाए, चुटकी-भर जर्दा खाया। नौकर ने रेशमी रूमाल पेश किया, दयाल बाबू ने हाथ पोछ लिए। फिर पाचू मास्टर को इज्जत बख्शी, अपने पास बुलाकर बिठाया, दो पान खिलाए और सख्त गर्मी की शिकायत करने लगे। पखेवाले ने जोर से पखा झलना शुरू किया।

दलाल जमीदार ने आदर पाकर पाचू के दबे हुए बडप्पन को बढावा मिला। वह सोचने लगा कि एक लक्ष्मी का पुत्र है और दूसरा सरस्वती का पुत्र—दोनो एक ही आसन पर बैठने के योग्य हैं।

लक्ष्मी के पुत्र की गगा-जमुनी पनडुब्बी से केवडे मे बसाए गए पान के बीडे खाकर सरस्वती के पुत्र ने अभिमान से मस्तक उठाकर अपने चारो ओर देखा। मोनाई दयाल जमीदार के पैरो के पास जमीन पर बैठा हुआ था। उसकी मुद्रा बडी ही दयनीय थी और वह जमीदार को हाथ जोड रहा था। पल-भर के लिए बडी ही हिकारत के साथ पाचू की नजरे मोनाई पर ठहरी, फिर उसे अपनी चोरी की याद आ गई। मोनाई ऐसा नीच उसके चोरी ने स्कूल की बेंचे बेचने के राज को जानता है। आबरू के भय ने पाडित्य के अभिमान को ताक पर रख दिया।

गद्दी पर बैठा हुआ पाचू सिहर उठा। नजरें फिरा ली। सामने, धूप-भरे आगन मे मरभुखो की लाशें जमीन को अपने खून का तर्पण देकर दयाल जमीदार की आज्ञा के सामने पडी थी—उसकी आखो के सामने भी थी। वह दयाल जमीदार के साथ बैठा था।

पाचू का बदन काप उठा। अपनी कमीज की बाहो को छूती हुई दयाल जमीदार के कुरते की चुन्नट उसे इतना बडा बधन मालूम पडने

लगी कि वह उससे मुक्त होने के लिए अधीर हो उठा। मगर मरकर वह जाएगा कहा ? दयाल जमीदार तो बैठे हैं पूरी चौकी पर टागे फैलाकर और पाचू बैठा है चौकी के १।८वे हिस्से मे, कोने मे, दुबककर।

पाचू अब महसूस करने लगा कि उसका दर्जा समाज मे दयाल ज़मीदार के बराबर नही है। दयाल ज़मीदार की कृपा से ही वह इस चौकी पर बैठकर पान के दो बीडे पाने का सौभाग्य प्राप्त कर सका है।

पाचू की नज़र मोनाई की तरफ गई। और उसने सोचा कि उसका स्थान मोनाई के बराबर भी नही है। मोनाई उसपर एहसान कर सकता है, लेकिन ऊच जाति और नीच जाति की ज़बर्दस्त गाठ मे बधे होने के कारण मोनाई उसका आदर करने को बाध्य भी है। पाचू मोनाई के मखमल मे लपेटे हुए चमरौधे जूतो से बहुत डरता है। उसके पाडित्य को आघात लगता है। उसके शहरी कल्चर को चोट लगती है। उसके कमठ जीवन को चोट लगती है, और उसकी कुलीनता को बडा दुख होता है। फौरन ही घृणा उपजी। उसने सोचा—नफरत के साथ सोचा, लाख भी हो लेकिन वह मोनाई की तरह किसीके सामने हाथ जोडकर गिडगिडाता हुआ हरगिज़ नही बैठेगा।

अपनी चारित्रिक उच्चता से पाचू के अह को सहारा मिला। उसने नजरें फिरा ली। नही, उसका स्थान मोनाई के बराबर हरगिज नही।

सामने आगन मे अधनगी, जख्मो से भरी हुई लाशो की ओर पाचू ने देखा, हठपूर्वक देखता रहा। इन्हे दयाल ज़मीदार के लिए आज अदब का होश नही। इनके ऊपर आज मोनाई के कोई एहसान नही। इन्हे भूख का होश नही, अपना होश नही। ये लाशें उन मनुष्यो की है जो ईश्वर से मिला हुआ अपना अधिकार वापस पाने के लिए लडते-लडते मरे। धर्म-वीरो से बढकर जग मे कोई ऊचा नही। इसलिए आज ये लाशे मोनाई से ऊची है, दयाल जमीदार से ऊची है, शाहो-सम्राटो से भी ऊची है, दुनिया की हर चीज से ऊची उठ गई है। इनके ऊपर आज किसीका जोर नही रहा है। ये आज आज़ाद हो गई है।

काश कि हक को पहचानने की समझ कुछ और पहले आ गई होती। इन्हे ही नही, सारे देश को अगर यह समझ आ गई होती तो आज यह दुर्दशा भी न होती। गुलामी का तौक पहनकर मरना मानवता के नियम के विरुद्ध है। हम अगर प्राण नही ले सकते तो कोई हर्ज नही। लेकिन हममे प्राण देने की तो शक्ति है। और यह शक्ति बहुत बडी शक्ति है। प्राण लेने-वाला उस पीडा को सपने मे भी नही जान पाता, जिसको प्राण देनेवाला अनुभव करता है। प्राण देनेवाला एक अनुभव लेकर मरता है, जिससे उसे सतोष होता है। और प्राण हरनेवाला ? वह बहुत बडा कायर है। वह अपनी कायरता को बार-बार हत्याए करके छिपाता है, इसलिए चिंता कभी उसका साथ नही छोडती। दिन-रात एकाग्र होकर सिर्फ अपने थोथे रौब को ही सभालते रहना—भला यह भी कोई जीवन है। एक क्षण के लिए भी मुक्ति नही, शाति नही, डर से घिरे हुए—हु ! गद्दी के गुलाम !

एक ही नज़र मे दयाल बाबू पाचू को बहुत तुच्छ दिखने लगे। अपने बडप्पन पर अभिमान हुआ। दयाल बाबू के तकिये पर कोहनी टेककर वह ज़रा अकडकर बैठ गया।

पाचू फिर सोचने लगा, यह मिट्टी का माधो, सदा झूठी तारीफो की दुनिया मे रहनेवाला, यह अक्ल का दुश्मन मुझसे हज़ार दर्जा नीचे है। विरासत मे दौलत मिल जाने से कोई आदमी बडा नही हो सकता। बडा वह है, जो अपने हक के लिए लडते-लडते प्राण देने की हिम्मत रखे।

फिर पाचू ने अपने-आपमे महसूस किया कि वह प्राण देने की हिम्मत रखता है। "मेरा स्थान धूप मे तपती हुई इन लाशो के बराबर है।"

पाचू फिर गौर से लाशो की तरफ देखने लगा। फिर उसे लगा कि नही, उसमे और इन लाशो मे थोडा-सा भेद है। इन लाशो मे प्राण देने का विश्वास अगर समय पर आ गया होता—तो ? तो भी ये मरते ही, मगर इतना भुगतकर नही ! वे आज ऐसी मौत मरते, जैसी कि जैसी कि मैं अपने लिए चाहता हू।

फिर पाचू उन तमाम बडे-बडे नेताओ की श्मशान-यात्रा के शानदार

जलूसो की बाते याद करने लगा जिन्हे या तो उसने आखो से देखा था या पढा-सुना था। वह अपने लिए बडी आदरणीय मृत्यु की कल्पना करने लगा और उसीमे खो गया।

५

मोनाई के मदिर के द्वारे, घूरे पर, मेला लगा था। चील और कौए आसमान पर, कुत्ते और आदमियो की फौज जमीन पर थी, और घूरे पर पडी हुई जूठी पत्तलो के लिए युद्ध चल रहा था।

मोनाई ने प्रेत-भोज दिया था। दस दिन पहले उसके घर पर चौबीस हत्याए हुई थी। उन भूखे प्रेतो को शात करने के लिए कठी-केसर छाप भगत मोनाई ने हर एक के नाम पर बाम्हन न्योते थे।

गाव के बडे-बडे दिग्गज परिवारो का चूहा-चूहा तक जीमने आया था। नाते-गोते के लोग आए थे, गोसाई लोग भी आए थे। सत्तर-अस्सी आदमियो का भोजन था।

मरभुखे सब थे, लेकिन ब्राह्मण सब नही। मरभुखो और ब्राह्मणो मे भेद है, यह मोनाई के भोज ने बताया। अकाल न होता तो कभी इसका पता भी नही चलता कि केवटो के यहा ब्राह्मणो का भोजन करना शास्त्र-सम्मत है। जब से भगवान रामचन्द्र का चरणामृत केवटो ने पान किया है, तब से वे पवित्र हो गए है। सात-सात, आठ-आठ रोज के भूखे ब्राह्मण परिवार मोनाई केवट के मन्दिर मे भोजन करने जा रहे थे। अनेक भूखी आखे उन्हे ललचाई हुई दृष्टि से देखती थी। दो पछाही लठैत सिपाही मदिर के दरवाजे पर खडे थे। अन्दर न सही, लोग दरवाजे पर खडे होकर सिर्फ भोजन करने के दृश्य को देखने के ही भूखे थे। बच्चो ने आपस मे सिसौरा

खाते हुए नही देखा था, लेकिन उन पछाह के लठैतो की वडी-वडी मूछो, लाल-लाल आखो, ज़बर्दस्त घुडकियो और लाठी की खटखट से किसीका सामने की तरफ जाने का साहस न होता था।

लडको की टोली, जिसमे पाच से लेकर दस-बारह बरस तक के लडके शामिल थे, घूम-फिरकर, डगमगाते हुए पैरो से मदिर के दरवाज़े के सामने जाते थे। नग-धडग, हाथ-पैर सूखे हुए, पेट आगे, डगर-डगर आखो से भोजपुरिये लठैतो को देखकर अगूठे चूसते थे। पत्तलो पर पत्तले बाहर आ आकर पडती थी। ऊपर आसमान पर चीले मडराती थी। कौए झुड के झुड आ-आकर मदिर की मुडेरो पर बैठते और अपने दाव की घात मे घूरे की तरफ देखते हुए काव-काव करते थे। ज़मीन पर आदमियो और कुत्तो मे वाज़ी लगी थी। चीलो की चोचें कभी-कभी जूठी पत्तलो से चूककर झुके हुए आदमियो की खोपडियो पर अपनी पूरी शक्ति के साथ पडती थी। कुत्तो के पजे और जवडे अपने हक के लिए जान लडा रहे थे। और भूखा मानव इन सबसे लडकर तथा स्वार्थ के लिए अपने से भी लडकर, एक मुट्ठी जूठा अन्न पाने के लिए जी-जान से भिडा हुआ था।

सुनकर, यह दृश्य देखने के लिए पाचू भी वहा आ पहुचा। परिवार के साथ आज छ रोज़ से पाचू भी भूखा है। मोनाई ने उस दिन उसके गले पर भी छुरी फेर दी थी। हिसाव मागने पर मोनाई ने साफ कह दिया—"मेरा तो पैसा डूब गया बाबू! सारी चिचें सडी भई थी। जलाने की लकडी के भाव से भी खरीदने को कोई तैयार न हुआ। दस रुपये भी न निकले। ऊँदे से मेरे दो सेर चावल तुमपर चढ गए, लेकिन हम यह समझके गम खा लेंगे कि चलो, बाम्हन-ठाकुर की भी थोडी बहुत सेवा हो गई।"

इस नये मखमली चमरौधे ने तो पाचू की खोपडी पिचका दी। पल-भर तो वह चौंककर मोनाई के मुह की तरफ ही देखता रहा। चेहरे पर कोई शिकन तक नही, कोई तिकडम नही। वही भोला-भाला तिलक-छाप लगा हुआ चेहरा, होठो पर वही एवर-रेडी दयनीय मुसकान और बात करने के ढग मे वही दीनता, वही दृढता, सदा की तरह आमने-सामने देखकर

बाते करना, कही से भी खोट नही, कही से मजाक या जालसाजी की बू नही।

पाचू स्तब्ध रह गया। निराशा ने उसे चारो ओर से घेर लिया। आखो मे आसू छलछलाने की धमकी देने लगे। लेकिन पाचू अपनी हार किसीके सामने दिखाना पसद नही करता और मोनाई को जवाब देकर करे भी क्या ? तेजी से वह बाहर चला आया।

प्रेत-भोज की बात पाचू के सामने ही दयाल जमीदार ने उठाई थी। दारोगा साहब भी वही बैठे थे। दो हजार नकद दारोगा साहब को, पाच हजार रुपये वार-फड मे और प्रेत भोज का दड सिर पर लेकर मोनाई को दयाल जमीदार के समाज और दारोगा साहब की सरकार मे किसी तरह क्षमा मिल गई। रपट मे दगे का ब्योरा दर्ज हो गया। गवाहो मे हेडमास्टर पाचू गोपाल मुखर्जी का नाम लिखा गया। और चलते समय मास्टर मोशाय के ऊपर मोनाई ने दो सेर चावलो का एहसान भी जमा दिया था।

दूर, बास के पुल के पास बैठा हुआ पाचू मोनाई के मदिर के सामने जूठी पत्तलो के लिए चील, कौए और आदमी मे होनेवाली लडाई को देख रहा था। पागलो की तरह, हिंसक दृष्टि मे हर एक को देखते हुए लोग लड रहे थे। चील की चोच से एक बच्चे के सिर मे घाव हो गया। वह वही गिर पडा। लोग उसे रौदते हुए घूरे पर चढ दौडे।

पाचू ने बैठे-बैठे यह अनुमान लगा लिया कि बच्चा मर गया होगा। पास से देखने के लिए उठकर जाने की तबीयत न हुई। लेकिन, वह सोचने लगा, लडके की चीख नही सुनाई दी। दूसरा विचार फौरन ही आया, आवाजो मे अब दम ही कहा रहा है ? जान छोडते हुए, अपने भरसक पूरे जोर के साथ चीखा होगा, लेकिन उसकी चीख मे फर्लांग-भर तक भी पहुचने की शक्ति न रही होगी।

मौत पाचू के लिए अब बहुत आकर्षण नही रखती, आखे कायद से आदी हो गई है। छ रोज से भूख की तकलीफ को भोगते हुए उसे अपने दिल को बेहद सख्त बनाना पडा है। पिछली बार दयाल जमीदार का आसरा था—आस बधी हुई थी। फिर मोनाई मे मिल गया। लेकिन इस

वार तो उसे कही से भी चावल पाने की आशा ही न थी। घर मे दो-चार मामूली-से सोने-चादी के गहने पडे तो हैं, लेकिन उन्हे बेचे किसके हाथ ? मोनाई के यहा जाओ तो चौथाई दाम भी न मिलेगे। दयाल जमीदार से सौदा कर ही नही सकते, जो उठाकर दे दें उसे ही सर-माथे पर चढाना पडता है। और जहा तक वस चलता है दयाल जमीदार कौडी को भी मोहर की तरह दातो से पकडते हैं। मधुपुर की हाट मे सर्राफो और पुलिस के सिपाहियों ने मिलकर एक नई तरकीब निकाल रखी है। जो गहने बेचने आता है उसीको पुलिस चोर करार देती है। भरे बाजार मे आबरू जाने के भय से लोगो को आधी रकम पुलिस को भेंट करनी पडती है, और आधी मे दूकानदार घिसौनी और गलाई निकाल लेता है। सास लेने पर भी रिश्वत और लूट देनी पडती है। घर मे यह तय हुआ था कि जब मुसीबत बर्दाश्त से बाहर हो जाएगी तब एक दिन वे बचे-खुचे गहने बेचकर खा लेंगे। मगर उनकी बिक्री से सिर्फ एक ही दिन खाया जा सकता है, इसलिए मामला हर रोज दूसरे दिन पर टल जाता था। पार्वती मा कहती थी—"एक ही दिन का तो सहारा है, लेकिन इस सहारे की आस मे दिन गुजर जाते हैं।"

सहसा पाचू के पास से ही एक मादरजाद नगी औरत दौडती हुई घूरे की तरफ चली गई। सभ्यता के एवरेस्ट-युग मे जन्म लेकर पाचू खुले आम दिन दहाडे, ऐसी बेशर्मी से भरी हुई घटना को देखने का आदी न था। पाचू ने देखा, उस औरत मे चीलो, कौओ, कुत्तो और आदमियो से ज्यादह जोश था। जब वह घूरे के पास पहुची तो सब अलग हो गए।

बीते हुए दिनो की चेतना, अनहोनी घटनाए देखकर बार-बार चौकती है, मगर छिन-भर के लिए ही। दस दिन पहले कट्रोल के भाव मे मोनाई से चावल पाने की आशा मे, बहुत-से लोगो ने अपनी स्त्रियो के तन से फटे-चिथडे तक उतारकर फेक दिए थे। बाद मे चावल भी न मिला और कपडे भी चले गए।

पुरुषो ने उजडे हुए घरो मे रहना ही छोड दिया था। स्त्रियो का

बाते करना, कही से भी खोट नही, कही से मजाक या जालसाजी की बू नही।

पाचू स्तब्ध रह गया। निराशा ने उसे चारो ओर से घेर लिया। आखो मे आसू छलछलाने की धमकी देने लगे। लेकिन पाचू अपनी हार किसीके सामने दिखाना पसद नही करता और मोनाई को जवाब देकर करे भी क्या? तेजी से वह बाहर चला आया।

प्रेत-भोज की बात पाचू के सामने ही दयाल ज़मीदार ने उठाई थी। दारोगा साहब भी वही बैठे थे। दो हज़ार नकद दारोगा साहब को, पाच हजार रुपये वार-फड मे और प्रेत भोज का दड सिर पर लेकर मोनाई को दयाल जमीदार के समाज और दारोगा साहब की सरकार से किसी तरह क्षमा मिल गई। रपट मे दगे का ब्योरा दर्ज हो गया। गवाहो मे हेडमास्टर पाचू गोपाल मुखर्जी का नाम लिखा गया। और चलते समय मास्टर मोशाय के ऊपर मोनाई ने दो सेर चावलो का एहसान भी जमा दिया था।

दूर, बास के पुल के पास बैठा हुआ पाचू मोनाई के मदिर के सामने जूठी पत्तलो के लिए चील, कौए और आदमी मे होनेवाली लडाई को देख रहा था। पागलो की तरह, हिंसक दृष्टि से हर एक को देखते हुए लोग लड रहे थे। चील की चोच से एक बच्चे के सिर मे घाव हो गया। वह वही गिर पडा। लोग उसे रौदते हुए घूरे पर चढ दौडे।

पाचू ने बैठे-बैठे यह अनुमान लगा लिया कि बच्चा मर गया होगा। पास से देखने के लिए उठकर जाने की तबीयत न हुई। लेकिन, वह सोचने लगा, लडके की चीख नही सुनाई दी। दूसरा विचार फौरन ही आया, आवाज़ो मे अब दम ही कहा रहा है? जान छोडते हुए, अपने भरसक पूरे जोर के साथ चीखा होगा, लेकिन उसकी चीख मे फर्लांग-भर तक भी पहुचने की शक्ति न रही होगी।

मौत पाचू के लिए अब बहुत आकर्षण नही रखती, आखें कायदे से आदी हो गई है। छ रोज़ से भूख की तकलीफ को भोगते हुए उसे अपने दिल को बेहद सख्त बनाना पडा है। पिछली बार दयाल ज़मीदार का आसरा था—आस बधी हुई थी। फिर मोनाई से मिल गया। लेकिन इस

बार तो उसे कही से भी चावल पाने की आशा ही न थी। घर मे दो-चार मामूली-से सोने-चादी के गहने पडे तो हैं, लेकिन उन्हे बेचे किसके हाथ ? मोनाई के यहा जाओ तो चौथाई दाम भी न मिलेगे। दयाल जमीदार से सौदा कर ही नही सकते, जो उठाकर दे दें उसे ही सर-माथे पर चढाना पडता है। और जहा तक बस चलता है दयाल जमीदार कौडी को भी मोहर की तरह दातो से पकडते हैं। मधुपुर की हाट मे सर्राफो और पुलिस के सिपाहियो ने मिलकर एक नई तरकीब निकाल रखी है। जो गहने बेचने आता है उसीको पुलिस चोर करार देती है। भरे बाज़ार मे आबरू जाने के भय से लोगो को आधी रकम पुलिस को भेट करनी पडती है, और आधी मे दूकानदार घिसौनी और गलाई निकाल लेता है। सास लेने पर भी रिश्वत और लूट देनी पडती है। घर मे यह तय हुआ था कि जब मुसीबत बर्दाश्त से बाहर हो जाएगी तब एक दिन वे बचे-खुचे गहने बेचकर खा लेंगे। मगर उनकी बिक्री से सिर्फ एक ही दिन खाया जा सकता है, इसलिए मामला हर रोज़ दूसरे दिन पर टल जाता था। पार्वती मा कहती थी—"एक ही दिन का तो सहारा है, लेकिन इस सहारे की आस मे दिन गुज़र जाते हैं।"

सहसा पाचू के पास से ही एक मादरज़ाद नगी औरत दौडती हुई घूरे की तरफ चली गई। सभ्यता के एवरेस्ट-युग मे जन्म लेकर पाचू खुले आम दिन दहाडे, ऐसी बेशर्मी से भरी हुई घटना को देखने का आदी न था। पाचू ने देखा, उस औरत मे चीलो, कौओ, कुत्तो और आदमियो से ज्यादह जोर था। जब वह घूरे के पास पहुची तो सब अलग हो गए।

बीते हुए दिनो की चेतना, अनहोनी घटनाए देखकर बार-बार चौकती है, मगर छिन-भर के लिए ही। दस दिन पहले कण्ट्रोल के भाव मे मोनाई से चावल पाने की आशा मे, बहुत-से लोगो ने अपनी स्त्रियो के तन से फटे-चिथडे तक उतारकर फेंक दिए थे। बाद मे चावल भी न मिला और कपडे भी चले गए।

पुरुषो ने उजडे हुए घरो मे रहना ही छोड दिया था। स्त्रियो का

मजबूर होकर चारदीवारी के अदर वद होकर बैठना पडा। वे घर मे वाहर नही निकल सकती। किमीको देख-सुनकर अपना गम गलत करने मे ही वचित कर दी गई है। कोठरी के अदर वद, उन चार मनहूस दीवारो को निहारा करो—निहारा करो—और कोई चारा भी तो नही? भूख की उलझन के ऊपर लाज की यह कैद और भी जुल्म ढा रही थी। पिछले पाच-छ रोज से जगह-जगह घरो मे औरतो के आपस मे लडने झगडने की आवाजें दिन-रात सुनाई देती हैं। अच्छी-अच्छी औरतें एक-दूसरे के लिए उन गालियो का प्रयोग करती है, जिन्हे कभी धोखे मे सुन लेने पर भी उनके गाल कानो तक लाल हो उठने थे। पाचू उन औरतो की वात सोचता था जो अपने घरो मे अकेली ही कैद है। जहा दो-चार है वे आपस मे लड झगडकर, गाली-गलौज करके, किसी तरह अपना वक्त तो पूरा कर लेती है, लेकिन जो अकेली कैद होगी उन वेचारियो का तो वक्त भी न कटता होगा—वही दीवारे, वही दरवाजे, कोठरी की हर चीज वही। किमान के घर की छोटी-सी दुनिया मे यह एक कोठरी न जाने कितनी ही सुखद और दु खद स्मृतियो से भरी हुई होगी। पाचू इसपर कल्पना करने लगा—नववधू वनकर घर की स्त्री ने शायद इसी कोठरी मे अपने पति के साथ सुहागरात मनाई होगी, अपने वच्चो को जन्म देकर मा वनने का सौभाग्य उसे शायद इसी कोठरी मे प्राप्त हुआ था, फिर अकाल के शुरु मे इसी कोठरी से किसान के घर की 'वहुमूल्य' चीजे एक एक कर विकने गई होगी। आज वही कोठरी लाज की मारी, भूखी वेकस औरतो का दम मौत की तरह घोट रही होगी।

जूठन की खवर सुनकर यह औरत अगर लाज की कैद को तोडकर वाहर चली आई तो उसने कुछ वुरा नही किया। हमारी आखे इसमे गुनाह क्यो देखती है? गुलाम पुरुष अपनी गुलामी का पूरा वोझ स्त्रियो पर डालकर हल्का होना चाहता है—औरत की यह गुलामी पाचू को वुरी तरह से खलने लगी। उसे गुस्सा आ गया।

× × ×

मोनाई के मदिर से ब्राह्मण चेहरे पर जबर्दस्ती तृप्ति का भाव लादकर निकल रहे थे। उनकी हालत, पाचू ने देखा, और भी खराब थी। अपनी कई-कई रोज़ की भूख को ब्राह्मणो ने आज पूरा-पूरा मोआवज़ा देने का मौका पाया था। लोगो ने इस कदर बदनियत होकर खाने की कोशिश की थी कि वह भोजन ही उनके लिए जहर बन गया। मदिर से उतरकर दस कदम चलते ही कमजोर आतो पर अन्न का बोझ पडने के कारण कइयो के पेट मे ज़ोर का दर्द होने लगा। कइयो को चक्कर आने लगा और बहुतो को कै होने लगी।

पाचू की आखो के सामने दो दृश्य थे। घूरे के पास अब्राह्मण मरभुखो और जानवरो की लडाई, तथा दूसरी ओर इन पेट भरे हुए ब्राह्मणो का यह हाल। जगह-जगह लोग पडे जाते है, उठने की ताब नहीं। जगह-जगह लोग कै कर रहे हैं। और सबसे अधिक बीभत्स दृश्य पाचू ने यह देखा कि एक की कै पर दूसरा मरभुखा उसे चाटने के लिए बडी आतुरता के साथ टूट पडा।

पाचू से यह देखा न गया। वह एकदम वहा से हट आया। इस दृश्य ने उसके मस्तिष्क को उत्तेजित कर दिया। आदमी को गुलाम बनानेवाले पहले सत्तावादी मानव ने क्या कभी यह सोचा था कि जिस बीज को वह बो रहा है उसकी जडे कितनी गहरी और कितनी दूर तक अपना अधिकार जमाएगी! गुलामी किस हद तक मनुष्य को स्वामी बनाकर उसके अह का पोषण करती रहेगी और दूसरे को कब तक इस तरह मजबूर करती रहेगी कि किसीकी कै से उगली हुई गिलाजत को खाने के लिए भी वह खुशी से तैयार हो जाए?

भूख का दौरा बडी ज़ोर के साथ पाचू को महसूस हुआ। साथ ही उबकाइया भी आने लगी। आतें उलटी-उलटी पडती थी। पेट पकडकर वह वहीं बैठ गया और अपने मन को ज़बर्दस्ती उस दृश्य से हटा लेने की कोशिश करने लगा। घृणा से भी कहीं ज्यादा लज्जाजनक यह दृश्य था।

पाचू सोचने लगा, क्या कोई भी पेट-भरा आदमी अपने लिए उस

दिन की कल्पना कर सकता है जब उसे इसी तरह किसीकी गिलाज़त चाटने के लिए मजबूर होना पड़ेगा। हठ के साथ पाचू सोच रहा था—यह बात सोचना इस वक्त उसकी राय मे सबसे जरूरी था—हर आदमी को, जो गुलाम है, ऐसे दिन देखने के लिए हर वक्त तैयार रहना चाहिए। दुनिया मे जब तक गुलामी रहेगी, इन्सानियत उसी तरह ठुकराई जाएगी जिस तरह ईसा, राम, कृष्ण, मुहम्मद, बुद्ध के अनुयायी उनके पैर छू-छूकर उनकी छातियो पर ठोकरे मार रहे हैं।

उस दृश्य के साथ उपजी हुई भूख और उस दृश्य को देखने के कारण खाली पेट जी मिचलाने से जो तकलीफ होती थी, उससे बचने के लिए पाचू बच्चो के खेल की पूरी गभीरता के साथ अपनी बुद्धि से खेल रहा था।

एक चीज इधर पाचू को परेशान करने लगी है कि पाचू जिस बात को भुलाने की कोशिश करता है, उसे वह भुला नही पाता, बल्कि एक को भुलाने की कोशिश मे सब एक समय याद आने लगती हैं। खेलते-खेलते मन कुम्हला जाता है।

'एकाएक 'हटो-बचो' होने लगी। पाचू अपने खयालो से चौंका। अपने हाली-महालियो के साथ दयाल जमीदार आ रहे थे।

"अरे, राम, राम, राम, राम! ये बेचारे सबके सब बीमार पड़ गए! मोनाई ने ऐसा क्या खिला दिया! कहा है मोनाई?"

दयाल बाबू की दृष्टि घूरे के जमघट पर गई। दया उमड़ी।

"मेरी प्रजा पर यह अत्याचार कि जूठन चटाई जा रही है! आखिर ठहरा तो केवट का बच्चा! नीच जाति! चार पैसे टेंट मे करके चन्द्रमा को छूने चला है। कहा है? पकड के लाओ उसे।"

मोनाई हाथ जोडे तब तक मदिर से भागा हुआ चला आ रहा था। दयाल जमीदार ने एक बार सिर से पैर तक देखकर नफरत के साथ कहा—"इनकम टैक्स बहुत बचा लिया है शायद!"

मोनाई आतरिक भय के साथ कापते हुए और भी अधिक गिडगिडाने लगा। भारी शरीर के साथ इतनी दूर तक दौडके आने की थकान और

हाफनी भी चढी थी।

"नही तो अन्नदाता! हे-हे! अ-अ आप बडे है! हे, हे!"

"इन लोगो को क्या हो गया है?" हाथीदात की लकडी की नोक से बीमार ब्राह्मणो को दिखाते हुए दयाल ज़मीदार बोले।

अपराधी की तरह उन ब्राह्मणो को एक नजर देखते हुए, मोनाई हाथ जोडकर बोला—"मैंने तो बहुत चाहा था अन्नदाता, पर ये लोग जादा खाते ही चले गए। मैं निरदोस हू, अन्नदाता! और इन सब बेचारो का भी दोस नही! सब भगवान जी की लीला है।"

मोनाई की बात काटकर दयाल ज़मीदार गरम हो गए।

"अभी इतने बडे भगत नही हुए कि दयाल जमीदार को भागवत सुना सको। हमारा नाम सुना है न तुमने?"

नाम की गोली सीधे मोनाई के दिल पर लगी और लाख सफाई दिखाते हुए भी उनके चेहरे पर डर की लकीरें खिच गई। दयाल जमीदार के पैरो को दूर से झुककर नमस्कार करते हुए बडे सयत भाव से बोला—"आप मालिक है। हमारा जीवन-मरन आपके हाथ मे है। बाकी और क्या कहू, अन्नदाता! मेरा भाग ही खोटा है। भगवानजी जानते हैं, होम करते हाथ जल गए।"

"इन लोगो की दवा-दारू के लिए कौन दाम खर्च करेगा?"

मोनाई इसपर बडी जोर से चौका। दयाल ज़मीदार के चेहरे को एक बार देखकर जरा हकलाते हुए बोला—"द-द-दवा-दारू?"

"इन सबको दवा-दारू के लिए एक-एक रुपया दो। बेचारे बीमार हो तुम्हारी वजह से और सारा दुख इन्हे ही भोगना पडे! याद रखना मोनाई, मेरी प्रजा को यदि कभी कष्ट दिया तो तुम्हे पल-भर ही मे तुम्हारे बाप की हैसियत पर पहुचा दूगा। दो इन सबको एक-एक रुपया।"

बडी सख्ती से अपने चेहरे को निर्विकार रखते हुए मोनाई तनकर खडा रहा। दयाल जमीदार के दोबारा हुक्म करते ही इशारे से अज़ीम को घर की तरफ दौडा दिया।

घूरे की तरफ जरा बढ़ते हुए दयाल जमींदार ने साहूकार मोनाई केवट को दूसरी पटखनी दी।

"मेरी भूखी प्रजा को जूठन खिला-खिलाकर तुम तुच्छ बनाना चाहते हो ? धर्म-कर्म लोप कर देने का इरादा है क्या ? खुद नीच थे, मगर मुझसे तो कह सकते थे। मैं अपनी प्रजा को कम से कम इस तरह जूठन तो न चाटने देता ! गांव के हर एक आदमी को सेर-सेर-भर चावल मेरी तरफ से बांट दो। आज शाम तक यह काम हो जाना चाहिए, समझे !"

हुक्म देकर दयाल ज़मींदार ने अपने पानवरदार की तरफ देखा। फौरन ही चांदी की गंगा-जमुनी डिबिया पेश की गई। पान खाकर दयाल बाबू मुड़े। पुल के पास पांचू बैठा था। दयाल की नज़र पड़ी।

"कहिए, मास्टर बाबू !" कहकर दयाल उसकी तरफ दो कदम आगे बढ़े।

छः दिन का भूखा पांचू यह निश्चय किए बैठा था कि अब न तो वह दयाल से ही किसी तरह का सम्बन्ध रखेगा और न मोनाई से। ये सब स्वार्थी हैं, नीच हैं, पेट-भरे मक्कार हैं। अगर इनको अपने पैसे का घमंड है तो हमको भी अपनी मुफलिसी पर नाज़ है।

पांचू बच्चे की तरह मुंह फुलाए बैठा था। दयाल ने मोनाई को सकटे में ला घसीटा, उसे बड़ी खुशी हुई। कोई दयाल को भी इसी तरह दबा के रगड़ दे तो मजा आ जाए। जी में आया, दयाल से पूछे कि तुमने ही अपनी प्रजा को कौन-सा निहाल कर दिया जो यों अकड़ते हो। शरम भी नहीं आती कम्बख्त को ! मरघट जैसे गांव में छैला बनकर घूम रहा है।

तभी दयाल की आवाज़ कानों में पड़ी, नज़रें मिलीं और मिलते ही सारा विद्रोह गायब ! होंठों पर मुस्कराहट, आंखों में दीनता, वही तपाक से उठकर अदब करने की आदत—गाहक को देखते ही जैसे लड़ाई-पहले के दूकानदार अपनी पेटेंट कवायद शुरू कर देते थे। पांचू यह सब नहीं करना चाहता था। मगर अपने-आपपर उसका जोर नहीं। लाख अनिच्छा होने पर भी नजरें मिलते ही पांचू मदारी के तमाशे की तरह इशारे से

वधा हुआ नाचने लगा। वडी हिफाजत के साथ अपने शीशमहल मे रखे हुए स्वाभिमान को हर पल कंकड की ठेस से बचाता हुआ, (साथ ही साथ उसका परिचय देने की दवी धमकी भी देता हुआ) वह दयाल वावू से मुह-देखी वरतने लगा।

"यो ही, देखने चला आया ये सव।"

"अजी कुछ पूछिए मत," काज़ीजी के दुवलेपन की अदा लिए हुए दयाल जमीदार तुनककर वोले—"देखा आपने ? इन चोर-वाजार वालो ने कैसी लूट मचा रखी है—और यो, दिन-दहाडे ! गवरमैंट के पिट्ठू है साहव ! अग्रेज भी कोई मामूली खोपडी नही है वावू ! क्या पोलीसी भिडाई है कि आप तो सस्ते दामो पर अढतिये से नाज ले गए और पवलिक का कोई खयाल ही नही किया। एक तरफ तो इन वनियो को आदमी के खून का चस्का लगने का मौका देते हैं और फिर जव पवलिक चिल्लाती है तो कट्रोल-आर्डर लगाते हैं। समझा मज़ाक आपने ? माल तो इन मोनाई जैसो के गोदामो मे है, कट्रोल किसपर करोगे !"

कहते हुए दयाल वावू की आखो मे घमड और चालाकी की चमक आ गई। चेहरे पर रौव दुवाला होकर झलका। तर्क-विजेता की दृष्टि से एक वार पाचू को देखकर उन्होने अपने पानवरदार की तरफ ज़रा हाथ वढाया। पल की देर न लगी, पान हाज़िर, ज़र्दा हाज़िर, हाथ पोछने के लिए रेशमी रुमाल हाज़िर। इशारे की ज़रूरत न थी, खानदानी रईस के नौकर मास्टर वावू का अदव करने के लिए झुके।

छ दिन के भूखे मास्टर वावू के सामने खाने के नाम पर पान पेश हुए थे। कुछ भी सही। जी तो चाहता था कि डिव्वे के सारे पान वकरी की तरह चवाते ही चले जाए, मगर आवरू के कायदे आड मे आते थे। वे वडे वनाए दो पान मुह मे रखकर पाचू ने वडे जोश के साथ उन्हे चवाना शुरू किया।

दयाल वावू कहते चले—"अजी साहव, इसीका नाम है व्रिटिश पोलीसी। हिन्दुस्तान का गला हिन्दुस्तानी से ही कटवा रहे हैं। वाद मे

कह देंगे, हम तो अपनी हिटलरी मुसीबत मे मुब्तिला थे। बगाल मे हिन्दुस्तानी मिनिस्टरी, हिन्दुस्तानी कारोबार, हिन्दुस्तानी अफसर—फिर जब आप खुद ही अपने भाइयो को भूखा मार रहे हैं तो इसमे हमारा क्या दोष ? आप लोग स्वराज्य के काबिल नहीं। चलिए साहब, साप भी मर गया और लाठी भी न टूटी। और आप गुलाम के गुलाम बने रहे।"

पान की गिलौरियो को दयाल बाबू ने एक गाल मे दूसरे की तरफ फेरा।

पाचू अपने मुह के पान अब तक खत्म कर चुका था। भूख भटक गई थी।

दयाल बाबू बोले—"असल बात तो यह है कि हममे एका नही। एकता होती तो आज हिन्दुस्तान की यह दशा न होती।"

पाचू दयाल बाबू के मुह की तरफ देख रहा था। उनके रोबीले चेहरे को देख-देखकर उसकी भूख और भी बढ रही थी। वह बराबर सोच रहा था, दयाल घर से खाना खाकर आया होगा। क्या-क्या खाया होगा ? चरपरे मसालो की सुगध कही से उडकर उसकी नाक मे बसने लगी। पाचू को पहले तो अच्छा लगा, फिर तबीयत घबराने लगी। गुस्सा चढा। महा-स्वार्थी और निकम्मा, एकता की दुहाई दे रहा है। ज़रा जोश आ गया, ज़बान अपने-आप खुल गई—

"एकता की दुहाई देना भी आजकल का एक फैशन है। चिल्लाते सब हैं, लेकिन कोई उसे सही तरीके से महसूस नही करता।"

कहते-कहते पाचू के चेहरे पर सच्चाई की तमक आ गई। वह अनु-भव करने लगा जैसे उसका बोझ हल्का हो गया हो। इससे उसे सन्तोष हुआ।

दयाल ज़मीदार यह सुनकर चौक पडे। पाचू के चेहरे को गौर से देखने लगे।

पाचू का हौसला और बढा। वह कहता चला गया—"देश की

गुलामी तभी दूर हो सकती है जब हमारे भद्र लोग अपने मूर्खतापूर्ण स्वार्थ और झूठे अभिमान को छोडकर बुद्धि से काम ले। गुलामी के बोझ से झुकी हुई जिन्दगी को भद्रवर्ग अपनी खानदानी, माली हैसियत और अपनी साक्षरता की खपच्चियो के सहारे खडा कर कागज के कुम्भकरण-सा अकड जाता है। यह कहकर हम अग्रेजो की बराबरी करना चाहते है कि भारतवर्ष मे एकता नही है। अगर किसी स्वाधीन देश का कोई पुरुष यह सवाल करे तो ठीक है, लेकिन हम किससे यह सवाल करते हैं? क्या हम भारतवर्ष मे शामिल नही? तब फिर वह कमजोरी, जो हम सबमे बतलाते हैं—क्या वह खुद हमारे मे नही है? अपनी कमजोरी को दूर किए बिना हम पडोसी की ओर उगली उठाने के हकदार नही। हरगिज नही।"

पाचू यह सब कह तो गया, इसकी उसे खुशी थी, मगर दयाल का डर भी साथ-साथ लगा रहा। बुरा मान रहे होगे। उह, ठेंगे से! मगर बुरा तो मान ही रहे होगे। पर अब तो एक बार तीर कमान से निकल ही चुका है। जैसे सत्यानाश वैसे साढे सत्यानाश! कोई फासी चढा तो नही देंगे दयाल जमीदार। और उनसे किसी तरह के लाभ की भी आशा नही। तब फिर पाचू दयाल बाबू से क्यो दबे? मगर दबता तो है ही। बात कहते हुए इसीलिए दम अदर ही अदर खिसका जा रहा था। अपने रौब की सतह को एक-सा रखने के लिए पाचू अपने स्वाभाविक तरीके से न बोलकर इस तरह से दयाल बाबू के सामने बोल रहा था, जैसे क्लास-रूम मे लडके पटा रहा हो—और वह भी इन्स्पेक्टर के सामने। कह चुकने के बाद एक-दम से नजरे आमने-सामने होने पर वह घबरा उठा। उस घबराहट को छिपाने के लिए वह खखारते हुए दूसरी तरफ मुह घुमाकर थूकने लगा। इससे मुह का बासीपन कुछ हल्का हुआ।

कलेक्टर और जॉर्डन साहब तक पहुचनेवाला आदमी, विद्वान, फिर तर्करत्न केशव शास्त्री का बेटा—दयाल बाबू पर भी पाचू का रौब गालिब था। इसके अलावा अपने नहले पर यह दहला पडते देख दयाल बाबू पहले

तो चौंके, फिर ज़रा-ज़रा झेप भी मालूम हुई। कुछ जवाब न सूझता था, खिसयाने-से खडे सोचते रहे। बीच मे नौकर के हाथ से पान लेते हुए, वात सुनते-सुनते डिबिया भी ले ली। पान मुह मे रख लिए, मगर डिबिया वानो की रौ मे उन्हीके पास रही। जब पाचू ने अपनी वात खत्म की तो दयाल वावू ने वात को नया 'स्टार्ट' देने के लिए चौंककर पहले तो अपने दाहिने हाथ मे पनडिब्बी को महसूस किया, फिर डिबिया खोल, बसना हटाकर, पाचू के आगे पान पेश किए।

पान खाली पेट मे लगते थे। पाचू नही खाना चाहता था। दयाल ज़मींदार अपनापन दिखलाते हुए ज़ोर देकर मस्तानी आवाज़ मे कहने लगे—"अरे खाओ जी! हमको तुम्हारी ये भगतवाजी ज्यादा जमती नही, उस्ताद!"

होंठो के किनारो पर मुस्कराहट और खुमार-भरी आखो मे शिकायत दरसाकर दयाल वावू घुले। पाचू पिघल गया। घमड दिमाग मे विजली की बारीक लकीर की तरह कौंध गया। भूख के फीके चेहरे पर दर्प और खुशी की चमक आ गई। पाचू ने मुस्कराकर डिबिया से पान निकाले और कहा—"खिला तो रहे है। मगर याद रखिए, शौक लग जाएगा तो आप ही के यहा आकर दिन-भर पान खाया करूगा। आजकल ईश्वर की दया से वेकारी के महकमे मे तो हू ही, दिन-भर।"

पाचू दयाल वावू को 'तुम' कहकर पुकारना चाहता था। लाख चाहने पर भी जीभ न लौटी। फिर भी दयाल ज़मींदार पर अपनापन और हक जताकर पाचू ने वरावरी का दरजा तो पक्का कर ही लिया। अब वह दयाल वावू से 'तुम' की वेतकल्लुफी तक रिश्ता वाधकर मोनाई को अपना प्रभाव दिखलाना चाहता था।

मोनाई कुछ दूर पर ज़रा अकेला-सा खडा था। वरावरी का दरजा लाख समरथवान हो जाने पर भी उसे हासिल नही। एक तो भगवान जी ने ही उसे छोटा बनाके धरती पर भेजा है, दूसरे वह पढा-लिखा नहीं। पर इन दोनो वातो मे भी मुक्ख वात वेपढे-लिखे रह जाने की आती है।

जमाना 'गुड्डमानी-ईमफून' का है। गाव मे और भी जितने गाहक, ... लडके पडे हैं, उन्हे कोई टके सेर भी नही पूछता, और एक पान ... कारन इन सडे भए गाव मे कलक्टर जैसे वडे-वडे अफसर आते हैं। ... जमीदार, दयाल जमीदार ऐसे-ऐसे लोग, पाच को हत-हत ... रखते हैं। ये विद्या का परताप है।

न्याडा को आलिम-फाजिल वनाकर मोनाई अपनी उस कमी को पूरा करना चाहता था। दिन-रात उसकी पढाई के पीछे दीवाना। जब से गाव मे स्कूल खुला है, गरीव न्याडा का लट्टू इतवार के दिन भी ... से नही उतर पाता। सुवह जब उठो तव से लेकर रात मे जब तक ... जाओ, वरावर पढते रहो, पढाई की ही वातें सोचते रहो। जिस तरह मोनाई सुवह से रात तक अपना रोजगार करता रहता है, रोजगार की ही वातें सोचता रहता है, उसी तरह वह अपने लडके को भी कर्मठ देखना चाहता है। जव वह न्याडा की उमर का था, तभी से उसने काम की फिकर सभाली थी, इसलिए वह न्याडा को भी उस काविल समझता है। जव गाव के अच्छे दिन थे, सुवह गोविन्द मास्टर दो घटे घर आकर पढाते थे। उनके वाद स्कूल जाता था। साझ को स्कूल से लौटकर आते ही, हाथ-मुह धोकर, जरा पानी-पिलाव के वाद, फिर अपनी किताव लेकर जोर-जोर से घोखने वैठ जाता था। जहा आवाज गिरी कि मोनाई ने डाटा। थोडी देर वाद कानाई मास्टर आकर डपट जाते थे। मोनाई ने उन्हे इस मतलव से रखा था कि वह न्याडा को स्कूल की सारी कितावें रटा-रटाकर याद करा दें, जिससे न्याडा इम्तहान मे फर्स्ट आया करे, मोनाई सोचता था, भगवान जी का दिया वहुत है, न्याडा पढ-लिखकर एक वार विलायत पास करके आवे तो वडा सरकारी अफसर वन जाएगा। फिर सभी वडे-वडे लोगो मे मेरी रसाई हो जाएगी। करोडो वना लूगा।

मोनाई केवट की यह सवसे वडी इच्छा थी कि मरने से पहले वह एक वहुत वडी जमींदारी खरीद ले, कलकत्ता के वडे-वडे वैपारियो मे उसकी नाउ पुज जाए, कलकत्ते मे ऊची-ऊची विल्डिगें वन जाए और एक करोड

की पुडिया मुट्ठी मे हो। वह अकेले भी यह तमन्ना पूरी कर सकता था, अगर शहर मे पैदा हुआ होता। गाव मे पैदा होना—और फिर केवट के घर मे पैदा होना—यह सबसे वडा अभिशाप था, जिससे लाख सिर पटकने पर भी मोनाई मुक्त नही हो सकता था। परम्परा से जिस जगह वह दवता चला आया है, वहा ऊपर उठने के लिए उसे सहारा चाहिए। पैसा लाख हो जाए, मगर कुलीनता के कगारे पर चूक से भी पैर पडते ही उसे हीन भावना के गहरे खड्ड मे गिर जाना पडता है। अपना केवटपन किसी हद तक धोने के लिए मोनाई कठी लेकर वैष्णव वना, लेकिन उसमे केवल अपना मन ही वदल गया, कोई खास फायदा न पहुचा। गाव मे एक मदिर भी वनवा दिया। उसके वाद भी गरीव से गरीव वामन-कायथ के द्वार पर जाकर उसे जमीन पर ही वैठना नसीव हुआ। विद्वान और सरकारी अफसर की जात पूछ जाती है, इसलिए मोनाई न्याडा को पढाने के प्रति सतर्क था।

इस वक्त दयाल ज़मीदार ने उसे गहरी पटखनी दी थी। 'चित भी मेरी, पट भी मेरी' वाला हिसाव कर दिया था। आप ही 'परेत-भोज' का डड भी मेरे सिर पर लादा और अव एक-एक रुपया भी दो। ये न्याव करने आए है साले। और ऊपर से गाव-भर मे एक-एक सेर चावल वाटो। जैसे वाप का माल हो, उठा के दे दिया। हा भई, वाप का माल तो है ही, उसकी ज़मीदारी मे रहते हैं। वह इस जगह का राजा है। जो चाहे कर सकता है।

सव मिलाकर दयाल ज़मीदार के कारन छ-सात सौ की चपेट पड गई। अव तक तो इन्हे मौका नही मिला था, उस दिन की वारदात से ज रा-सा रस्ता पाय गए है, सो धुर्रे उडाय के धर देंगे। गाव के आधे पट्टे अव मेरे नाम पर हैं, यह साले को खलना है। भगवान जी ने मुझे दिए सो भोगता हू। इस साले को जलन क्यो होती है? किसीकी वढती आखो से नही देख सकते ये वडे लोग। ससुर एकता-एकता' चिल्लाते है। अपने गरीव भाइयो का तो गला काटके रख देते है, सुराज का क्या

लचार पडेगा ? अरे, यह लोग भी कै दिन और ये अत्याचार कर सकेंगे ? इनका भी तो अन्त आवेगा किसी दिन । भगवान जी सबका न्याव करते है। उनकी लीला हो गई तो किसी दिन दयाल की सारी जमीदारी मैं खरीदूगा और इसीकी हवेली मे जाके रहूगा। कर ले, आज इसका ज़माना है।

मोनाई ने एक दबी उसास भरी, कमर पर दोनो हाथ टेककर ज़रा तन गया। घर की तरफ देखने लगा—अज़ीमा नही आया अभी तक। पटक दू रुपया ससुरे के आगे, इज्ज़त बचे। मगर कमर तोड डाली साले ने। और अब तो जमराज ड्योढी सूघ गया है, जो थाने तक चढ बैठा तो मुझे जेहल करा के ही मानेगा—कफ्फन तक लूट के खा जाएगा मेरा। मगर पुलिस मे ही देना था मुझे, तो उस दिन दारोगा जी के सामने मेरा गुदाम दबो-ढको क्यो करवा दिया ? ज़रा-सी सिकैत मे तो मेरे ऊपर साढे-साती चढ जाती। तब फिर चाल क्या है इसकी ? दयाल ज़मीदार बेफज़ूल मे हमदर्दी वाले जीव नहीं। कुछ समझ मे नहीं आता। बाकी ये पक्की मानो, कही ऐसे मे छुरी भोकेगा मुझे, जहा पानी भी न मिले। भगवान जी, इत्ती सेवा करता हू तुम्हारी। फिर भी तुम्हारे भगत की छाती पर दुश्मन सवार हो जाए ? कहा गए गज के फन्द छुडानेवाले ? मेरी बेर इत्ती देर क्यो लगाई ? अज़ीमा साला कहा मर गया कम्बखत ! ये दयाल ननुआ अभी मेरी इज्ज़त टके सेर बेचने लगेगा। ये देखोऽ, फिर बमका साऽला !

"बाप का ज़माना भूल गया है शायद !" दयाल ज़मीदार की आवाज़ कानो मे आई—छेदाशीं ! हरामज़ादा का अक्कल मे भाला भोक देओ। बोलो साला के जे दयाल तोमार बाबार प्रजा नेई जे तीन घाटा तक दर-वाज़े पर खडा रहेगा।"

एक सेकड के लिए मोनाई की आखें मिच गई। ज़िन्दगी-भर की आबरू गई जो एक पड एऽझपटा ! हे भगवान-परमूनाथ ! अज़ीमा साला आया ! "वो आ गया राजा बहादर !"

मोनाई ने सतोष की एक गहरी सास ली और छेदासिंह से कतरा-कर हाथ जोडे हुए ज़मीदार की ओर बढा। वह हाफ गया था। कहने लगा—"मेरी इत्ती मजाल कि आपको खडा रखू ? भगवानजी ने यह दिन तो दिखाया कि सरकार की गालिया सुनने को मिली। अब भरोसा भया कि हजूर ने मुझे अपनी सरनागत मे ले लिया है। मालिक जब गालिया दे तो समझो कि दास का अहोभाग है।"

दयाल ज़मीदार के चेहरे पर सारे भाव तन गए थे। गर्दन मे भी तनाव आ गया था। पान चबाते हुए जबडे चल रहे थे, पानो को घटी पर होठो की दर्प-भरी मुस्कान दब-दबकर झलक मार रही थी। बायें हाथ मे हाथीदात की छडी के सहारे कमर ज़रा झुकी हुई थी, और दाहिने हाथ मे अगूठियो के नगीने दमक रहे थे। मोनाई की तरफ से मुह फिराकर दयाल ज़मीदार ज़रा ऊचे आसमान को घेरकर फैली हुई 'बैसाख की धूप' को देख रहे थे।

मोनाई उनके चरण छूने को आगे बढा। दयाल ज़मीदार ने पैर खिसका लिए। दयाल ज़मीदार मन ही मन फूल उठे। "आ गया ठिकाने पर। चौपट करके फेक दूगा साले को। इसके गोदाम मे दो हज़ार बोरे से कम न होगे। काट-पीटकर भी डेढ'क लाख बचा लेगा पट्ठा। कहा-कहा से छिपाकर धान इकट्ठा किया है इसने ! मुझे रत्ती-भर भी खबर न लगने पाई, बडा काइया है।'

मोनाई की खुशामद दयाल के दिमाग को अपने हथकडे दिखाने के लिए उकसा रही थी। मोनाई की बाते कानो मे पडकर दयाल के खयालो की सतह को छूकर निकल जाती थी। "पुलिस मे दे दूगा तो मेरे पल्ले कुछ न पडेगा। पुलिस वाले सब हडप कर जाएगे। मिलिटरी वाले दो हज़ार बोरो के लिए पाच सौ इससे क्यो न झडप लू ? बुरा क्या है ? अगर अभी मैं पुलिस मे रिपोर्ट कर दू तो कौडी का भी न रह जाएगा और जेल मे चक्की पीसनी पडेगी, सो अलग ! यो पाच ही सौ बोरे तो देने पडेगे मुझे। फिर भी डेढ'क हज़ार बोरे के करीब बच रहेगे साले के पास। लाख-

सवा लाख के रोकड़े कर लेगा। कुछ कम है नीच जाति के लिए? क्या ज़माना आ लगा है! ये साले कोरी-चमार-केवट भी अव लखपती होने लगे! मगर बड़ा काइयां है भाई! मान गए। गाव के आधे पट्टे अपने नाम करवा लिए। बडी गहरी चोट दी थी साले ने। मेरी बराबरी करने चला था। बदमाश से हज़ार बोरे झटकने चाहिए।"

दयाल ज़मीदार ने नजर तिरछी करके मोनाई को देखा। गीता-पुरान की दुहाई देने के बाद मोनाई अब दयाल ज़मीदार की एक निहायत नमक-हलाल फरमाबरदार रियाया की तरह आखे झुकाए, हाथ बाधे, दो कदम हटकर अदब से खड़ा हुआ था। अज़ीम पास आ चुका था। मोनाई ने अजीम के हाथो से दस-दस के पाच नोट और एक चादी का रुपया लेकर दयाल ज़मीदार के चरणो पर भेंट चढाकर एक बार फिर पैर छुए और हाथ जोडकर कहने लगा—"जो कुछ पतरम-पुसपम आपके इस दास से बन पडा बस उसीसे अब छिमा कर दें मालिक! चरनो की सरन मे पटा हू। सरकार की जूठन से अपने बाल-बच्चे पाल लेता हू, उनपर दया करें अन्नदाता। भगवान जी आपको सदा सुखी रखें, मेरे मालिक।"

मोनाई खुशामद मे दयाल ज़मीदार के पाव दबा रहा था। घूरे पर से कोई बडी ज़ोर से हसा। किसीका हिंसक आह्लाद मोनाई के अह को ठोकर मारकर, दयाल ज़मीदार के अह का प्रिय बना।

भरे गाव मे, गाव-भर की भूख के ठेकेदार को दयाल ज़मीदार ने अपने जूतो तले लाकर दुनिया को यह दिखला दिया कि उनकी शक्ति कितनी बडी है। श्री दयालचाद विश्वास ने आज अपनी चौदह पीढियो को तारकर, कुल की परम्परागत मान-प्रतिष्ठा मे चार चाद लगा दिए थे। उन्होंने दुनिया को दिखला दिया कि नीच जाति सदा नीच ही रहेगी।

"हु! बडे पख लगाकर उडने चला था।" ज़मीदार सोचने लगे—"साला, हम खानदानी रईसो से होड लेना चाहता था। मदिर बनवा दिया साहब, गाव मे। आधे पट्टे खरीदकर जी-हुज़ूर कहलाने की हविस

लगी थी जनाव को। मुझसे, दयाल ज़मीदार से, टक्कर लेने के लिए वह मेरी प्रजा को भूखा मार-मारकर अपनी ताकत दिखाना चाहता था। ले वच्चू अव देख ले कि कौन शक्तिशाली है। सारा गाव आखें खोल-कर देख रहा है कि अपनी प्रजा पर अत्याचार करनेवाले दुष्ट को दयाल ज़मीदार कितना कठोर दण्ड देते हैं! देख ले प्रजा, ज़मीदार अव भी अपनी प्रजा का कितना पालन कर सकता है? नमकहराम हैं, साले सव के सव!"

जिनके लिए खुद दयाल ज़मीदार इतना कष्ट उठाकर यहा पधारे, जिनके एक वडे भारी शत्रु को उन्होंने चुटकियो मे परास्त कर दिखाया, जूठन चाटनेवालो को अन्न और रोगियो को दवा दिलाई, क्या कुछ न कर दिखाया दयाल ज़मीदार ने! लेकिन, जिसके लिए उन्होंने यह सव कुछ किया उसी महामूर्ख जनता पर कोई भी असर पडता नही दीखता। किसी-ने उनकी जय-जयकार भी नही वोली? उनके उस हसनेवाले प्रशसक ने भी नही! "कम्वख्त अव तो इधर देख भी नही रहा। घूरे की जूठन खाने मे जुटा हुआ है। कमीने है सवके सव! और नालायक! आज तो मुझे प्रणाम भी करने नही आए। हरामखोर!"

दयाल ज़मीदार की आखो के सामने सवसे पहले मोनाई का मदिर आता था। फिर वे पेट-भरे मरभुखे, मरीज़, जिजमानो की दया के टुकडो पर पलनेवाले भिखारी ब्राह्मण—जो उनसे और सवसे जाति मे उच्च होने के कारण पूज्य थे, मगर शक्ति मे कितने नगण्य, कितने हीन! "और उन घूरे चाटनेवाले कगलो मे वडे वडे दिग्गज ब्राह्मण भी तो दिखाई पड रहे हैं। ये अपने दिवू भट्टाचार्य का पोता—क्या भला-सा नाम है—खैर होगा, जाने दो। कितने नाम याद रहे, और वह भी इन पापियो के? सच पूछो तो ब्राह्मणो ने ही भारतवर्ष का सत्यानाश किया है।" दयाल वावू जोश मे आकर सोचने लगे—"जव से ये गिरे हिन्दू धर्म का लोप हो गया। जव हमारे पूज्य ही गिर गए तो क्षत्रिय वेचारे अकेले कहा तक अपने देश की सेवा करते रहेंगे? फिर भी, क्षत्रियो ने देश के लिए क्या-क्या

नही किया ? भगवान रामचन्द्र, श्रीकृष्ण, बुद्ध, महावीर ऐसे बड़े-बड़े अवतार, और भीम, अर्जुन, राणा प्रताप, वीर शिवाजी से लेकर पृथ्वीराज चौहान तक सब महापुरुष क्षत्रिय ही थे, जो शब्दवेधी बाण तक चला सकते थे। जर्मनी ने वेद चुरा लिए हमारे, नही तो आज इस पृथ्वी पर क्षत्रियो का ही चक्रवर्ती साम्राज्य होता। पर आपस की फूट खा गई। नही तो आज हमारे भारतवर्ष मे अग्रेज भला राज कर सकते थे ? बनिये भी कभी राजा हो सकते हैं ? मगर अब कलियुग मे तो हो ही रहे हैं। देखो, गाधी जैसा महात्मा वैश्यो मे जन्म लेता है। शास्त्रो ने ठीक ही लिखा है, घोर कलियुग आ गया, चारो चरण रख दिए। तभी तो हिन्दू धर्म की यह दुर्दशा हो रही है। ऊची जात की मर्यादा लोप होती जा रही है। कुलीनो की लाज का यह हाल है कि घूरे की जूठन लोग खुले आम चाटते हैं। हाय रे हिन्दू धर्म ! कितना पतन हो गया है हमारे भारतवर्ष का !"

दयाल जमीदार सहसा महसूस करने लगे कि एक उनको छोडकर सारा भारतवर्ष, सारी दुनिया रसातल की ओर चली जा रही है। पतन के खड्ड की ओर आखें मूदकर बढती हुई महामूढ मानवता के प्रति उनके हृदय मे अपार करुणा का स्रोत फूट पडा। दयाल जमीदार सारे ससार के कल्याण की चिन्ता करने लगे। पतितो के उद्धार की प्रबल आकाक्षा उनके मन मे उत्पन्न हुई। सोचने लगे, बडे काम करने से अपना भी बडा नाम होगा और हिन्दू धर्म का, देश का उद्धार भी हो जाएगा। फिर सोचा, कौन-सा बडा काम किया जाए। मदिर धर्मशाला बनवाने से अब नाम नहीं होता। ये साले कोरी-चमार-केवट भी मदिर बनवाने लगे हैं अब तो।

बडे होने का कोई उपाय नही सूझ पडता था। दयाल जमीदार का जी कुछ-कुछ खट्टा होने लगा। सोचने लगे, मैंने अपनी सारी जिन्दगी

बर्बाद कर दी। मुझे कुछ काम करना चाहिए। वैसे कर तो रहा हू ये—अभी-अभी ही, भूखो को अन्न दिलवाया, रोगियो को दवा दिलवा दी, इस चिलचिलाती हुई धूप मे खडा-खडा अपने गाव की सेवा कर रहा हू। दुनिया के सामने एक महान आदर्श उपस्थित कर दिया है मैंने। अगर अखबारो मे छप जाए तो सारी दुनिया जान लेगी कि श्री दयाल चाद विश्वास देश के महान जमीदारो मे से हैं। और जो नाम होने लगे तो बस सीधे पोलीटिक्स मे नेता बन जाऊगा। इस बार चुनाव हो तो उसमे भी खडा हो जाऊगा। हिन्दू महासभा के टिकट पर खडा हो जाऊगा। काग्रेस के टिकट पर भी खडा हो सकता हू मगर उसमे जेल जाना पडता है। हिन्दू महासभा ही ठीक है। नाम का नाम होगा और परम पवित्र सनातन धर्म की रक्षा भी होती रहेगी। बस यही ठीक है। अब जीवन मे जरा आगे बढना चाहिए। इतिहास मे नाम आना चाहिए। मास्टर बाबू के जरिये यह काम हो सकता है। बडे काम का है यह लडका। इससे अपनी प्रशसा के लेख लिखवाकर छपवा दूगा। मैं क्या, यही मास्टरवा छपा देगा। हीले-बहाने से दस-बीस-पचास इसकी जेब मे झुका दिया करूगा। बस, फिर तो यह अपनी सारी अग्रेज़ी की नालिज मेरे ऊपर खतम कर देगा। बडा विद्वान आदमी है यह पाचू भी। मगर है पट्ठा घमडी। खैर! कोई बुरी बात नही। विद्या पर तो गर्व होना ही चाहिए। लक्ष्मी और सरस्वती—यही तो गर्व करने लायक है। मेरे पास धनबल है, इसके पास बुद्धिबल है। यह मुझे अखबारो मे प्रसिद्ध कर देगा, मैं इसके और इसके परिवार को इस अकाल से मुक्त कर दूगा।

दयाल जमीदार के मन मे नई आशा, नया उत्साह जागा। उन्होने पाचू की तरफ देखा।

पाचू सिर झुकाए किसी गहरे खयाल मे डूबा हुआ था।

पान चबाते हुए पाचू दयाल जमीदार मे बराबरी की कल्पना अवश्य

कर रहा था, किन्तु उसका भूखा पेट व्यग्य बनकर मन मे निरतर चुभता रहा।

इधर जब कभी वह दयाल या मोनाई के सामने आता था तो लाख सतर्क रहने पर भी उसे अपनी लघुता का भास होने लगता था। व्यवहार की दुनिया ने धीरे-धीरे उसे यह महसूस करा दिया कि विद्या और बुद्धि के बल पर आदमी अपने बडप्पन की साख नही पुजा सकता। साख पुजाने के लिए पैसा चाहिए। पैसा सबसे बडी शक्ति है। दूसरे ही क्षण पाचू अपने इन विचारो को हीन मानकर उन्हे उपेक्षा की दृष्टि से देखता था। यह सोचकर उसे बडा बल मिलता था कि दुनिया मे सदा से ही बुद्धि को धन से भी ऊचा स्थान मिला है। वह सोचता कि अगर वाल्मीकि न होते तो राजा रामचन्द्र को कौन जानता ? रवीन्द्रनाथ यदि कवि न होते तो प्रिंस द्वारकानाथ टैगोर के नाती के रूप मे उन्हे कौन पूजता ? वह खुद अगर पढा-लिखा न होता तो दयाल क्या उसकी इस तरह लल्लो-पत्तो करते ?

लेकिन यह सब होते हुए भी वह दयाल के आगे कितना शक्तिहीन, कितना नगण्य है !

समुद्र की लहरो की तरह ऊचे-नीचे विचार आगे बढते और फिर पीछे हट जाते थे। वह सोचने लगता कि शिक्षित निर्धन न होकर अगर वह मूर्ख धनी होता तो सुखी रहता। सभ्य समाज मे मूर्ख धनी का स्थान शिक्षित निर्धन से अधिक सुरक्षित होता है। वह और उसके विद्वान पिता अपने परिवार के साथ गाव के किसी भी दूसरे गवार की तरह ही भूखो मर रहे है, जबकि दयाल जमीदार तोद पर हाथ फेरकर गुलछर्रे उडाता है। दयाल, मोनाई शक्तिमान है—केवल इसीलिए कि उनके पास पैसा है।

मन के अधेरे मे पाचू डूबने लगा। दम घुटने लगा। एक आह गले से अटकती हुई बाहर निकली और फिर वैसे ही दबा दी गई। पाचू का सिर झुका हुआ था, हथेली से ठुड्डी पकडे हुए, बाया हाथ कमर पर टिका हुआ, दाहिना पैर एक कदम पीछे और बाया आगे जमाकर वह इतनी देर

से खडा हुआ था। मजबूरी की इस दम घोटनेवाली भावना मे शरीर अस्थिर हो उठा। हाथ ठुड्डी से हटकर नीचे आ गया, दोनो हाथ कमर के पीछे जाकर बध गए, और दोनो पाव बराबर आ गए। वह अनमना हो गया।

चीलो, कौओ लौर कुत्तो के सामूहिक शोर के प्रति उसके कान चेतन हुए। पाचू ने सिर उठाकर सामने देखा—मोनाई, अज़ीम एक तरफ, दयाल ज़मीदार अपने हाली-महालियो के साथ दूसरी तरफ, इन दोनो के बीच से गुजरकर पाचू की नज़रें मोनाई के मदिर तक पड रही थी। पाचू ने देखा, मदिर के दरवाज़े पर पछाही लठैत अब पहरा नही दे रहे थे। मदिर के सामने पडे हुए ब्राह्मणो पर आखे फिसलती थी, मगर वह पहले घूरे को ही देखना चाहता था। वहा भी भीड इस वक्त तक तितर-बितर हो चुकी थी, इक्का-दुक्का आदमी चील, कौओ, और कुत्तो के जमघट मे एक शक्तिहीन शत्रु बनकर घूरे को घूरता हुआ दिखाई दे रहा था।

पाचू को यह दृश्य अच्छा न लगा। घूरा इस वक्त उसे मरघट की तरह मनहूस लग रहा था। पहले आदमियो का मेला लगा हुआ था। लोग पर लोग टूट रहे थे। चील, कौए और कुत्तो से घमासन लडाई छिडी हुई थी। आदमी तगडा पड रहा था। उस दृश्य मे कितना जीवन था, कितनी क्रियाशीलता थी! और अब? वह मैदान छोडकर चला गया है। क्या, बात क्या है? घूरे पर की जूठन भी अभी खत्म नही हुई। कुछ देर पहले झुड के झुड आदमी पेट के लिए आपस मे जितना लड रहे थे, उतना वे अपना पेट भर नही सके थे। तब फिर वे चले क्यो गए?

तुरत ही पाचू को मोनाई के घर की गोलियो और लाठियो की याद आ गई। सारी बात उसके दिमाग मे साफ झलक उठी। आदमी भूख की तकलीफ सहते-सहते टूट ज़रूर गया है, परन्तु इतने दिनो तक अह के साथ पीडा के सहवास ने उसे एक तरह से इसका आदी भी बना दिया है। अन्न पाने की झूठी आशा लिए हुए, भूख से लडकर दिन गुज़ारते हुए भी वह

जीवित है, परन्तु गोलियो और लाठियो से लडने जाकर उसे तुरन्त ही अपनी जिन्दगी से हाथ धोना पडता। आदमी जीवन से प्यार करता है, मौत से, जहा तक बन पडता है, वह दूर ही रहना चाहता है।

मौत के ठेकेदार ज़मीदार दयाल विश्वास को सामने देखकर भूखे हट गए थे। उनके पैर हट जाने के लिए सामूहिक रूप से अपने-आप उठ पडे थे। अब चीलों और कौओ के समान शत्रु रह गए थे। इनका शोर और काव-काव हवा के ज़र्रे-ज़र्रे मे भर गया था। कान उस शोर के इस कदर आदी हो चुके थे कि ध्यान दिए बगैर वे आवाज़ें अब खलती नहीं थी—एक तरह से सुनाई ही नही देती थी।

एक बार पहले भी जब इस हगामे से आदमियो की चीख-चिल्लाहट और कराह कम होते-होते मिटने लगी थी, तब पाचू के कानो ने जागकर उस कमी को महसूस किया था, उसकी आखें फौरन ही उठ गई थी। लोगो के हटकर चले जाने पर भी उसका ध्यान गया था। मगर उस वक्त दयाल ज़मीदार बडे जोरो के साथ मोनाई के धुर्रे उडा रहे थे। पाचू की दिलचस्पी उस वक्त उसमे ही थी। उन भूख के मतवालो को नज़र-अन्दाज़ करके, वह दयाल ज़मीदार के रौब मे, मोनाई पर अपनी विजय का अनुभव करने मे फसा हुआ था। बाद मे यह नशा धीरे-धीरे उतर चला। वह फिर सिर झुकाकर सोचने लगा था कि इन हारनेवाले और हरानेवाले दो पूजीशाहो के सामने उसकी हस्ती ही क्या है? चाहने पर पल-भर मे दयाल ज़मीदार उसका भी पानी इसी तरह खडे-खडे उतार सकता है। चाहने पर मोनाई भी उसे मखमल मे लपेटकर दस मार सकता है। और पाचू चाहने पर भी इन दोनो मे से किसीको कुछ भी नही कह सकता, क्योकि वह कायर है। गाव के कमतरीन इसान भी पाचू से अच्छे है। वे अब दयाल या मोनाई की सलामने-खुशामदे तो नही करते।

कोल्हू के बैल की तरह हीनता के चक्कर मे घूमता हुआ पाचू अपने अपाहिजपन से खीझ उठा। लेकिन इस हार, शर्म और बेचैनी से भागकर वह जा ही कहा सकता है? अपने अदर से वह इस गतिरोध को क्योकर

दूर करे ? उसके दिमाग की ऊपरी सतह मे अनेको उखडे-उखडे-से विचार, तालाव के साफ पानी के अन्दर तेज़ी से आती-जाती कतराती हुई मछलियो की तरह झलकते तो थे, मगर चेतन बुद्धि की पकड मे वे नही आ रहे थे। पाच् विचार-शून्य, सिर झुकाए खडा था।

दयाल ज़मीदार पाचू मे अपनी पब्लिसिटी कराने का निश्चय कर उसकी ओर देखने लगे। उन्होने सोचा, किसी गहरे खयाल मे डूवा हुआ है।

उसका ध्यान अपनी ओर आकृष्ट करते हुए दयाल ज़मीदार वोले—"देख लिया मास्टर, ये हैं अपने देशभाई। लाखो चूसकर इक्यावन रुपये की गुठली थूक रहे हैं जैसे देश पर वडा भारी एहसान कर रहे हो।"

कहते हुए दयाल ने रुपयो को पैर से ठुकरा दिया। तैश मे आकर वोला—"चार पैसे कमाकर नवावजादा हो गया है साला। वो दिन भूल गया जव घर मे खाने के भी लाले पडे हुए थे।"

मोनाई सिर झुकाए, हाथ जोडे, चुपचाप खडा था। दयाल कहते गए—"एक तो सडा हुआ अन्न खिलाकर इतने ब्राह्मणो को मौत के मुह मे डाल दिया, और अव इक्यावन रुपये देकर घनश्यामदास विडला वनना चाहता है, कमीना! इससे पूछो भला, इक्यावन रुपल्ली मे डॉक्टर क्या अपने हाड-मास से जिलाएगा इतने मरीज़ो को ?"

मोनाई ने देखा, देवता सतुष्ट नही हुए। वह पहले से ही जानता था। विनयपूर्वक वोला—"मेरे पास रुपये होते तो अपनी जान तक देने से न चूकता। वामन ठाकुर की सेवा मे अगर तन की चमडी भी अरपन कर द् तो भी उरिन नही हो सकता। राजा वहादर तो जानते ही हैं कि उस दिन की वारदात मे जो दो-चार पैसे वाल-वच्चो के लिए कमाए थे सो भी भगवान जी ने ले लिए। दुक्खम सुक्खम किसी तरह "

"दुक्खम-सुक्खम! हुं!" दयाल ने मुह वनाया, फिर आवाज मे तेज़ी लाए—"और वे हज़ारो वोरे जो तुम्हारे तहखाने मे चुने हुए हैं ?"

मोनाई इसका जवाव देने के लिए तैयार था। फौरन वोला—"वो आपके है मालिक। आपके राज मे जो कुछ भी है, वो सव हज़ूर का

ही है।"

यह कहकर मोनाई ने एक दबी निसास छोडी जो दयाल जमींदार तक को सुनाई दी।

दयाल तमककर बोले—"देख लिया न मास्टर इस कमीने को। एहसान मानना तो दूर, उलटे ताने कसता है। साला मेरी प्रजा को भूखा मार-मारकर अपनी तिजोरी भरता रहा। गाव मे गोलिया चलानी पडी इस इस कमीने के कारण। दारोगाजी की नज़रो से इसका गोदाम बचाया मैंने, नही तो आज जेल मे चक्की पीसता होता। इसके अपराधो की सीमा है भला? बादशाही होती तो साले की खाल खिचवाकर चील-गिद्धो को खिला देता। धन के लोभ मे इस कमीने ने बेचारे निर्दोष ब्राह्मणो पर यह अत्याचार किया। मेरा तो कलेजा फटा जाता है अपने देशवासियो की ये दुर्दशा देख-देखकर। छेदाशिंग, तोड दो इसका गोदाम।"

मोनाई की बनिया-बुद्धि जाग उठी, चाल सूझी। बिना घबराए, बिना झिझके, बडी शान्ति के साथ उसने तुरन्त ही हाथ जोडकर कहा—"इत्ती तकलीफ काहे को करते हैं मालिक? चार मजदूरे मेरे साथ कीजिए। आप जहा कहे तहा बोरे धरवाय दू। इस बारदात के बाद मैं तो आपै घबराय उठा हू। सत्त कहता हू। उस दिन आपने तो इस दास के लिए बडी कोसिस कर दीनी, मुल पुलुस वालो की निगाहै आप समझैं कि बडी पत्थरफोड होती हैं। तब से तीन बार दरोगाजी का आदमी आय चुका है मेरे पास। दस हज़ार मागता है नही तो तलासी लेवेगा।"

दयाल जमींदार चक्कर मे आ गए। एक नया दुश्मन, उससे भी अधिक शक्तिशाली, मोनाई के गोदाम पर दात गडाए बैठा है। रौब नर्म पडा, उत्सुक होकर पूछा—"फिर?"

दिल ही दिल मे मोनाई की बाछें खिल गईं, मगर चेहरे की एक शिकन तक न बदली। उसी तरह से उसने जवाब दिया—"रुपये तो मेरे पास हैं नही राजा बहादर। औ' पुलुस की नज़रो मे आयके फस तो गया ही हू। गिरहचक्कर है हमारा—पिरालब्ध फिर गई है, जौन है तौन।

कहलाय दिया कि बाबा, जबरजस्त का ठेंगा सिर पर, उठाय लै जाओ।"

कहकर मोनाई ने टूटकर एक आह भरी।

दयाल ज़मींदार का दिल बैठ रहा था। चेहरे की अकड़ के ऊपर खिसियानपन की एक पर्त चढ़ गई। मोनाई की नज़रों से छिपा न रहा। एक झलक दयाल के चेहरे को देखकर फिर अपनी बात जारी कर दी— "आपके चरनों की सौगन्ध खाय के कहता हूं हजूर, कि मेरा तो चित्त हट गया है इस काम से। कहां तक नुकसान सहूं? मैं तो अपने बाल-बच्चों को लेके कलकत्ते चला जाऊंगा। भगवानजी का ही भरोसा है अब तो!"

यह कहकर मोनाई ने फिर ज़ोरदार निसास छोड़ी। एक बार दयाल को, मास्टर बाबू को देखकर फिर अज़ीम की ओर देखते हुए उससे कहने लगा—"अज़ीमा, बेटा ज़रा छेदासिंह के साथ जायके गुदाम की ताली सौंप दे। जब दारोगा जी का आदमी आवै तो हजूर के पास भेज देना। मैं उरिन हो गया।"

दयाल ज़मींदार मन ही मन उबल तो बेहद रहे थे, मगर पुलिस का दारोगा उनके लिए भी भारी पड़ रहा था। उन्हें मोनाई की इस बात पर यकीन तो कतई नहीं आ रहा था, लेकिन यह ज़रूर समझते थे कि दारोगा को रिश्वत देकर मोनाई उन्हें परेशान कर सकता है। इसके साथ ही वह ये भी नहीं चाहते थे कि मोनाई की धमकी-भरी चाल के आगे उनका सिर झुक जाए। दिमाग इस गुत्थी में अटका हुआ था। उनका रियासती मिज़ाज पुलिस, दारोगा और मोनाई जैसे 'तुच्छ कीड़ों' से हार मानना हरगिज़ नहीं बर्दाश्त कर सकता था। अचानक उपाय सूझा। उन्होंने तय किया कि गांव में चावल ज़रूर ही बंटवाना चाहिए। पब्लिक की भलाई का बहाना लेकर दारोगा क्या, गवर्नर तक को नीचा दिखाया जा सकता है।

दयाल ज़मींदार ने हुक्म दिया—"छेदासिंग! ले आओ चाभी। रोज़ सवेरे और शाम दीन-दुखियों को चावल बांटो। गांव में ढिंढोरा पिटवा दो कि आज शाम को अ॰ स्कूल के बरामदे में सब लोग चावल लेने के लिए इकट्ठा हो जाएं।

फिर मोनाई की तरफ देखकर बडे रूखे स्वर मे दयाल ने कहा—"दारोगा का आदमी आए तो कह देना कि मैंने दारोगाजी को बुलवाया है। समझ लूगा।"

कहकर दयाल जमींदार फौरन ही चल दिए।

"आओ मास्टर।" दयाल के कहते ही पाचू चुपचाप उसके साथ हो लिया।

पाचू को साथ लेकर दयाल अपने घर की तरफ चले। मोनाई हाथ मलता रह गया।

६

कोठी पर पहुचते ही दीवानजी ने जमींदार को सूचना दी कि यूनीयन बोर्ड के सेक्रेटरी मिस्टर दास आए हुए हैं, और उन्हें गेस्ट हाउस मे ठहराया गया है।

यह खबर सुनकर दयाल बेहद खुश हुए। पाचू से कहने लगे—"अगर दारोगा वाली बात सच भी है, तब भी मेरा कोई कुछ नही बिगाड सकता। गाव मे यूनियन बोर्ड खुल जाएगा तब अगर चाहू तो मोनाई का सारा स्टाक जब्त करवाकर उसी दारोगा बेटे की निगरानी मे अपने यहा उठवा मगाऊ। सरकारी गोदाम मेरे यहा ही रहेगा। सेक्रेटरी और एस० डी० ओ० को कुछ ले-देकर दारोगा साले को ऐसा अगूठा दिखाऊ कि वो भी जिंदगी-भर याद करे। और मोनाई को तो मैं तबाह करके ही दम लूगा। कमीना मुझे पुलिस का डर दिखाता था। समझ लूगा उसको पुलिस..."

इसके बाद दयाल जमींदार ने पुलिस और ब्रिटिश राज की मान्यता

के साथ गहरा रिश्ता जोड़ते हुए पराई हुकूमत पर अपना गुस्सा जाहिर किया।

पाचू तब यह सोचने लगा कि हुकूमत के हामी भी हुकूमत को कितनी बुरी नजर से देखते हैं। और उसे आश्चर्य हुआ कि फिर भी दयाल और उसके वर्ग के लोग दुनिया पर अपनी हुकूमत कायम रखना चाहते हैं। आदमी जिस चीज से नफरत करता है, उसीको चाहता भी है—मनुष्य के स्वभाव में यह विरोधाभास क्यों?

दयाल जमीदार पाचू को आज अपने शीश महल में ले चले। शीश-महल की शोहरत दूर-दूर तक फैली हुई थी। पडोस के एक दूसरे जमीदार, गौरीपुरी के नवाब साहब को नीचा दिखाने के लिए ही दयाल ने यह शीश-महल बनवाया था। पुश्तैनी हवेली का मेहमानखाना बहुत खस्ता हो गया था। उसकी मरम्मत कराने का इरादा करते-करते, लाग-डाट के फेर में, नये सिरे से तिमजिली इमारत बनवा डाली। गौरीपुर के नवाब ने अग्रेजी ढग का मेहमानखाना बनवाया था। शहर से बिजली का कनेक्शन तक दौडा मगाया। दयाल जमीदार ने तैश खाकर कलकत्ते से इजीनियर बुलाए। गौरीपुर के नवाब ने सिर्फ बिजली ही लगवाई थी, इन्होंने टेलीफोन भी मगवा लिया। थैलियो के मुह खोल दिए। फर्शी मजिल पर नई कचहरी बनी, गुमास्तो को बरसो की मसनद-गद्दी छोडकर कुर्सी-मेज पर बैठने की आदत डालनी पडी। दीवानजी का कमरा अलग बना। जमीदार की कचहरी मे सिहासननुमा कुर्सी, एक बडे और मोटे कालीन पर, सामने रक्खी गई, कुलीन और सम्मानित सदस्यो के लिए सिहासन के दोनो तरफ सोफा सेट रक्खे गए। बिजली की रोशनी और पखो की तो भरमार थी। पहली मजिल पर एक तरफ दयाल जमीदार की लायब्रेरी थी, और दूसरी तरफ मेहमानो के लिए कमरे। सबसे ऊपर शीशमहल बनवाया गया था। शीशमहल देखा बहुत कम लोगो ने था, मगर तारीफ बहुतो ने सुनी थी।

पाचू पहली मजिल तक से परिचित था। लायब्रेरी मे वह दयाल के

लडके को पढाया करता था। मेहमानो के कमरे भी उसने देखे थे और उनकी सजावट से वह प्रभावित भी हुआ था। शीशमहल देखने की इच्छा तो बहुत दिनो से थी, परन्तु खुद कहकर देखना उसे पसन्द नही था। आज दयाल जमीदर के सग वह शीशमहल वाली मजिल पर गया।

बडे हॉल मे घुसते ही दाहिनी तरफ एक बनावटी झरना और उसके साथ ही लगा हुआ फव्वारा था। झरने से लगी हुई दीवार पर, शीशे मे जगल और झरने का दृश्य अकित किया गया था। बनावटी झरने मे जगह-जगह रगीन बल्ब फिट किए गए थे। दीवारें शीशो पर बनी हुई रगीन तस्वीरो से मढी हुई थी। बीच-बीच मे कद्दे-आदम आईने लगे हुए थे। पेंट की हुई छत थी जिसमे बिजली के झाड-फानूस लटके हुए थे। कीमती फारसी कालीनो से हाल का सगमर्मरी फर्श सजाया गया था। आधे हॉल को घेरे हुए दो फुट ऊचा गद्दा पडा था, जिसपर रेशम की चादनी बिछी हुई थी। रेडियोग्राम, पियानो, हारमोनियम, तबला, सितार, वीणा, वायलिन एक ओर सजाकर रक्खे हुए थे। शराब के लिए दो कीमती मेजें दोनो तरफ रक्खी हुई थी। दरवाजो पर रेशमी परदे पडे थे। हॉल के चारो कोनो मे शीशम के खूबसूरत स्टैण्डो पर विभिन्न मुद्राओ मे नग्न नारी-मूर्तिया रक्खी हुई थी। हर दरवाजे के दोनो तरफ खूबसूरत स्टूलो पर गगा-जमनी गमलो मे विलायती फूल शोभा बढा रहे थे। हर दो तकियो के बाद गद्दे के नीचे पीतल के बडे बडे उगालदान भी रक्खे हुए थे। उसके बाद रास्ते के लिए थोडी-सी जगह छोडकर हॉल के दोनो तरफ दीवारो से सटाकर दो बडे-बडे खूबसूरत शो-केस रखे हुए थे, जिनमे दयाल और उनके कुछ पुरखो द्वारा अन्य जमीदारो, नवाबो और अग्रेज दोस्तो से पाए हुए उपहार सजाकर रखे गए थे। उनमे ज्यादातर चादी और सोने के खिलौने, मूर्तिया, सागर व सोना के सेट वगैरह थे। उन उपहारो मे एक बर्मा के बने हुए भगवान बुद्ध भी थे, जिन्हे दयाल जमीदार के एक नामी-गिरामी नवाब दोस्त ने भेंट किया था। दयाल जमीदार के परदादा को मीर जाफर ने खिताब, खिलअत व सनद दी थी, सो भी शो-केस की सजावट बढा रही थी। बडे-बडे अग्रेज

अफसरो से पाए गए उपहारो मे अट्ठानवे फीसदी उनकी दस्तखती तस्वीरे थी, दो-तीन मेम साहबाओ की भी थी। पिछले कलेक्टर की मेम ने अपनी तस्वीर पर 'टु डियर दयाल' लिख दिया था।

सामने हाथी-दात के नक्काशी किए हुए अठपहलू फ्रेम मे एक कीमती घडी थी।

दयाल जमीदार ने बडे उत्साह और अभिमान के साथ पाचू को हर चीज़ दिखाई और कहा—"इस कमरे की रीयल ब्यूटी तो शाम को देखना मास्टर! और इसके बाद वह जो अदर का रॉयल कमरा है न, उसे भी दिखाऊगा तुम्हे! देखकर तुम भी कहोगे कि हा किसी रईस का विलास-भवन देखा।"

फिर उन्होने हॉल की हिन्दुस्तानी सजावट का खास तौर पर ज़िक्र करते हुए बतलाया—"इसमे एक पोलीसी है। कोई अग्रेज़, चाहे वह लाट साहब का नाती भी क्यो न हो, मेरे शीशमहल मे आएगा तो उसे हिन्दुस्तानी ढग से ही बैठना पडेगा। कुर्सिया जानबूझकर ही नही रखवाई है मैने। हिन्दुस्तानी नाच-गानो की महफिलें करवाता हू, कि बेटा, लुक अवर नेशनल आर्ट।"

इसके बाद दयाल जमीदार ने यह कहकर पाचू की इज्ज़त-अफज़ाई की कि आयन्दा किसी महफिल मे वह उसे ज़रूर बुलाएगे। फिर नौकर को बुलाकर झरनेवाली टकी मे पानी चढाने का हुक्म दिया। झाड और फानूसो से गिलाफ उतरवाए। आज मास्टर बाबू की खातिरदारी मे शीश-महल को रौशन किया जाएगा।

पाचू को इस समय दयाल जमीदार की दोस्ती और अपने शीशमहल देखने के सौभाग्य से गर्व नहीं हो रहा था। उसे गुस्सा आ रहा था कि दयाल के पास इतना ऐश्वर्य क्यो है। उसे दयाल से नफरत हो रही थी। इसीलिए वह शुरू मे ज्यादातर चुप रहा। बोलने का काम खुद दयाल ज़मींदार कर रहे थे। हर बात मे वह अपना ही शाहनामा बखान रहे थे। पूरी बेतकल्लुफी बरतते हुए पाचू अकडकर मसनद पर लेटा रहा। शरबत

आया, शरबत पिया—जैसे वह उसका हक हो। पनडब्बे से पान निकाल-कर खाता रहा।

सुनते-सुनते और मन ही मन विद्रोह करते हुए पाचू थक गया। आखिर विद्रोह फूटा और बीच-बीच मे खुद उसने भी लनतरानिया सुनानी शुरू की। वह दयाल जमीदार को पछाडना चाहता था। उसने यह प्रकट किया कि जैसे उसे रईसो से इन आराइशो और महफिलो की सदा से आदत रही है। अमेरिकन प्रिंसिपल मि० जॉर्डन का प्रिय शिष्य होने के नाते उसे विलायती समाज मे दुनिया देखने के हजारो मौके मिले हैं। विलायती मर्द और औरतो को प्यार और मुहब्बत मे जी खोलकर आजादी बरतना अच्छा लगता है।

ऐश्वर्य का भूखा बुद्धिजीवी पाचू धनाधीश होने के कारण 'बडे आदमी' कहे जानेवाले दयाल जमीदार पर अपने बडप्पन का सिक्का जमाने का प्रयत्न कर रहा था। अपनी विलासिता और रोमास की झूठी कहानियो ने उसने दयाल जमीदार पर अपना रग जमा दिया।

दयाल जमीदार को कलकत्ते की कुछ विलायती कसबियो का हाल तो जरूर मालूम था, मगर अग्रेजी सोसाइटी का घुल-मिलकर लुत्फ उठाना उन्हे कभी भी नसीब न हुआ था। हर साहब को उन्होने दावत दी थी, लेकिन किसी साहब ने उन्हे कभी पूछा तक नही—अपनी तस्वीर मे 'डियर दयाल' लिखनेवाली पिछले कलेक्टर की मेम साहब ने भी नही। दयाल जमीदार पाचू के विलायती अनुभवो मे रस लेने लगे। खोद-खोद-कर पते की बातें पूछते थे। पाचू की उडन-छू लनतरानिया उन्हे होठ चाटने और रह-रहकर ठडी-गर्म सासें छोडने पर मजबूर कर रही थी।

दयाल जमीदार के विलास-भवन मे बैठकर अपने देशी विलायती रोमानो की मनगढत कहानियो से खुद पाचू को तकलीफ महसूस होने लगी। उसका चित्त चचल हो उठा। दयाल के प्रति निरर्थक क्रोध और घृणा के थपेडे स्वय उनके मन पर ही तमाचे मारने लगे।

तभी सोनाई के आने की खबर मिली। दयाल जमीदार ने उसे वही

बुला लिया। मोनाई आकर तरह-तरह से मलामतें-खुशामदें करने लगा।

पाचू को बेहद गुस्सा आ गया। यह शख्स आत्मसम्मान का भाव खोकर बडे लोगो के सामने इस तरह गिडगिडाया क्यो करता है ? जात मे, परजात मे, सैकडो से अच्छी हैसियत रखनेवाले इस वैष्णव केवट के पैरो तले सारा गाव दबा पडा है, चौदह पीढियो के खानदानी जमीदार और रईस, दस-पद्रह हजार अन्नदाता किसानो के स्वामी और अन्नदाता, श्रीमान दयाल चाद विश्वास की परपरागत प्रतिष्ठा को भी अपनी बढती हुई शक्ति से बार-बार झटके देनेवाला, दुनिया की नजरो मे नीच और नाचीज यह मोनाई अपनी लाखो की दौलत लेकर भी दयाल जमीदार के सामने घुटने क्यो टेक देता है ? यह दयाल का गुलाम क्यो बन जाता है ? क्यो ? क्यो ?

मोनाई की पराजय मे पाचू इस समय अपनी पराजय देख रहा था। अपनी निर्धनता के कारण वह दयाल से हार गया था और यह चाहता था कि दयाल जमीदार जीत न पाए। खीझकर वह सोचने लगा, मोनाई तो दौलतमद है, फिर यह क्यो दबता है ? दयाल को ये मुहतोड तुर्की-बतुर्की क्यो नही सुनाता ? कायर कही का।

पाचू की अपनी कायरता भी झाकने लगी। उसके आभास मात्र से ही वह विचलित हो उठा। वह इन दोनो के आगे कायर हो जाता था। इस ग्लानि से बचने के लिए, वह जरा अकडकर मसनद पर लेट गया और लेटे-लेटे ही पनडिब्बी की ओर हाथ बढाया। पान खत्म हो चुके थे। फौरन ही उसने दयाल के नौकर को आवाज दी। दयाल जमीदार ने पूछा—"क्या चाहिए मास्टर ?"

"कुछ नही। इस डिबिया के वैधव्य को देखकर जरा दया आ गई।" पाचू ने मोनाई के सामने दयाल जमीदार से मजाक करके अभिमान का बोध किया।

'हो-हो-हो !' करके दयाल हस पडे। फिर मजाक का जवाब दिया—"यह विधवा नही, सदा सुहागिन है मास्टर। दिन मे सैकडो आने-

जाते रहते हैं।"

कहकर दयाल आप ही अपने मजाक का मजा लूटते हुए हँस पड़े।

पाचू ने भी सुर मे सुर मिला दिया, कहने लगा—"इसीलिए तो और भी दया आती है। जिस दीपक के पास सैकडो पतग आते हो, वह यदि किसी समय पतगविहीन हो जाए तो उसे कितनी पीडा होती होगी। अरे, पान ले आओ।"

नौकर सामने खडा था। लगे हाथ पाचू ने उसे भी हुक्म दे डाला, और इस तरह हुक्म देनेवाले का एक मौका दयाल से झटककर उसे बहुत खुश हुआ।

मोनाई अपनी अरजी के फैसले का इतजार कर रहा था। घुटनो मे सिर झुकाए, हाथ बाधे बैठा था। यहा की बातो पर उसका जरा भी ध्यान न था।

छेदासिह अपने मालिक का हुक्म पाकर दूसरे लठैतो के साथ मोनाई के गोदाम का मालिक बन बैठा था। बोरे उठवाकर उसने गोदाम से बाहर फिकवा दिए। उन्हे देखकर आसपास फिरते हुए भूखे जन हिंसक आह्लाद और जोश से झपटकर समीप आए। बोरे यो फेंके जा रहे थे जैसे ठाकुर की मूर्तिया मदिर से बाहर फेंकी जा रही हो। लोगो को सहसा विश्वास नही हो रहा था। मोनाई के गोदामो मे हजारो बोरे देखकर वही अविश्वासमय आह्लाद उमड आया जैसा कि उन्हे ब्रह्मभोज और जूठन को देखकर हुआ था। परन्तु उनके पाव ठिठककर रह गए। चावलो के इन बोरो मे शहीदो का खून झलक रहा था। और वे खूनी ही इन बोरो को बाहर फेंक रहे थे।

मूछो पर ताव देकर डपटता हुआ, छेदासिह एक तरफ तो अपने लठैतो को बोरे निकालने का हुक्म देता, और दूसरी तरफ मोनाई की सात जाने-आनेवाली पीढियो के साथ अपने क्षत्रिय रक्त का मौखिक रूप से मिश्रण भी करता जाता था।

बारह रुपल्ली का नौकर, मामूली जमींदार का सिपाही ठाकुर छेदासिह

मोनाई जैसे लखपती के मुह पर लात जमा सकता था। जमींदार का सिपाही होने के नाते उसे प्रजा के जान-माल और आवरू पर सर्वाधिकार प्राप्त थे। छेदासिंह ने अपने साथ के पच्चीस लठैतो को चार-चार बोरे इनाम मे बाट दिए। दस बोरे चावल उसने अपने लिए रिजर्व किए, जिनमे से पाच बोरे अपने जूतो के बल पर उसने मोनाई के हाथ तत्काल बेचे भी और रुपये भी नकद वसूल किए। जूते मार-मारकर मोनाई का पानी उतार दिया। फिर वही पाचो बोरे उठवाकर स्कूल मे भिजवा दिए। इसके बाद उजडे हुए गाव मे ढिढोरा पीट दिया गया। ज़िदा लाशो मे फिर से जीवन दमकने लगा।

मोनाई एक ही दिन की लूट मे ठडा पड गया था। चावल की लूट से भी ज़्यादा उसे जूतो की मार खाने का गम था। एक बार हाथ उठ जाने के बाद छेदासिंह अब उसे,जब चाहेगा पीट लेगा, और मोनाई से यह रोज़-रोज़ की मार हरगिज़ बर्दाश्त न हो सकेगी। इसीलिए, दयाल के सिपाही के जूतो से बचने के लिए, उसे मजबूर होकर फिर दयाल की ही शरण म आना पडा था। स्वार्थ ने उसे मजबूर कर दिया था। उसने बिना किसी शर्त के दयाल ज़मीदार के सामने आत्मसमर्पण कर दिया।

हाथ जोडकर गिडगिडाते हुए मोनाई बोला—"आप तारै तो तर जाऊ, और मारना चाहे तो हजूर के चरन-कमल मे दास का सिर हाजिर है। बाकी अन्नदाता, अब छिमा कर दीजिए। आप माई-बाप है, जो उठ मजूर करेगे उसे सिर माथे पर धरौंगा सरकार। मुल मेरे पेट पर लात न मारै राजा बहादर—मेरे रुजगार की रच्छा कर लें।"

मोनाई की इसी पराजय से प्रसन्न होकर दयाल बाबू पानू मास्टर मे मज़ाक करते हुए अपनी खुशी ज़ाहिर कर रहे थे। अपनी शक्ति के माहात्म्य बखानते हुए उन्होने यूनियन बोर्ड के सेक्रेटरी के आगमन की सूचना मोनाई को दे दी थी। एक नौकर को भेज भी चुके थे कि सेक्रेटरी साहब अगर गुस्ल वगैरह से छुट्टी पा चुके हो तो उन्हे ऊपर बुला लाए।

मिस्टर दास तशरीफ लाए। सावला रग, निहायत दुबले, लम्बा कद,

रेशमी सूट पहने, सुनहरी कमानियो का अठपहलू शीशो वाला चश्मा लगाए, हाथ मे ५५५ सिगरेट का टिन लिए हुए, और होठो मे एक सिगरेट दवाकर मिस्टर दास ने ज़मीदार दयाल विश्वास, हेडमास्टर पाचू गोपाल और व्यापारी मोनाई वोष्टम को अपने प्रथम दर्शन से कृतार्थ किया।

दयाल जमीदार तपाक के साथ उठकर खडे हो गए। कुर्सी के गुलाम मोनाई ने खडे होकर कमानी की तरह अपने को झुकाकर अदव से हाथ जोडे। पाचू भी उठकर वैठ गया। मगर खडा नही हुआ।

मिस्टर दास पहली ही झलक मे पाचू को फूटी आखो न सुहाए। मिस्टर दास पतलून की क्रीज़ को नज़ाकत के साथ सभालते हुए मसनद के सहारे वैठे। सफर की तकलीफ-आराम पर दो सवाल-जवाव हुए। फिर दयाल ने मिस्टर दास का हेडमास्टर पाचू गोपाल से परिचय कराया, वडी तारीफ की। पाचू ने अपनी तरफ से वनावटी शिष्टाचार दिखाया। उसे मिस्टर दास का वन-ठनकर वोलना फूटी आखो नही सुहा रहा था।

मिस्टर दास की नज़र अदव से हाथ वाधे और सिर झुकाकर खडे हुए मोनाई की तरफ भी गई। मिस्टर दास को अपनी तरफ मिलाने की गरज़ से दयाल ने टूटी-फूटी अग्रेज़ी मे मोनाई का चिट्ठा खोलना शुरू किया। 'ड्यामफून, राश्कल' आदि नामो से वगाली-अग्रेज़ी मे मोनाई को याद करते हुए दयाल जमीदार ने हस-हसकर मिस्टर दास से कहा—"आपके आने की खुशी मे अपने गाव का यह सवसे उम्दा तोहफा आपको प्रेज़ेट करता हू।" इनके ऊपर हसी हुई। पाचू हसने के खिलाफ था, लेकिन मुस्कराने पर मजवूर हुआ।

मोनाई के लिए दयाल जमीदार का मिस्टर दास से हस-हसकर अग्रेज़ी मे वाते करना असह्य हो उठा। वडी घवराहट के साथ वह सोच रहा था—"भगवानजी ही जानें, कौन-सी घात साध रहे है ये लोग। ये वार-वार मुस्कराय-मुस्कराय के हमारी तरफ इसारेवाज़ी कर रहे हैं, इसका कौन फल मिलै तौन वम है। एक ससुर जमराज और दूसरा जमदूत—मेरे घर को सेन वनाय के चर जावैगे—ज़रूर चर जावैंगे।"

एक लंबी कांपती उसांस लेकर मोनाई मन ही मन में टूट गया। उसे पूरा-पूरा यकीन हो गया था कि—"ये राहू केतू दोनों मिलकर हमें आज जीता न छोड़ेंगे। राम जानैं, कौन साइत बिगड़ गई रही उस दिन। दाम लैके चावल दै देता तो परजा जै-जैकार मनाती। न तौन गोली चलती, न जमींदार गुदाम देखते। हजार पान सौ नफा कमाने के फेर में अब ये जनम-भर की कमाई लुटी जाती है। भगवानजी, ऐसा कौन-सा पाप किया था मैंने ?"

मोनाई सतर्क होकर अपने को टटोलने लगा। किसी पाप के कारण ही उसकी यह दुर्दशा हुई है, इसका उसे डर था। पाप का ध्यान आते ही फौरन उसके प्रायश्चित्त का संकल्प कर, उस दर्शना हुंडी को दिखाकर भगवान के साथ सौदा पटाने की सूझी।

"मुल बिना पाप जाने परासचित कौन-सा किया जाय ? वैसे जब से कण्ठी ली, अपनी जान में तौ कौनो पाप किया नहीं मैंने। चीटी को चारा देता हूं, गौ भी हैं, मंदिर में ठाकुर जी और गौमाता की सेवा होती है। पुजारी जी को इसी हेत रखा है। पुजारी जी को तनखाय देता हूं, परब-तिउहार के दिन जैसी सरधा है वैसा दान-पुन्न भी करता ही हूं—इस तरह बाह्मन की सेवा भी कर देता हूं। तब कौन-सा पाप मुझसे भया है नाथ ? सबेरे चार बजे माला भी जपता हूं तुम्हारे नाम की। मुल परसों लेट हुइ गया रहा, साढ़े चार बजे आंख खुली थी। मुल इससे क्या, जिस दिन गोली चली रही उस दिन तौ सारी रात जागरन करके माला जपता रहा था। हां, सूतक में जपी रही। गिन्नी ने मना भी किया था कि सूतक में कंठी न छूना। मुल परेतों का ऐसा भय था कि कंठी हाथ से न छूटी। बस यही पाप भया, इसीसे भगवानजी का कोप मुझपर भया है। सुन, भगवान जी, कीड़े को क्यों मारते हो ? छिमा करौ नाथ। और जो आदमी मरे रहे उनका भी किरिया-करम अब तौ कराय दीना। बरमभोज भी हुइ गया। और चलौ, जो रहा-सहा परासचित था सो भगवान जी जमींदार बाबू के रूप में हमसे पूरा कराय दीना। देखौ, क्या माया है भगवान

जी की। जित्ती वेला जमीदार बाबू ने छेदासिंह को अडर दिया कि गाव-भर मे चावल बाट देओ, उत्ती वेला तौ मेरी छाती मे मानो गोली दग गई रही। मुल अब ध्यान आया कि उस दिन द्वार से सैकडो भूखे लौट गए रहे। जरा-से स्वारथ के फेर मे हमरी मत अधी हुइ गई रही। वैसे इसे स्वारथ क्यो मानैं ? रुजगार-धधा तौ करम है। भगवान जी भी कहते हैं कि करम करौ अपना। गाव वाले भूखे तौ जरूर रहे, मुल साधू-भिखारी थोडे रहे। हा, साधू-भिखारी द्वार से भूखा लौटता तौ सचमुच बडा पाप लगता। इसमे क्या ? ये तौ दुकनदारी ठहरी, सौदा पटा तौ दिया नाही तौ जै राधे। उल्टे वही लोग सब हमारे ऊपर अन्याय करने लगे। क्या भगवान जी ने नही देखा होगा कि मोनाई वोष्टम निरदोष है ? औ' मान लेओ कि मायामोह मे पडे सिंमारी जीव हैं, कोई अपराध अनजाने मे बन पटा होय, तौ भगवान जी ने उसके परासचित मे ये डड दै दीना—जूते खाए, गालिया सुनी, लूटे गए—क्या-क्या दुर्गत नही भई ? बहुत डड हुइ चुका नाथ। हे दीनदयाल, अब छिमा करौ। देखौ, हमारा चावल ही आज भूखो को बाटा जा रहा है। दुनिया समझे कि दयाल जमीदार ने अन्नदान दिया, मुल हे दीनानाथ, तुम तौ अन्तरजामी घट-घट व्यापी हौ—तुम तौ सब जानते हौ। मैं ससारी कीडा जरूर हौ, पर पर तुम्हारा भगत हौं। तुम्हारी सरनमे दिन-रात पड़ा रहता हौं। इन पापियो से मेरा गला छुडाओ दीनबन्धु ! हे दीनानाथ, नाथो के नाथ, इस पापी को नाथौ। कालिया-नाग से कुछ कम नही है ये दयाल। इस ससुरे के काटे का मतर नही है। बडे-बडे हतियाचार किए है इसने। इसके जुलुम से पिरथी थर्राय उठी है, ये अकाल पड रहा है। जिस गाव का राजा पापी है, उसमे तौ जरूर ही अकाल पडेगा—वेद सासतर तक मे यही बात लिखी गई है। सारे बगाल मे इनके ऐसे पापी जमीदार भरे पडे है। ये सब साले गोरमिण्ट से मिल गए है। इन्ही सबो ने रुपिया दै-दै के गाधी महातमा और नेता लोगन को जेल मे बन्द करवाय दीना है। पुलुस से गोलिया चलवाय के अन्दोलन दबवाया इन लोगो ने। अभी, मैने यहा भी इसी राच्छस दयाल के आद-

मियों ने गोलियां चलाईं। मैंने तो किसीपर एक हाथ भी नहीं उठाया। उल्टे मैं ही मार खाता रहा, भगवान जी जानते हैं। ये सब बड़े लोग बस अपना ही स्वार्थ चाहते हैं। गरीब की बढ़ती तो देख ही नहीं सकते। अरे, इनका भी सत्तियानास हो जाएगा। आने दो ज़रा सुभाष बाबू को फौज ले के। वो इनको कालेपानी भेजेंगे और इनकी सरकार को भी। सब गरीब लोग ही तब सेठ-साहूकार और ज़मींदार बनाए दिए जाएंगे। अरे, एक बार सुराज हुइ जाने देओ तब हम गरीबों के दिन भी बहुरेंगे।"

मोनाई के लिए इस तरह निरादृत होकर हाथ बांधे बैठा रहना असह्य हो रहा था। डेढ़ घंटा हो गया, किसीने इसकी तरफ आंख उठाकर भी न देखा। मोनाई की जान सूली पर लटकी हुई थी, उसका रोजगार धंधा, चाल-कुचाल, सब दयाल ज़मींदार के फैसले पर ही निर्भर करता है। मगर दयाल ज़मींदार पांचू मास्टर और मिस्टर दास के साथ हंसी-मज़ाक में मगन थे। शर्बत और फलों का नाश्ता हुआ, दम पर दम और सिगरेटें चलती रहीं, हा-हा, ही-ही होती रही—वक्त यों ही बीतता रहा।

शीशमहल जगमगा उठा। इन लोगों ने तब जाना कि बाहर अंधेरा हो चुका है।

कमरे-भर में रंग ही रंग दिखाई देने लगे। कांच पर बनी हुई, बड़ी-बड़ी तस्वीरों के पीछे बल्ब जगमगा उठे। झाड़-फानूसों में जोत जग गई। बीच-बीच में लगे हुए बड़े बड़े आईनों से विस्तार पाकर शीशों से मढ़ा हुआ हॉल एक विशाल शीशमहल का भ्रम कराने लगा।

मेहराबदार, और जगह-जगह से घुमाकर पतली सीढ़ियों पर से उछलता हुआ सतरंगी पानी का झरना बह रहा था। गहरे बैंजनी रंग के निहायत छोटे-छोटे बल्बों से पहाड़, हरी रोशनी के दरख्त और पीले-लाल फूल रोशन थे। सतरंगी पानी का झरना उभरकर नज़रों में आता था। नीचे रंगीन फव्वारा! रंग-बिरंगी रोशनियों को अपनाकर पानी की बूंदें ऊपर की ओर उछल रही थीं। झरने के पीछे, शीशे पर बना हुआ जंगल और पहाड़ों का दृश्य (निमिष-मात्र के लिए) प्रकृति का भ्रम उत्पन्न करता

था। पेडो से झाकते हुए चद्रमा और तारो-भरी रात मे, दरख्त की एक शाख पर फूलो का हिंडोला डाले हुए एक नग्न सुन्दरी झूल रही है। एक तस्वीर, 'नूरजहा की सुहागरात' वनी थी। जहागीर के रगमहल के दरवाज़े की चौखट पर एक पैर रक्खे, लाज की मूर्ति नूरजहा, वारीक घूघट मे अपने मुखडे पर वरसते हुए नूर को झाप लेने की कोशिश मे ठिठकी हुई खडी है, और शाहशाह जहागीर आग्रहपूर्वक उसका स्वागत करने के लिए आगे वढ रहा है। एक दूसरी तस्वीर, 'विश्वामित्र मेनका'—तूफानी रात मे राजर्षि की कुटिया मे आश्रय पाकर छद्मरूपा मेनका वेसुध होकर सो रही है। राजर्षि विश्वामित्र उसे गर्म वस्त्र उढाने के लिए आए हैं, आधियो से अस्तव्यस्त वसन मे धूप-छाव-सी झलकती हुई अपराजिता नारी ने महातपस्वी के नेत्रो को वाध लिया है। 'स्वर्ग यही है'—इस चित्र मे अनेको अर्द्धनग्न और प्राय नग्न रूपसियो से घिरा हुआ शाहज़ादा वैठा है। नृत्य हो रहा है, दासी शराव का पात्र लिए खडी है, दो दासिया पखा झल रही हैं, और शाहज़ादे की वाहो मे जकडी हुई दो मदमाती रमणिया उसे रिझा रही हैं। इनके अलावा उमर खैयाम और साकी, गोपी चीरहरण मुगल हरम का स्नागृह, वसन्त, नारी का निमत्रण—सयोग के शृगार के मासल चित्रो से मन की वासनाए स्थूल होने लगी। उनका वेग और भार हृदय मे व्यग्रता उत्पन्न करने लगा।

पाचू, मिस्टर दास, मोनाई सव एकाएक शीशमहल के जगामगा उठने पर चौककर देखने लगे। सवको चकित करनेवाले अपने वैभव को दयाल ज़मींदार ने भी चारो ओर नज़र घुमाकर देखा, और उनका चेहरा खुशी और दप से चमक उठा।

नज़रे वध गई, खयाल वध गए—नग्न सुन्दरियो मे सेविन अलिफ-लैला के शाहज़ादे की भाति पाचू इस समय शीशमहल के विलासितापूर्ण वातावरण मे घिरा हुआ था। उत्तेजना मन को अस्थिर करने लगी। अशान्त होकर उसने सोचा—"ये ऐश्वर्य [illegible] अमल हमारे जीवन मे है कहा? वह स्वप्न हम साधारण जनो के जीवन मे साकार ही कव हो सकता

है ? विलासिता का यह आडम्बर पैसे का कोट है, इसान के दिमाग की विकृति का भद्दा प्रदर्शन है।"

दयाल वाबू अपने ऐश्वर्य-चमत्कार को दिखाकर अब पारा चढाने लगे। मोनाई का इसाफ करने के लिए वढे। जवान के तीरो से उसका रोम-रोम वीध डाला। फिर नौकर को बुलाकर छत पर 'सामान' लगाने का हुक्म दिया।

पाचू के मनोभाव दयाल जमींदार के विरुद्ध जा रहे थे।

मिस्टर दास दयाल के शीशमहल के जादू मे वधे हुए, मुह और आखें फाड-फाडकर तस्वीरें देख रहे थे।

मोनाई जमीदार के पैर पकडकर गिडगिडा रहा था। अपना अपराध स्वीकार कर वह दयाल जमीदार से डड की भीख माग रहा था। वह जानता था कि दयाल जमीदार लम्बी रिश्वत लिए विना हरगिज न मानेगे। इसलिए खुद अपनी तरफ से ही वात निकालकर उसने दयाल को वतलाया कि शास्त्र के अनुसार विना 'डड परासचित' किए उसकी गति नही, और वह हर तरह से सेवा मे हाजिर है।

पाच सौ से वटते-वटते हजार वोरो पर 'डड' पूरा हुआ। वीच-वीच मे मोनाई ने दस हजार वार मालिक के चरणो की सौगध खाकर भगवान और ईमान की दुहाई पीटी। सेक्रेटरी साहव को नजराने मे दो सौ वोरे देना तय हुआ। मोनाई सव कुछ खुशी और उत्साह के साथ स्वीकार करता चला गया। वह सोचता था कि सव कुछ लुट जाने से तो भागते भूत की लगोटी ही भली है। अपनी चापलूसी और खुशामद से उसने जमींदार और यूनियन वोर्ड के सेक्रेटरी को खुश कर लिया।

पाचू अकेला पड गया था। उसका कही भी जिक्र न था। उसकी तरफ किसीका भी ध्यान न था। यूनियन वोर्ड का यह कुरूप, अर्द्धशिक्षित और घमडी सेक्रेटरी भी उससे वडा है—पाचू इस तरह से सोचता था और यह उसे खल रहा था। यह हार ब्राह्मण कुलोद्भव विद्वान पाचू मुखर्जी के हृदय को करुणार्द्र कर रही थी।

मोनाई अपनी वात पर कलई चढाते हुए, सेक्रेटरी साहव के सामने अपने अन्नदाता दयाल की तारीफो के पुल वाघ रहा था—"ऐसा वैभव सारे वगाल मे किसी ज़मीदार का नही है। मालिक के सामने खास अगरेज कलिट्टर तक किस तरह अपना टोप उतारकर गोटमैनी करता है, शहर के वडे-वडे हाकिम-हुक्काम और रईस लोग मोहनपुर के महाराजा का अतुल ऐश्वर्य देखकर किस तरह चकित होते है, किस तरह राजा इद्र की अप्स-राए मोहनपुर के महाराज के इस शीशमहल मे नाचने आती है " वगैरह लन्तरानिया चवन्नी-भर सच मे वारह आने झूठ मोनाई झाडता चला गया।

दयाल वहुत सन्तुष्ट होकर पूर्ण गम्भीरता के साथ सुन रहे थे। मिस्टर दास मोनाई के मुह की तरफ देख रहे थे। लहर मे आकर उन्होने मोनाई से गाव के 'नमक' का हाल पूछा।

मोनाई पहले तो सकुचाया, फिर वनावटी मुस्कुराहट के साथ वोला—"सरकार, राजा के घर मे भला मोतियो का काल होता है। मालिक का इशारा हुइ जाय तो आज ही भिजवाय दू।"

मालिक ने इशारा कर दिया।

मौका साधकर मोनाई ने अव अपना तीर छोडा, कहने लगा—'सारा रज़गार-वैपार चौपट हो गया है। जो कही गाव मे यूनन वोट खुल गया तो मेरे मिट्टी के मोल विकने की नौवत आय जाएगी, अन्नदाता।" इसके वाद उसने अर्ज किया कि गाव मे उसके चावलो का सदावर्त वटना वन्द हो जाए। वह यूनियन वोर्ड का सारा चावल खरीदने को तैयार है। सरकार दस रुपये के भाव से वेचेगी, वह वारह रुपये पर खरीदने को तैयार है।

दयाल और दास की नज़रें मिली। दयाल को उज्र न था। दाम पन्द्रह के भाव पर वेचने को राज़ी हुए। मोनाई ने ज़ाहिर किया कि वह लुट चुका है। वरना पन्द्रह भी खुशी-खुशी दे देता। दास पन्द्रह से नीचे न हुए। मोनाई ने इस समय विशेष आग्रह न किया। दोनो सरकारो की सलाम-नियां और जैजैकारियां मनाते हुए, रात मे नज़राना के साथ 'दो' भिजवाने

का वायदा करके वह चला गया।

मोनाई के जाने के बाद बातों का दौर बदला, यार लोग फिर रंगीनी मे बहने लगे। शीशमहल की विलासिता दिलों पर छाने लगी।

हॉल के बाई ओर बाहर पड़ती छत थी। नकली संगमर्मर और संग-मूसा का फर्श था, जिसपर अभी ही पानी छिड़का गया था। किनारे-किनारे फूलो के गमले रक्खे हुए थे। मुडेरो पर सफेद पत्थर की कूडियो मे फूल खिल रहे थे। छत पर चार छोटी आरामकुर्सिया रक्खी हुई थी, शराब का इतज़ाम था।

जेठ की धुली चादनी थी। दूर तक दिखाई पडनेवाले खेतो के ऊपर पाचू एक अजीब किस्म की मनहूसियत महसूस कर रहा था। छत पर आने के बाद उसका मन और भी गिर गया।

शराब उसने ज़िदगी मे कभी चखी न थी। मगर दयाल के सामने वह अपने को पक्का शराबी सिद्ध कर चुका था। लाख हीले-हवाले किए, मगर पकडे जाने पर चोर के लिए सज़ा से छुटकारा पाने की कोई सम्भा-वना ही नही रह जाती। कडवे घूट को पी जाने के बाद नशे की उत्तेजना पाचू के अनुभवो मे शामिल हुई। हारकर उसने अपने बारे मे अच्छा-बुरा, कुछ भी सोचना बन्द कर दिया। थके हुए मनुष्य की तरह निश्चेष्ट होकर नशे की चढती हुई तरगो मे वह बहने लगा।

विलायती रोमासो की बातें फिर शुरू हुई। दयाल ने पाचू को किस्से सुनाने के लिए कहा। इच्छा और अनच्छिा की विपरीत धाराओ मे फसकर अनिश्चित गति से बहता हुआ पाचू बातचीत मे भाग लेने लगा। उसकी इच्छा वहा से उठकर भाग जाने की होती थी, मगर वह ऐसा न कर सका। वह अपने स्वभाव की असलियत से दूर जा रहा था।

शराब के साथ कुछ मुह चलाने के लिए भी सामान आया। खाने की चीज़ें देखकर पाचू की आखो मे चमक आ गई। पाचू का हाथ बढा, लेकिन तुरत ही उसके दिमाग मे सारे परिवार की भूख सिमट आई। उसका हाथ रुक गया। मानसिक उलझन दूनी हो गई। एकाएक वह कुर्सी छोड़कर

उठ खडा हुआ। दास और दयाल के पूछने पर जवाब दिया—"यो ही, टहलने को जी चाहता है।"

"अरे बैठो भी। यह भी कोई टहलने का वक्त है?" दयाल जमीदार ने पाचू का हाथ पकडकर बैठा दिया।

मशीन के पुर्जे की तरह पाचू बैठ गया। कुछ क्षणो के लिए उसका मन उलझा। मगर भूख परेशान कर रही थी। भूखे परिवार के खयाल को जमीदार की दोस्ती की आड मे छिपाकर उसका हाथ मेज की तरफ बढा। पाचू खाने लगा। हर निवाला खाकर वह दिल की आवाज को दबा रहा था। गुनाह को भूलने के लिए वह गुनाह करके अपने साथ न्याय कर रहा था। उसने पढ-सुन रक्खा था कि गम गलत करने के लिए शराब नायाब चीज है। पाचू इसके लिए भी कोशिश कर रहा था।

"दास बहुत जोर-ज़ोर से बोलता है—बडी शेखी बघारता है," दयाल जमीदार पर उसका असर कम करने की गरज से पाचू ने बातो को नया रुख दिया। अंग्रेजी सरकार के जुल्म—बयालीस के विद्रोह से लेकर अकाल तक—वह जोश के साथ सुनता चला गया। सरकारी नौकरो को खास तौर पर लपेट मे लिया, स्वार्थी, डाकू, रिश्वतखोर, राक्षस, देशद्रोही—जो कुछ भी नशे की धुन मे जबान पर आया, कहता चला गया।

अंग्रेज सरकार और उसके नौकरो को गालिया सुनाने मे दयाल जमीदार पीछे न रहे। यूनियन बोर्ड के सेक्रेटरी मिस्टर दास भी देश-प्रेम के नशे मे बहने लगे। फिर उन्हे अपने ऊपर दया उमडी—"हम भी क्या करे? जब चारो तरफ लूट देखते है तो हमारी तबीयत भी ललचा उठती है। रिश्वत मे नाजा बटाने की गरज से हमने बडे अफसरान हमे दबाते है। उनके लिए भी हमे लूट-खसोट करनी पडती है। आजकल दिल्ली से माल आ रहा है। ये व्यापारी लोग थैलिया ले-लेकर हमारे पास आते है। फिर बताइए हम क्या करे? हम कोई ऋषि-मुनी तो है नही मास्टर बाबू! ये तो जब तक सोशलिज्म नही आएगा, देश की यही दशा रहेगी।

"जाने दो सोशलिज्म को!" पीकर दयाल जमीदार मेज पर ज्ञानी

गिलास रखते हुए दहाड़े—"सोशलिज़म वाण्टेड ! लाओ सोशलिज़म।"

नौकर आ गया, समझा सरकार कुछ माग रहे हैं।

दयालज़मीदार अपनी ही धुन मे कहते गए—"मास्टर, तुम हमारी पर प परशसा मे अच्छा-अच्छा लेख लिखो। तस्वीरें छपाओ हमारी। सब अकबारो मे। समजा ? ऐं ? क्या हम काविल नही हैं ? हैं न ! देखो, हमसे बडा ज़मीदार कौन ? कोई नई। हम हम अपनी प्रजा को चावल बटवाया, दवा बटवाया और, और अब सोशलिजम बटवाऊगा। ज़ुरूर बटवाऊगा।"

दास और पाचू दयाल के नशे को देखने लगे। बात सोशलिज़्म से फिर शराब पर आई, औरतो पर आई, जवानी पर आई, और देखते-देखते ही ज़वानो पर पलग बिछने लगे। शराब की तेज़ी ने वातावरण मे गर्मी पैदा कर दी।

दयाल बोले—"माऽऽस्टर, चाऽर चाऽर अ-अ-औरतें समझे ? दो बोतल ह्विस्की पीके बट नेऽव्हर नेऽव्हर डाउन। क्या समजे ? आ-ा-ा-ा ?"

फिर गिलास टेबल पर रखते हुए वृन्दावन को आवाज़ दी। यह दयाल का पाचवा पैग था, मिस्टर दास छठा खत्म कर रहे थे, और पाचू ने अभी तक पहले गुनाह से ही छुटकारा नही पाया था। दयाल ज़मीदार ने मिस्टर दास के गिलास पर नज़र डाली, तीन-चौथाई खाली हुआ था। दयाल बोले—"अबे पी जा। पी जा। देख्, आज कितनी पीता है तू !"

सिगरेट का आखिरी कश खीच, उसे फेंककर धीरे-धीरे धुआ छोडते हुए मुस्कराकर मिस्टर दास ने कहा—"डोण्ट वरी सनी, मैं टू बाटल्स तक नार्मल रहता हू।"

दयाल ज़मीदार हसे, फिर हसते हुए बोले—"अबे हा-हाऽ, पराये धन पर गुलछर्रे उडाते हैं। पिए जा, पिए जा जी खोल के। मेरा दिल भी तेरी ब्रिटिश गवरमैंट से कम नही है। वृन्दावन ! भरे जा साले का गिलास। साले को हिज़ मास्टर्स वाऽऽ नई हिज़ मास्टर्स वॉइस वाला प्यार

ह्विस्की—पिलाकर इसकी सरकार को गालिया सुनाऊगा।"

दयाल बडी जोर से ठहाका मारकर ह स पडे। फिर उभडे—"पियो बेट्टा! वृन्दावन, शाहब का मू मे बोतल का मू लागा देओ। पियो शालाऽ।"

दयाल जमीदार खुद उठ आए, वृन्दावन के हाथ से बोतल झटककर मिस्टर दास की तरफ बढे—"शाला, तुमको खूब पिलाऊगा। नई-नईऽ! शाला बोलता, दो बाटल पी जाता। हामको धमकी देता! एँ? पाश्शौ रुपट्टी का नौकर शाला—दुश्मन का कुत्ता! शाला शमजता, दयाल विश्शास दो बोतल ह्विस्की नई पिला शकता। हरामजादा, हाम तुमको दस बोतल पिलाएगा। शाला, जाके बोलना अपनी गवरमेंट को कि इडियन जमीदार का दिल क्या है!"

दयाल जमीदार एक हाथ से मिस्टर दास का कधा पकडकर उन्हे कुर्सी से दबाते हुए उनके मुह मे बोतल ठूसने की कोशिश करते हुए ललकारने लगे।

मिस्टर दास आफत मे फस गए थे। अपने दोनो हाथो से दयाल को दूर हटाने की कोशिश कर रहे थे। बीच-बीच मे दो-दो, चार-चार शब्द फूट जाया करते थे—"ये क्या मिस्टर विश्वास? देखिए, देखिए। सच्ची की मजाक अच्छी नही होती। आप बहुत पी गए। आप मेरी बेइज्जती कर रहे हैं। मैं बहुत खा रहा हू, वरना "

दुबले-पतले मिस्टर दास कुर्सी पर ही बैठे-बैठे हाथ-पैर पटक रहे थे। गुस्से के मारे गले मे आवाज़ अटकती थी। गुलामी की जमीन पर पनपनेवाली अफसरी की बू लाजवती के पौधे की तरह मुरझा गई थी।

नशे मे उभरनेवाली दयाल की उद्दण्डता पाचू पर भी असर कर रही थी। वह बेहद घबरा रहा था। वह सोचता था—"अगर मेरे साथ ऐसा दुर्व्यवहार किया तो मैं घूसा मारूगा। ऐसी जोर से मारूगा कि याद करेगा। नही, जरूर मारूगा, फिर चाहे कुछ भी हो जाए। ये दास साला बोदा है। बैठा-बैठा मे-मे कर रहा है, यह नही होता कि धक्का दे। मरने दो पाथर को। लेकिन यह ठीक नही। इसके बाद दयाल मेरे ऊपर टूट पडेगा।

नशे मे आदमी का क्या भरोसा ? इसे रोकना चाहिए।"

दो-तीन वार पाचू ने अपने विचार की पुष्टि की और फिर हठात् उठकर दयाल को मिस्टर दास से अलग किया—"ये क्या कर रहे है दयाल वावू ?"

दयाल ने एक वार घूमकर गौर से पाचू को देखा। पाचू घवराया। दयाल वोले—"पिला रहा हू। तुम भी पियो। इसको, साले गवरमैंट के नौकर को भी पिलाओ। पी साले।"

पाचू वेहद घवरा उठा था, और साथ ही उसे क्रोध भी आ रहा था दयाल को घसीटकर अलग करते हुए वह वोला—"मगर आप कर क्या रहे हैं ? अपने मेहमान के साथ ऐसा वर्ताव किया जाता है।"

मिस्टर दास को सहारा मिला। दिल का दर्द उभड आया—"देख लीजिए, देख लीजिए, मिस्टर मुखर्जी ! ये कितना अत्याचार कर रहे है मुझपर ? ऐसे ही अत्याचारी जमीदारो के कारण ही तो हमारा देश गुलाम वना है और ऊपर से गुलाम कहता है गुलाम मुझको !"

मिस्टर दास फूट-फूटकर रोने लगे, रोते-रोते कहा—"मैं आत्महत्या कर लूगा। ये गुलामी का जीवन मुझे भार है।"

पाचू वुरी तरह से घिर गया था। दो-दो शरावी, दोनो ही अपने-अपने रग मे गाढे होते चले जाते हैं—कैसे इनसे छुटकारा मिलेगा ? कहीं कुछ हो गया तो ?

पाचू अस्थिर हो उठा।

वृन्दावन मूर्ति की तरह चुपचाप खडा था। उसका सिर झुका हुआ था। अदव से हाथ वाधे खडा था। उसे मालिक और उनके दोस्तो की किसी जा-वेजा हरकत को देखने का अधिकार नहीं, उससे यह उम्मीद की जाती है कि ऐसे-ऐसे मौको पर वह मालिक और उनके दोस्तो की किसी भी अच्छी या वुरी वात को नही सुन रहा। वह शून्य रहा। वह शून्य है, नौकर, और कुछ भी नहीं।

पाचू ने घवराकर वृन्दावन की तरफ देखा। उसकी झुकी गर्दन और

निर्विकार मुद्रा देखकर वह झुझला उठा, कहा—"देखने क्यों नहीं ... को। सभालो उन्हे।"

दयाल जमींदार अब तक अपनी कुर्सी पर बैठ चुके थे। ... और पाचू के डाटने से उनका पारा एक डिगरी नीचे उतर चुका था। पाचू को घबराया हुआ देखकर बोले—"कुछ फिकर मत करो। ... जरा चढ गई है दास बाबू को।"

मिस्टर दास गर्म होकर बोले—"मुझे नही, आपको चढ गई है ... विश्वास। आपने एटीकेट का—आपको इस तरह से मेरा अपमान

दास का गला फिर भर आया। आसू उमड पडे।

दयाल सभले। उन्हे खयाल हो आया कि वे आनन्द मनाने बैठे हैं। दास को समझाने लगे, दार्शनिक मूड मे आकर कहने लगे—"चार दिन की जिंदगी मे किसीसे लडना-झगडना नही चाहिए। खाओ-पियो मौज करो—यही जीवन की बहार है। कल तुम कहा होगे, और हम कहा होगे। आओ पिए।"

फिर से महफिल आबाद हो गई। दास और दयाल, दोनो ही, नशे मे एक-दूसरे के बहक जाने पर हसने लगे। एक-दूसरे से बेहद घुल मिल गए। वृन्दावन को खाली गिलास भरने का हुक्म हुआ। हुक्म की चाभी पर चलनेवाला पुतला वृन्दावन अपना काम करने लगा।

पाचू को डर लगा कि दयाल इस बार कही बोतल लेकर उसके सिर पर न धमक जाए। उनका पहला गिलास भी अभी तक आधे से ज्यादह खाली नही हुआ था। जिंदगी मे पहली मर्तबा उसने शराबियो को इतने निकट से देखा था। वह मन ही मन घबरा रहा था।

वृन्दावन दयाल के गिलास मे ढाल चुकने के बाद अब दास के गिलास को हाथ मे उठा चुका था। इससे पहले कि वह पाचू की तरफ बढे, पाचू ने अपना आधा भरा हुआ गिलास हाथ मे उठा लिया, और गिलास की तरफ देखते हुए कहने लगा—"काश कि आदमी का खून भी इस शराब की तरह सुनहला होता, तब उसकी भी कीमत कम से कम उतनी तो लगती

ही जितनी कि शराब की है।

दयाल और दास पर इसका प्रभाव पड़ा। दोनों पाचू की ओर देखने लगे। अपने विद्वान होने के यश का लाभ उठाते हुए, भड़कीले वाक्यों की आड़ मे पाचू कतराकर निकल रहा था—"उस गिलास मे जितनी कीमत का पानी भरा है, उसमे दस आदमियो का पेट भर सकता है। मरभुखो की मौत ही इस गिलास के सुनहरे पानी मे नशा बनकर हम लोगो को खुश कर रही है। आइए, हम हज़ारो की मौत का एक जाम पिए।"

कहकर झटके के साथ पाचू गिलास को होंठो तक लाया। शराब ने होंठो को छुआ। पाचू ने गिलास रख दिया।

नाटक सफल हो गया। दयाल और दास दोनो ही, पाचू के वाक्य-चमत्कार से पूरी तरह प्रभावित हो गए। वृन्दावन इससे बेअसर अपना काम करता रहा—गिलासो मे सोडा डालने के बाद हाथ बाधकर, सिर झुकाकर खडा रहा। पाचू के कहने के साथ ही दयाल और दास ने भी अपने गिलासो को उठाकर हज़ारो की मौत के जाम पिए।

"हज़ारो की मौत का जाम," इस वाक्य ने दयाल और दास के भावुक हृदयो को कविता की तरह स्पर्श किया था। शराब से भरे गिलासो के सामने मरभुखो की बात पहले उन्हे झटका देनेवाली सिद्ध हुई थी। उन्हे शराब मे गुनाह दिखाई देने लगा था, जो वह न देखना चाहते थे। लेकिन जैसे ही पाचू ने नाटकीय ढग से मरभुखो की मौत पर एक जाम पीने को कहा, उनके दिलो की बाछे खिल गई। यह वे कर सकते थे। कठोर सत्य शौक का घूट बनकर हलक के नीचे उतर गया। सहानुभूति नशा बनकर दिमाग पर सवार हो गई।

दास बताने लगे कि जहा-जहा वह गए, उन्होने किस तरह हज़ारो नगे-भूखो की महादुर्दशा को अपनी 'इन्ही' आखो से देखा। किस तरह उनके दिल मे अपने देश की गुलामी के लिए दर्द उमडा, अन्न से भरे हुए सरकारी गोदामो को देखकर किस तरह उनकी इच्छा होती थी कि वह उन गोदामो को खाली करवाकर गरीबो को बटवा दें—"हाय हमारा प्यारा भारतवर्ष!

हमारा वग देश ! क्या दुर्दशा हो गई हमारी ! जिस पवित्र भूमि पर दूध-घी की नदिया वहा करती थी, वही अब अन्न के एक-एक दाने के लिए लोग मोहताज है ?"

मिस्टर दास ने देश के दुःख से अति द्रवित होकर फिर शराब का एक घूट पिया।

दयाल जमीदार ने ठडी सास छोडी। कहने लगे—"मास्टर, सच कहता हू, बार-बार मेरी इच्छा होती है कि अपना सब कुछ इन गरीबो को बाट दू। हाय-हाय, कितना कष्ट है इन बेचारो को।"

कुछ देर के लिए सब मौन हो गए। दयाल और दास की बातो से पाचू ने उनमे मानवता की एक झलक देखी। वह सोचने लगा—"इसानियत ऐसे लोगो के दिल मे भी अपनी जगह रखती है। लेकिन, फिर भी ये लोग इतने कठोर क्योकर हो जाते हैं ? इन्हे अपना पाप दिखलाई क्यो नही पडता ? क्यो स्वार्थी हो जाते हैं ?"

यह सोचते हुए खुद को झटका—"उसने भी तो पाप किया है। घर-भर भूखा है और वह यहा बैठा हुआ रगरेलिया मना रहा है, खा रहा है, पी रहा है।"

अपने से बचने के लिए पाचू को कही भी ठिकाना न था। अपनी ही नजरो मे वह खुद इतना गिर गया था कि दूसरो के गुनाहो की तरफ आख उठाकर देखने की भी हिम्मत नही होती थी। शराब के लिए नफरत थी, गुनाह के लिए नफरत थी, और गुनाह के खयाल से बचने के लिए दिल मे अजहद बेचैनी भी थी। जब कोई बचाव न सूझा तो ईश्वर की शरण मे पहुचा—"मैं क्या करू ? ईश्वर ने ही मुझे इस कदर कमजोर बनाया है। और फिर अगर मैंने गुनाह किया तो वह मेरा गुनाह नही।"

इस खयाल से भी पाचू को चैन मिला। छटपटाहट ज्यादा महसूस की। झटके के साथ बुद्धि से नाता टूट गया। तेजी मे हाथ बढाकर उसने गिलास उठाया और आखें मीचकर एक घूट निगल गया। जल्दबाजी की वजह से एक घूट से ज्यादा पी गया, गले मे फदा पडा, खासी पैदा हुई,

आखो मे जलन और मिर की नसो मे ज्यादा उत्तेजना हुई।

दम तोडकर पाचू ने अपना सिर कुर्सी से टिका दिया। उसे ज़रा भी चैन न था।

घडी के घण्टे वजने लगे। नशे मे, झटके के साथ सिर उठाकर पाचू ने देखा। घडी कमरे के अदर थी, सामने से दिखाई भी नही देती थी। कान लग गए—एक, दो, तीन, चार सात, आठ, नौ घण्टे वजने बद हो गए।

नशे मे पाचू चौका। फिर खयाल जमा—"नौ वजे है। वडी रात हो गई। अब उठना चाहिए। मगर मन मुह चुराता था—"कैसे जाऊ ?"

मिस्टर दास अपने ढग से केदारा गा रहे थे, और दयाल जमीदार जी खोलकर दाद दे रहे थे।

"वेवकूफ कही के।" पाचू ने मन ही मन मे कहा और आसमान की ओर देखने लगा।

जेठ की फीकी चादनी थी। धूल-भरे आकाश मे तारे पाचू को वडे फीके लग रहे थे। "आधा चद्रमा अच्छा नही लगता, खूवसूरती मारी जाती है। चद्रमा या तो पतला, नोकीला अच्छा लगता है, या फिर, पूनो की रात का। ये तो वडा भद्दा लगता है—एकदम मनहूस। कितनी निष्प्राण चादनी है। कितनी मनहूसियत फैली हुई है चारो तरफ ! दम घुटता है !" खयालो के साथ ही उसका मन भी उखड गया।

"मैं अब चलूगा दयाल वावू। वडी देर हो गई है।" कहकर वह उठ खडा हुआ।

मिस्टर दास और वावू मे वहस छिड गई थी। मिस्टर दास अपने गीत को केदारा राग मे गाया हुआ मानते थे, और दयाल ज़मींदार उसे वागेसरी समझकर सराह रहे थे। मिस्टर दास ने एतराज़ उठाया। वहस छिड गई। केदारा के उदाहारण देने के नेक इरादे से दयाल वावू गाते-गाते, अपने गले के मुताविक भीमपलास की ओर मुड गए। दास ने उसके मालकोस होने का फतवा दे दिया। दयाल विगड पडे।

केदारा, भीमपलास, और मालकोस के इस झगडे के बीच मे पाचू उठ खडा हुआ था—"मैं चलूगा अब "

दयाल और दास, दोनो ने ही चौंककर पाचू की तरफ देखा। दयाल के कुछ कहने से पहले ही एक नौकर आ गया। अदब के साथ उसने बतलाया कि मोनाई ने दो औरतें भिजवाई हैं।

दास का चेहरा दमक उठा। बेताब होकर वह दयाल जमीदार और उन नौकर की ओर देखने लगा।

दयाल ने हुक्म दिया—"भेज दो।"

औरतो के साथ अजीम दरवाज़े के पीछे ही खडा रहा। फौरन ही आगे बढकर सलाम किया। लाज से सिकुडती हुई, घूघट से मुह ढाके दोनो स्त्रियो ने हाथ जोडकर प्रणाम किया।

पाचू ने देखा, दोनो औरतें धुली हुई उजली धोतिया पहनकर आई है। अरसे से गाव मे औरत-मर्द, किसीके तन पर उजला कपडा नही दिखाई देता था। ये उजली, नई धोतिया पाचू की आखो के लिए नुमाइशी चीज़ हो गई थी।

दोनो नौकर और अजीमा बाहर चले गए।

दयाल जमीदार गर्माए—"हटा घूघट। हाथी की सूडें निकाल रखी है।"

औरतो के हाथ कापकर अपना घूघट हटाने लगे। पाचू ने कौतूहल से देखा—बढई मुनीर की विधवा और और कालीराय की पत्नी।

कालीराय उसका बचपन का घनिष्ठ मित्र था। तीन महीने हुए, वह गाव से भाग गया था। पाचू कालीराय की पत्नी को खूब जानता है। उसे दीदी कहता है। कालीराय के पिता यही हैं।

दीदी यहा ?" पाचू की आखो के आगे सितारे घूम गए।

दयाल जमीदार ने उठकर दोनो के सिर का कपडा खीचकर नीचे गिरा दिया।

पाचू ने अपना सिर झुका लिया था।

दयाल जमींदार दोनों को देखकर खुश हुए—"मोनाई ने अच्छा काम किया है।" मुनीर की बेवा की ठोडी उठाकर उसके गले में चुटकी लेते हुए बोले—"किसकी औरत है तू?"

सवाल के साथ ही पाचू की नजरें उठ गईं। कालीराय की पत्नी की आखें भी मकपकाकर उठी। उसकी आखें अचानक पाचू की उठती हुई आखो से मिल गईं। उसे काठ मार गया। चेहरा जर्द पड गया, और वह आखें उलटाकर गिर पडी।

पाचू तेजी से कमरा छोडकर बाहर चला आया। उसके लिए जीवन असह्य हो उठा था। बौ' दी से बौ' दी तक—घर तक—तुलसी, मगला

उसे होश नही था कि वह कहा चल रहा है, किधर जा रहा है। आखो मे आसू छलछलाए हुए, तमतमाया हुआ चेहरा, और पैरो के साथ आंधिया वह रही थी। शीशमहल पार किया, झरने के पास से गुजरकर दरवाजे के बाहर आया, और ज्ञान-शून्य-सा नीचे उतरने लगा। तेजी के साथ लड़-खडाते हुए पैरो की खटाखट आवाज़ सीढियो पर सुनाई देती थी।

वृन्दावन पाचू की यह दशा देखकर समझा कि बहुत पी गए हैं। उसे गिरने से बचाने के लिए वह झपटकर आया। उसने दोनो हाथो से पाचू को थाम लिया। पाचू निश्चेष्ट-सा उसके ऊपर लुढक पडा। उसकी आखें बद हो गईं। वृन्दावन ने सभाला—"छोटे ठाकुर! छोटे ठाकुर!"

पाचू ने आखें खोली, वृन्दावन को देखा। वृन्दावन बोला—"घर पहुचा आऊ छोटे ठाकुर?"

पाचू की शर्म पर करारा तमाचा पडा। वह बडी तेजी के साथ सभला, सीधा खडा हो गया और सिर झुकाकर बोला—"नहीं, वृन्दावन, मैं ठीक हू।"

वृन्दावन के सामने भी पाचू की निगाहे झुकीं। पाचू के अन्दर मे लज्जा-जनित पीडा अब पहाड बन गई थी। अपनी अतिगहन हीन भावना पर वह कठोर अनुशासन कर रहा था। वह पत्थर बन रहा था।

वृन्दावन ने पाचू के पैर छुए और हाथ जोडकर बोला—"छोटे

ठाकुर! बगलो की पचायत मे हसो का कौन काम? अब तक तो नही, मुल आज आपको हिया देख के समुझ पडा कि कलजुग आय गया। जब पहाड डोल गए, तब धरती कैसे बचेगी?—जैसी लीला भगवान की!" कहते हुए वृन्दावन ने एक निसास छोडी और हाथ हिलाकर, सिर लटकाए हुए एक सीढी ऊपर चढ गया।

पाचू ने अपना सिर उठाया और तान लिया। वृन्दावन की तरफ देखकर बोला—"तुम मुझसे बडे हो वृन्दावन। मुझे क्षमा कर दो।"

वृन्दावन ने घूमकर पाचू को देखा। वह तेजी के साथ नीचे उतर रहा था।

"सारा ससार मुझसे बडा है। हर शख्स मुझसे बडा है। दुनिया की हर चीज मुझसे बडी है। मुझे किसीको भी छोटा समझने का अधिकार नही—कोई नीच नही, कोई बुरा नही। सारी बुराइया मुझमे हैं। मैं सबसे बुरा हू। मैं ही बुरा हू।"

राह न पाकर तैश आखो से बरस पडा। दोनो गालो पर धीरे-धीरे आसू बह रहे थे और पाचू सिर झुकाए हुए, दयाल जमीदार की हवेली के बाहर गाव मे जा रहा था।

हठ के साथ पाचू अपने अह को छुरिया भोक रहा था। हुक्म की चाभी पर चलनेवाला बेजान पुतला, गुलामो का गुलाम, वृन्दावन इस समय उसकी नजरो मे बहुत ऊचा उठ गया था—गुरु-सा महान लग रहा था।

अकाल पडने से पहले पाचू की महत्त्वाकाक्षाए सयत भाव धारण किए हुए थी। बिना किसी प्रकार के मानसिक द्वन्द्व के उसका जीवन सधा हुआ और सीधा चल रहा था। अकाल मे उसने अपनी आर्थिक परवशता, और उससे उत्पन्न जीवन की कठिनाइयो का अनुभव किया। कुलीनता, आबरू उच्च शिक्षा और स्वाभिमान के सहारे वह अपनी आर्थिक हीनता से लोहा लेकर अपने को ऊचा उठाए रखने का प्रयत्न करता था, और यही [illegible] होकर वह [illegible] हो उठा था। और एक बार आत्मविश्वास खो

बैठने के बाद उसे अपने मन की थाह न मिली। वह सदैव अतर्द्वन्द्व की गहराइयो मे डूबता-उतराता रहा। समाज मे अपने स्थान के लिए वह आवश्यकता से अधिक व्यग्र रहने लगा। व्यग्रता ने बुद्धि का सयम खोया, और बडप्पन की चाह ने ही उसे दयाल जमीदार का मुसाहिब बनाकर, आज अपनी ही नजरो मे बेहद गिरा दिया। मन की इसी गिरी हुई हालत मे पाचू ने खुद को दुनिया का कमतरीन इसान स्वीकार किया, इस अप्रिय बात को स्वीकार करने के कारण उसकी आखो मे आसुओ की धारा बह चली।

आसुओ से गुबार निकल जाने के बाद, धीरे-धीरे बुद्धि सयत हुई। वह सोचने लगा—"लेकिन बडप्पन की चाह किसमे नही होती ?"

सवाल खुद ही जवाब भी बन गया—"तब फिर किसीके बडप्पन को दबाकर उसपर अपना प्रभुत्व स्थापित करने का अधिकार भी किसी-को नही। हर मनुष्य स्वभाव से ही बडा है। इसलिए हर मनुष्य समान है, एक-सा है—एक है।"

"फिर यह छोटे-बडे का भेदभाव जो हर तरफ दुनिया मे दिखाई देता है ?"

'यह उसी बुराई का परिणाम है, जिसने मुझे गिराया है।"

पाचू ने अपने पतन मे ससार के पतन का कारण देखा—"खुदी के लिए सारी दुनिया तबाह हुई जा रही है।" पाचू ने सोचना शुरू किया—"लेकिन यह खुदी है क्या ? और क्यो है ? अपने अस्तित्व की चेतना को मनुष्य सर्वव्यापी और सामूहिक रूप मे क्यो नही देखता ? मैं अपने को सारी दुनिया से अलग रखकर क्यो देखता हू ? दुनिया से अलग रहकर मैं अपनी असलियत का अनुभव ही क्योकर कर सकता हू ? सम्मिलित रूप मे, समाज की प्रत्येक क्रिया-प्रतिक्रिया का प्रभाव मुझपर पडता है और मुझे चैतन्य बनाता है। मैं अपने हर अच्छे और बुरे काम का निर्णय समाज के तराजू पर ही करता हू। मैं ही नही, हर एक आदमी यही करता है। अपने हर काम मे मनुष्य को दुनिया के रुख-रेख की ही फिक्र रहती है

फिर वह अलग कैसे हो जाता है ? क्यो हो जाता है ?"

प्रश्नो की लडी पूरी हुई, परन्तु उत्तर उसे नही मिला। पाचू का सिर ऊपर उठा, मानो अपना मार्ग खोजने का प्रयत्न कर रहा हो। लेकिन सामने जो कुछ था, उसे देखकर वह चौक उठा। चादनी मे दूर तक—सामने, आसमान लाल हो रहा है! क्यो ? लपटें उठ रही हैं। आग ! कहा लगी ?

पाचू का कौतुहल भय के साथ-साथ बढा। वह तेज़ कदम बढाने लगा—"क्या भूख और महामारी ही काफी नही थी जो प्रकृति को भी ज़ुल्म ढाने की ज़रूरत महसूस हुई ? भयकर आग है !"

पाचू और तेज़ी के साथ आगे बढने लगा।

मोनाई की दूकान दिखाई देने लगी। शोर और हसी सुनाई देने लगी। आग की नाचती हुई लपटो से घिरा हुआ मकान दीखने लगा—"स्कूल के पास है नही, स्कूल मे ही आग लगी है"—पाचू के दिल की धडकन बढ गई। उसने मोनाई की दूकान की तरफ देखा। दूकान सूनी पडी थी। वह दौडने लगा।

आदमी चारो ओर, घेरे मे, उछल-कूद और शोर मचा रहे थे। स्कूल मे आग लगी थी। हवा मे गर्मी भरी हुई थी। अट्टहास, गाना, शोर सब मिलकर कानो मे भयकर रूप से समा रहा था।

दिन ढले, शाम को छेदासिंह ठेले पर बोरे लदवाकर स्कूल मे लाया था। अपने और अपने साथियो के लिए जो बोरे उसने मोनाई से ज़बरदस्ती वसूल किए थे, वे भी स्कूल के ही एक कमरे मे लाकर रक्खे गए थे। टाट छाप वाले चावल के बोरे बाहर रक्खे गए। अपने लठैत साथियो की मदद से छेदासिंह ने गाव मे चावल बाटना शुरू किया। उसमे भी जितनी बन पडी लूट-पाट की। फिर भी चावल सबको मिल रहा था। खुशी सबके दिलो मे नाच रही थी।

अन्न का देवता आज मानव पर प्रसन्न हुआ था। जिनके पीछे पैसा-टका गया, गहना-कपडा गया, घर का तार-तार बिक गया, आबरू गई,

लाज गई, धर्म-ईमान गया, मा-बाप, बहिन-भाई, स्त्री और बच्चे तक बिछड गए— जान देकर भी जिस अन्न के देवता को मानव सतुष्ट न कर सका था, वही आज छेदासिंह की गालियो के साथ लुट रहा था। जीवन का भिखारी, इसान, आज आखिरकार जीवन के सहारे को पा ही गया। वह खुशी के मारे पागल हो उठा। हसी, आसू, चीख, पुकार, गाने, नाचने, गले मिलने और धौल-धप्पा करने के रूप मे खुशी बहुत दिनो बाद आज इसान के दिल की गहराइयो से निकलकर वातावरण पर छा जाने के लिए वेग के साथ बढ रही थी। आज मोहनपुर गाव मे अन्न का त्योहार था। लोग नाच रहे थे, चक्कर खाकर गिर पडते थे, चावल बिखर जाता था लोग बीन-बीनकर, छीन छीनकर खा रहे थे, मुट्ठी भर-भरकर चावल मुह मे रखते थे— हसी फूटी पडती थी।

अजीम गुस्से से उबला पडता था। जिस तरह आज छेदासिंह ने उसके मालिक और गुरु, मोनाई की तथा उसकी बेइज्जती की थी, उसका बदला लेने के लिए वह दिल ही दिल मे बेताब हो रहा था। छेदासिंह और उसके साथियो की यह जीत और खुशी उसे न पची। अधेरा होते ही, पोखर के पीछे से जाकर उसने स्कूल के कमरे मे आग लगा दी जिसमे छेदासिंह और उसके साथियो ने लूट के हिस्सो के बोरो को लाकर रखा था। आग जगह-जगह से लगाई गई, और देखते ही देखते आसमान म लपटे उठने लगी।

चारो ओर 'आग-आग' का शोर मच गया। छेदासिंह और उसके साथी घबराकर बरामदे से बाहर भागे। चावल पाने की आस मे खडी हुई भीड, छेदासिंह के हटते ही, चावल के बोरो पर टूट पडी। उन्हे आग की चिन्ता नही थी। पेट की आग को बुझाने के लिए वे चावल के बोरो से जूझ रहे थे।

आग की लपटो को देखकर लोग खुश हुए। उनके लिए यह एक बहुत बडा तमाशा बन गया। किसीको सूझ गया, इस आग मे चावल पकना चाहिए। चारो ओर 'पकाएगे, पकाएगे' का शोर मच गया।

बहुत-से लोग इधर-उधर से टूटे-फूटे मटके, नादे वगैरह लाने के लिए लपके। पोखर से पानी भरकर लाने लगे। शक्ति से अधिक वह काम कर रहे थे। इस समय कमज़ोरी और थकावट के लिए कहीं भी, ज़रा-सी भी, गुंजाइश न थी।

आग की लपटें ऊंची उठ रही थीं। सामने, छेदासिंह और उनके साथी हतप्रभ और अवाक् खड़े थे। परिस्थिति उनके रोब और दबदबे और बस के बाहर थी, वे चू तक करने की हिम्मत नहीं कर सकते थे।

आग के आसपास टूटी-फूटी नादों और मटकों में पानी भरकर चावल छोड़ा जा रहा था। लोग सोचते थे, पक जाएगा। कुछ या तो फक्की मार रहे थे। कच्चे चावल पेट में चुभते थे, मरोड़ होती थी, चीख-पुकार होती, कोई गिरता था, कोई पेट पकड़कर मसलता था, कोई खुशी में नाचता था, कोई थककर चूर हो गया था।

लपटों की लाल रोशनी में काली, खुरदरी झिल्लियों से मढ़े हुए हड्डियों के ढांचे खुशियां मना रहे थे। सिर और चेहरे की हड्डियों के हर उभरे हुए हिस्से, गहरे गड्ढों में धंसी हुई आंखें, दांतों की कतारें, दाढ़ी और सिरों के बाल ज़्यादातर उड़े हुए—जगह-जगह उगे हुए उनके गुच्छे, कंधों की उठी हुई हड्डियां, पसलियों में पेट की खोह, कमर में लिपटे हुए फटे चिथड़ों में चमकती हुई कूल्हे की हड्डियां, घुटनों की उठी हुई हड्डियां—लपटों की रोशनी में सिर्फ़ हड्डियां ही हड्डियां चमकती थीं। अपना ही रक्त-मांस खा-खाकर मानव देहधारी जीवन अनैतिकता और अन्याय के खिलाफ़ जेहाद बोल रहा था।

सूखी टांगें, बड़ा पेट, अस्सी बरस के बूढ़ों की तरह झुर्रियां लटकी हुई, गालों के पुचकुल्ले नोक की हद तक जबड़ों के भीतर धंसे हुए, हंसने पर दांत उस रोशनी में तलवार की धार की तरह चमकते थे—चार-पांच से लेकर दस-बारह बरस तक के बच्चे, नौजवान, जवान, अधेड़ बूढ़े, खाज, गर्मी वगैरह चर्म-रोगों से सड़े हुए शरीर वाले, छोटे-बड़े, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, हिन्दू, मुसलमान—मानव—जीवित कंकालों का

लाज गई, धरम-ईमान गया, मा-बाप, बहिन-भाई, स्त्री और बच्चे तक बिछड गए— जान देकर भी जिस अन्न के देवता को मानव सतुष्ट न कर सका था, वही आज छेदासिह की गालियो के साथ लुट रहा था। जीवन का भिखारी, इसान, आज आखिरकार जीवन के सहारे को पा ही गया। वह खुशी के मारे पागल हो उठा। हसी, आसू, चीख, पुकार, गाने, नाचने, गले मिलने और धौल-धप्पा करने के रूप मे खुशी बहुत दिनो बाद आज इसान के दिल की गहराइयो से निकलकर वातावरण पर छा जाने के लिए वेग के साथ बढ रही थी। आज मोहनपुर गाव मे अन्न का त्योहार था। लोग नाच रहे थे, चक्कर खाकर गिर पडते थे, चावल बिखर जाता था लोग बीन-बीनकर, छीन-छीनकर खा रहे थे, मुट्ठी भर-भरकर चावल मुह मे रखते थे— हसी फूटी पडती थी।

अजीम गुस्से से उबला पडता था। जिस तरह आज छेदासिह ने उसके मालिक और गुरु, मोनाई की तथा उसकी बेइज्जती की थी, उसका बदला लेने के लिए वह दिल ही दिल मे बेताब हो रहा था। छेदासिह और उसके साथियो की यह जीत और खुशी उसे न पची। अधेरा होते ही, पोखर के पीछे से जाकर उसने स्कूल के कमरे मे आग लगा दी जिसमे छेदासिह और उसके साथियो ने लूट के हिस्सो के बोरो को लाकर रक्खा था। आग जगह-जगह से लगाई गई, और देखते ही देखते आसमान मे लपटे उठने लगी।

चारो ओर 'आग-आग' का शोर मच गया। छेदासिह और उसके साथी घबराकर बरामदे से बाहर भागे। चावल पाने की आस मे घिरी हुई भीड, छेदासिह के हटते ही, चावल के बोरो पर टूट पडी। उन्हे आग की चिन्ता नही थी। पेट की आग को बुझाने के लिए वे चावल के बोरो से जूझ रहे थे।

आग की लपटो को देखकर लोग खुश हुए। उनके लिए यह एक बहुत बडा तमाशा बन गया। किसीको सूझ गया, इस आग मे चावल पकना चाहिए। चारो ओर 'पकाएगे, पकाएगे' का शोर मच गया।

बहुत-से लोग इधर-उधर से टूटे-फूटे मटके, नादें वगैरह लाने के लिए लपके। पोखर से पानी भरकर लाने लगे। शक्ति से अधिक वह काम कर रहे थे। इस समय कमज़ोरी और थकावट के लिए कही भी, ज़रा-सी भी, गुजाइश न थी।

आग की लपटें ऊची उठ रही थी। सामने, छेदासिह और उसके साथी हतप्रभ और अवाक् खडे थे। परिस्थिति उनके रोब और दबदबे और बस के बाहर थी, वे चू तक करने की हिम्मत नही कर सकते थे।

आग के आसपास टूटी-फूटी नादो और मटको मे पानी भरकर चावल छोडा जा रहा था। लोग सोचते थे, पक जाएगा। कुछ यो ही फकी मार रहे थे। कच्चे चावल पेट मे चुभते थे, मरोड होती थी, चीख-पुकार होती, कोई गिरता था, कोई पेट पकडकर मसलता था, कोई खुशी से नाचता था, कोई थककर चूर हो गया था।

लपटो की लाल रोशनी मे काली, खुरदरी झिल्लियो से मढे हुए हड्डियो के ढाचे खुशिया मना रहे थे। सिर और चेहरे की हड्डियो के हर उभरे हुए हिस्से, गहरे गड्ढो मे धसी हुई आखें, दातो की कतारें, दाढी और सिरो के बाल ज्यादातर उडे हुए—जगह-जगह उगे हुए उनके गुच्छे, कधो की उठी हुई हड्डिया, पसलियो मे पेट की खोह, कमर मे लिपटे हुए फटे चिथडो मे चमकती हुई कूल्हे की हड्डिया, घुटनो की उठी हुई हड्डिया—लपटो की रोशनी मे सिर्फ हड्डिया ही हड्डिया चमकती थी। अपना ही रक्त-मास खा-खाकर मानव देहधारी जीवन अनैतिकता और अन्याय के खिलाफ जेहाद बोल रहा था।

सूखी टागे, बडा पेट, अस्सी बरस के बूढो की तरह झुरिया लटकी हुई, गालो के पुचपुल्ले होने की हद तक जबडो के भीतर धसे हुए, इनके दात इस रोशनी मे तलवार की धार की तरह चमकते थे—चार-पाच से लेकर दस-बारह बरस तक के बच्चे, नौजवान, जवान, अधेड बूढे, दाद खुजली वगैरह चर्म-रोगो से सडे हुए शरीर वाले, छोटे-बडे, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, हिन्दू, मुसलमान—मानव—जीवित ककालो का

मेला लगा था। लपटो की पार्श्वभूमि मे भूख का त्योहार मनाया जा रहा था। जन-समूह आनद से परिपूर्ण था। उन्हे तन-बदन का होश नही था। अन्न को जीतकर उन्हे भूख का ध्यान नही रहा, भूख को जीतकर उन्हे अपना ध्यान नही रहा। बहुत बडी कीमत चुकाकर मानव-जीवन आज अपना त्योहार मना रहा था। वह मुक्त था—भय से, चिन्ता से, भूख-प्यास, मान-अपमान से, बुद्धि से, ज्ञान से, चेतना से।

आबरूदार (जिन्होने सरकारी तौर पर अपने घरो मे अकाल होने की घोषणा नही की थी, मगर जिनके घरो का हाल कलकत्ते और तमाम हिन्दुस्तान के अखबारो मे रोज छपता था) जरा दूर, जगह-जगह टोलियो मे खडे देख रहे थे। मौका पाकर चावल भी चुरा लाते थे।

अजीम बदला लेकर जीत गया था। मगर जब उसने मोनाई से अपने इस महान कृत्य का बखान किया तो उसने इसे फटकारा। उसकी चाल के अनुसार यह सब चावल जनता को ही मिलता और छेदासिंह हाथ मसलकर रह जाता। मगर छलक जानेवाले दूध पर पछताना मोनाई का स्वभाव नही। दोनो एक कोने मे खडे हुए सामने का दृश्य देख रहे थे।

अजीम बोला—"क्या नजारा है! भूत जैसा भयावना!"

मोनाई वोष्टम, सामने देखते हुए, चेहरा निर्विकार रखकर अति गम्भीर भाव से बोला—"ये भूत नही है अजीमा, ये है वर्तमान—परतच्छ वर्तमान—भूत से भी जादा भयकर। ये भूख मेरे गोदाम का एक दाना भी नही छोडेगी। आज की जागी हुई भूख बरसो नही बुझेगी। गोलिया और लाठिया भी इसे नही रोक सकती।"

मोनाई की इस बात से अपने सामने वाले दृश्य की गम्भीरता का अनुभव करते हुए, अजीम ने चिंतित स्वर मे पूछा—"तो चाचा फिर?"

अजीम के कधे पर हाथ रखकर, आवाज दबाकर मोनाई कहने लगा—"बेटा अपने बाप से जाकर कह दे, तुर्त फुर्त आठ नावो का बन्दोबस्त कर दें। दुइ घटे मे सब सरोजाम हुई जाए—समझे? और देख तू लौट के

ला, नव तक मैं घर पहुचता हों। दुई सौ रुरै अटी मे वाध के जरा छेदामिह के पास लपक जाना। पिछली वार तो पचास मे निपट गया था, मुल अवकी वेर मामला और है। जहा तक वनै, कमती मे पटाना—आगे फिर राम मालिक हैं। वीस आदमी लाना। पचास वोरे छोड के, वाकी रातोरात आज ही लदाए देता हों।"

अजीम ने पूछा —"कहा ले जाओगे चाचा ?"

"अभी तो देवीपुर की हाट जाऊगा। औ' हुआ से जो जुगुत वैठ गई तो कलकत्ते तक निकल जाऊगा। सुना है, भाव सैकडे पर टकोरे लै रहा है आजकल।"

अजीम चिन्ता प्रकट करते हुए वोला—"सुना है आजकल दरिया-पुलुस वहुत वढ गई है चाचा।"

मोनाई ने निश्चिन्त स्वर मे उत्तर दिया—"अरे वेटा, वडे-वडे पानी देख चुका हो। ये दरिया-पुलुस भी देख लेऊगा। और, यों तो, इत्ती वेला हारे जुआरी का दाव है मेरा।"

"पर चाचा, हारे जुआरी के दाव से कैसे चलेगा ? वोरो के साथ, खुदा न करे, तुम पकड लिए गए तो यहा का क्या होगा ?"

मोनाई मुस्कराया, अजीम के कधे पर प्यार से हाथ रखकर वोला—"मेरी चिन्ता न कर वेटा। मोनाई केवट किसीकी पकडाई मे आनेवाला जीव नही। हा, वोरे भले ही पकडे जाए तो मुल मो कुछ नही, भगवान जी ने चाहा तो सव कुसल होएगी। वैसे इधर का इतरजाम भी लैस कर चला हों।"

अजीम को लेकर मोनाई अपने घर की ओर मुडा—"यूनन वोट के मिस्त्री साहेव आए हैं। जमीदार साहेव के यहा भेंट भई तो मैंने पानी चढाया। तुम्हारी वो दोनों औरत भी काम करैंगी। अभी पन्द्रा पर अडे हैं, मुल साहेव वन मान भी जाए। मैं वारह की वात कह आया हों। तीन हजार रुपया मिस्त्री को दै जाऊगा। पौने पन्द्रा तक जाके पटाना। फिर भी न मानै तो रुपिया पटक के माल उठाय लाना। दूसरी खेप मे वो

हजार वोरे भी जब निकाल आओगा तब जाके घाटा पूरा होवैगा। क्या समझे। बडा जखम कीना है जमीदार ससरे ने भी। ये साला भी मेरे हाथों ''

मोनाई की बाह झिझोडकर अजीम ने धीरे से कहा—"चाचा छोटे ठाकुर।"

पोखर के किनारे खडा हुआ पाचू अपने सामने के दृश्य मे खो गया था। वह टकटकी बाधकर अपने स्कूल से निकलती हुई लपटो को देख रहा था।

पाचू का सपना जल रहा था। लपटें उसके दिल मे उठ रही थी। राम दुलाल खूडो, और गाव के दूसरे बडे-बूढो के विरोध से तनकर उसने इसी जमीन पर दूले-बाग्दियो के लडको को पढाना शुरू किया था। इसी जमीन पर वह बडे-बडे जमीदारो, साहूकारो, रईसो, अफसरो और कलेक्टर तक को ला चुका था। बच्चो का शोरगुल, खेल-कूद, दर्जो मे बैठकर पढना, दर्जो मे बच्चो को पढाते हुए कानाई और गोविन्द मास्टर, गणेश—जिस दिन गणेश मरा, वही पाचू के स्कूल आने का भी आखिरी दिन था। उसी दिन मुनीर मरा था। उसी दिन मोनाई से बेंचो का सौदा किया था। उसी दिन, जीवन मे पहली बार पाचू ने आत्मविश्वास खोया था। उसी दिन जनता के पवित्र दान से खरीदी हुई बेंचो को अपने स्वार्थ के लिए बेचकर पाचू का अभिमानी मस्तक सदा के लिए झुक गया था। स्कूल की इमारत के साथ-साथ पाचू की पुरानी स्मृतिया, पाचू का गौरव, पाचू का कलक भी जल रहा था।

आग से उसकी टकटकी बध गई थी, पत्थर की मूर्ति की तरह वह खडा हुआ था—"मेरा पाप जल रहा है। मेरा अहकार जल रहा है।"

लाज के बधन तोडकर स्त्रियो का दल आया। चावलो पर लाज-विहीना स्त्रियो के धावे से आनन्दमग्न पुरुष-दल चौका। स्त्रिया अनावृत दशा मे बाहर चली आईं—पागलपन की अवस्था मे भी पुरुष-समाज यह देखकर क्षोभ उठा। पुरुषो को क्रोध आया। वे स्त्रियो पर गालिया की

बौछार करते हुए टूट पडे। स्त्रिया भी पीछे नही हटी। उन्हे भी खाने का हक है, उन्हे भी जीने का हक है। पुरुष इस हद तक स्त्री को अपनी दासी बनाकर नही दबा सकता।

पाचू उन्हे देखकर सोच रहा था—"हमे सबका समान अधिकार स्वीकार करना ही होगा। जब तक एक भी स्त्री दासी रहेगी, उसके गर्भ से दास ही उत्पन्न होगे। दासता जीवन को मृत्यु की जडता से बाध देती है। यह अकाल हमारी दासता का परिणाम है। यह अकाल मनुष्य की दासता का परिणाम है।

"अपने पेट की आग को बुझाने के लिए पुरुषो ने स्त्रियो के तन के कपडे बेच दिए, उनका तन भी बेच दिया—फिर नारी की कौन-सी लाज मिट जाने के भय से पुरुष इस समय त्रस्त है?"

दो पुरुष एक स्त्री को पीछे ढकेल रहे थे। उस स्त्री ने उनमे से एक के हाथ को क्रोध से चबा लिया। उसका मास उखड आया। पुरुष जोर से चीखकर गिर पडा।

पाचू ने आखे मीच ली। फिर उसके मन मे हुआ कि इन्हे बचाया जाए, किन्तु पास जाने का साहस न हुआ।

पाचू घर लौट चला।

वह सोच रहा था—"मनुष्य यहा तक गिर गया है! फिर बर्बर युग से आज मे अतर ही क्या रहा? तो क्या मानव को आज तक की प्रगति, उसकी सभ्यता, ज्ञान, विज्ञान, सब गलत हैं?"

पाचू की बुद्धि इसे स्वीकार करने के लिए तैयार न थी।

'इस पतन का कारण" उसने आगे सोचा—"व्यक्ति का अह है जो दूसरे को गिराकर प्रसन्न होना चाहता है, दूसरे को अपना गुलाम बनाकर, पाशविक शक्ति के बल पर अपनी सत्ता चाहता है। जहा तक यह वृत्ति रहेगी, जब तक दुनिया मे एक भी गुलाम रहेगा, दुनिया मे योही अशान्ति बनी रहेगी। मुक्त होने के लिए मनुष्य को अपने इस जगली सस्कार का बीज नाश करना होगा। सभ्य बनने के अनेको प्रयोगो मे समाज को

एक करते हुए, व्यक्ति हर बार, अनजाने तौर पर अपने को ही महत्त्व देता चला गया। बौद्धिक और दार्शनिक रूप से भी उसने समाज को सदा अपना चेला बनाकर ही आगे बढाया। उन्हे अपना साथी बनाकर साथ-साथ आगे नही बढा। व्यक्ति समाज का नेता नही, साथी बनकर ही ठीक तरह से चल सकता है। मानव और मानवता को तभी एक रूप मे देखा जा सकता है। सच पूछो तो इन्हे दो नाम देकर अलग-अलग देखना ही भ्रम है। एक ही चीज के दो नाम हैं—'व्यक्ति और समाज—मानव और मानवता।'

विचारो की गति से ही पाचू के पैर भी आगे बढ रहे थे।

७

इधर कई दिनो से गिद्ध सैकडो की सख्या मे आसमान पर मडराया करते है। वे बडे निडर हो गए हैं। चलते-फिरते आदमियो को छोडकर, पडे हुए हर ज़िदा और मुर्दा आदमी को वह अपना आहार मानते है। गाय, बैल, आदमी, औरतें, बच्चे, बात की बात मे गिद्धो, सियारो और कुत्तो द्वारा ठठरियो मे परिवर्तित कर दिए जाते है। गाव मे जगह-जगह ठठरिया और अधखाई सडती हुई लाशे दिखाई देती है।

स्कूल की होली जलाकर, चावलो से खेल चुकने के बाद, गाव तबाही की अतिम दशा को पहुच चुका था। भूख के साथ ही साथ हैजा और मलेरिया का भी ज़ोर हुआ। परे के परे साफ होने लगे।

मोनाई उसी रात माल लदवाकर बाहर चला गया। अज़ीम ने मोनाई के आदेशानुसार, यूनियन बोर्ड के सेक्रेटरी से हज़ार बोरे खरीद लिए और उन्हे लेकर वह खुद ही सेठ बन बैठा। उसने अपनी नावे चलानी शुरू कर दी।

बढई नूरुद्दीन मुनीर की बीवी को लेकर कलकत्ते गया है। मुनीर की

दोनो निस्सहाय लडकिया मा-बाप से बिछडकर बेहाल हो गई। पडोस के दीनू ने उन्हे अपने घर मे शरण दी। दया की भावना अब भी कभी-कभी जाग पडती थी। दीनू के घर मे कोई नही रहता था। उसकी पत्नी अपने बच्चो को लेकर मैके चली गई थी। बाद मे खबर आई कि वह बच्चों को छोडकर गोरो की पलटन मे अपना तन बेचने लगी है। दीनू को इससे गहरा धक्का लगा। बीवी-बच्चे खोकर भूख का मारा दीनू चाद और रुकिया को अपना वात्सल्य-प्रेम देकर जी बहलाने लगा।

खाने को दीनू के पास कुछ था नही। चाद और रुकिया की भूख देख-कर वह तडप उठता था। भूख के कारण रोती हुई बच्चियों को अपने पास सुलाकर रोते-रोते वह रात बिता देता था। दीनू खुद घर से निकलता था, न बच्चियो को ही कही जाने देता था। धीरे-धीरे उसने बोलना छोड दिया। आठो पहर वह गुम होकर बैठा रहता और लुटे हुए घर को निहारा करता। एक दिन वह बडी देर तक चूल्हे की ओर देखता रहा। देखते-देखते उसे विचार आया कि जिस दिन से चूल्हे मे आग जलनी बन्द हो गई है उसी दिन से घर की यह दुर्दशा हुई है। इसलिए अगर चूल्हा फिर से जल जाए तो उसके घर की रौनक भी फिर से लौट आएगी। दीनू को सहसा यह विश्वास हो गया कि चूल्हा जलते ही उसकी पत्नी घर लौट आएगी, बच्चे आ जाएगे, अकाल खत्म हो जाएगा और फिर से अमन-चैन का राज हो जाएगा।

इस विचार ने दीनू को स्फूर्ति दी। उसकी आखें चमक उठी। वह तेजी से उठा, अपनी झोपटी के टूटे हुए छप्पर से बास निकालने लगा। उसे बडी मेहनत करनी पडी। बास खीचते हुए उसका हाथ कट गया, खून निकलने लगा, लेकिन उसे इसकी परवाह न थी। फटे बास को उसने पैर से दाब-दाबकर तोडा। छोटी-छोटी खपाचिया बनाई। हाथ का जख्म और बढने लगा। उसे इसका ध्यान भी नही था। चाद और रुकिया आश्चर्य से उसे देख रही थी। खपाचिया बनाकर दीनू ने चूल्हे मे रखी और लपकता हुआ बाहर गया। अरसे बाद दीनू घर से बाहर निकला था। अजीम का

घर पास था। उसके दरवाजे पर हुक्के-पानी के लिए कौडे मे आग रहती थी। दीनू चोर की तरह से कौडा उठाकर भागा। अमानुषिक स्फूर्ति के साथ दीनू काम कर रहा था। कौडे की आग चुल्हे मे डाल दी। चाद और रुकिया से कहा—"फूको।" वहुत दिनो वाद दीनू वोला था। यथाशक्ति वे चूल्हे को सास से फूकने लगी। लडकिया कमजोर पडती थी। दीनू उनकी गर्दन पकडकर खुद भी फूकता था और लडकियो को भी मजवूर करता था। दोनो लडकिया डर गई थी।

वास की खपाचियो से लपट निकली। दीनू खुश होकर नाचता हुआ किलकारिया मारने लगा। वच्चिया आश्चर्य से उसकी ओर देखने लगी। लगी। सहसा दीनू ने सोचा कि जव चूल्हे मे आग होती थी तव कुछ पकता था और जव पकता था तभी घर मे रौनक होती थी। पके क्या ? उसने घर मे चारो ओर नजर दौडाई। कुछ भी न था। लेकिन कुछ न कुछ तो जरूर ही पकना चाहिए, वरना घर की रौनक नही लौटेगी। दीनू अधीर होने लगा। लपट जरा धीमी होने लगी थी। दीनू की व्याकुलता वढने लगी। वह चारो ओर देखने लगा। सहसा उसने सोचा—"ये लडकिया किस दिन काम आएगी ? इन्हे पकाओ—पकाओ तो घर की रौनक लौटेगी पकाओ।" चमकती हुई आखो मे चाद को देखते हुए सहसा वडी जोर से उसकी गर्दन पकडी और जोर के साथ चूल्हे मे उसका मुह झुका दिया। चाद चीख पडी। रुकिया जोर-जोर से चीखने लगी। दीनू दोनो हाथो से दृढतापूर्वक चाद का मुह चूल्हे की आग मे जलाता ही रहा। उसे अपने घर की रौनक चाहिए थी। घर की रौनक आए वगैर अकाल नही जाएगा। वह अकाल से छुटकारा चाहता है। वह सुख और शान्ति चाहता है।

अजीम रुकिया की 'वचाओ, वचाओ' गुहार सुनकर दौडा आया। दीनू को चाद का मुह आग मे झुलसाते हुए देख वह एक क्षण के लिए सिहर-कर स्तम्भित हो गया। फिर तेजी से लपककर दीनू को घसीटकर अलग ..। चाद के प्राण निकल चुके थे। चेहरा जलकर अत्यन्त विकृत हो

चुका था। चर्बी और मास-मज्जा के लोथडे चमक उठे थे। दीनू गौर से देखने लगा। वह समझ नही सका कि यह क्या हो गया है।

गाव मे पागलो की सख्या बढ रही थी।

गाव दिन-ब-दिन सूना होता जा रहा था। छोटे बच्चे या बूढे औरत-मर्द ही गाव मे अधिक दिखाई देते थे। यो अब उनकी सख्या भी कम होती जा रही थी। जवान बहू-बेटिया बिकने लगी थी। अजीम और नूरुद्दीन ने यह व्यापार शुरु कर दिया था। मोनाई से लाग-डाट चल रही थी।

मोनाई जब गाव लौटकर आया तो उसने देखा कि उसका अति विश्वस्त दाहिना हाथ, शिष्य और सहकारी, अजीम उसे तीस हजार रुपये का धक्का पहुचाकर सेठ बन चुका था। मोनाई ने अपनी पत्नी को बेहद पीटा, मगर अजीम से उसका बस न चल सकता था। पित्ते मारकर वह चुप बैठा रहा। माल खपाकर जो रकम वह कमाकर लाया था, उसे ही जमीन मे गाडकर वह अपनी बुरी ग्रह-दशा पर आह भरकर भविष्य के लिए चिंतन करने लगा। व्यापारी मोनाई नुकसान पर आसू नही बहाता, नुकसान से नफा कमाने की सोचता है।

उसने सुना, अजीम और नूरुद्दीन गाव की जवान औरतो को खरीद-कर बाहर बेच रहे हैं। बडा नफा कमा रहे हैं। मोनाई के मुह मे पानी भर आया।

नूरद्दीन मुनीर की बीबी को लेकर कलकत्ता गया था। बडे-बडे तजुर्बे लेकर लौटा है। नूरद्दीन ने कलकत्ते की सडको पर हजारो अकाल-पीडितो को भीख मागने, सडने और मरते देखा था। उसने अपने गाव के भी कुछ लोगो को उन अकाल-पीडितो की भीड मे देखकर पहचाना था। उसने दो दो, चार रुपये मे जवान औरतो को बिकते हुए देखा था। रिक्शा वालो को, फौजी पलटनियो को बुला-बुलाकर चकलो मे ले जाते हुए देखा था। अगूठे मे बडा घुघरू अटकाकर रिक्शा के हैंडिल को ठोकते हुए वे गोरा पलटनियो को देखकर 'ठुनठुन बाबू', 'ठुनठुन साहब' चिल्लाने लगते

थे। यह चकलो मे चलने के लिए साकेतिक निमत्रण था। बडे-बडे महलो, मोटरो, ट्रामो और बसो से भरी हुई धनाधीशो की महाविशाल नगरी की चकाचौध देखकर उसकी इच्छा भी कमाने की हुई। उसने चकले वालो मे दोस्ती की, रिक्शा वालो से जान-पहचान बढाई, बाजार को जानना शुरू किया। उसे पता लगा कि कई बडे-बडे सेठो ने सस्ते दामो मे औरते खरीदकर चकले आबाद किए हैं। गुडो को इस धधे मे साझीदार बनाया है, पिए हुए गोरो और पलटनियो की जेबें खाली करवाकर वह इस धधे से भी दो पैसे कमा लेते हैं। नूरुद्दीन को लालच लगा। मुनीर की बीवी को सोनागाछी की एक वेश्या के यहा बेचकर उसने भी चकले की दलाली शुरू की। अच्छे पैसे बनने लगे। खूब 'सनीमा' देखा, मौजें उडाई। अकाल-पीडितो की दुर्दशा देखकर उसका दिल कभी-कभी पसीज भी उठता था। चकले की बहुत-सी लडकिया बीमार होकर बेकार हो चुकी थी। चकले की चौधराइन से नूरुद्दीन का सौदा तय हुआ था कि अगर वह नई लडकिया ला दे तो वह चकले मे साझीदार भी बन सकता है।

नूरुद्दीन गाव आया। उसकी टेट मे पाच सौ रुपये थे। अजीम मोनाई को धोखा देकर सेठ बन चुका था। अजीम से मुलाकात हुई। कलकत्ते के हाल-चाल बयान किए। नूरुद्दीन ने अपने आने का आशय बताया।

इस काम मे मुनाफे की कल्पना करके अजीम के मुह मे पानी भर आया। उसने नूरुद्दीन की ठोडी पकडी—"चार रुपै औरत पर तै करो उस्ताद। दो तुम्हारे, दो हमारे। हम रुपै के बजाय चावल देंगे, गाहक चावल देखकर फौरन जाल मे आयगा। और रुपै तुम चाहे लाख दिखाओ, कोई तुम्हे पूछेगा भी नही।"

नूरुद्दीन की समझ मे बात आ गई। उसने मजूर कर लिया।

नूरुद्दीन ने गाव मे खबर फैलाई कि कलकत्ते मे एक सेठ ने धरमशाला खोली है, जहा गरीब औरतो की परवरिश होती है। उन्हे खाना और पहनने को दिया जाता है, दीन-धरम के उपदेश दिए जाते है। नूरुद्दीन ने यह भी बतलाया कि जिसके घर की औरते धरमशाले मे भेजी जाती हैं, उसको

कलकत्ते के सेठ की तरफ से चावल भी मिलता है।

धरमशाला की हवा चली। आसपास के चार-पाच गावो तक मे 'धर्मशाला' की धूम मच गई। दो मुट्ठी चावल के लिए औरतें वेची जाने लगी। बुढ़ियो को धरमशाला मे दीन-धरम के उपदेश सुनने के लिए भरती नही किया जाता था। धरमशाला का रहस्य मालूम हो गया। पर औरतो की अस्मत जाए तो जाए—खाने को मिले। बहू-बेटियो को वेश्या बनने दो! आबरू जाती है तो जाने दो! पेट से बढकर दुनिया मे कोई चीज नही। वेचो! वेचो!!

नूरुद्दीन और अजीम का रोजगार चल निकला।

पहली बार नूरुद्दीन अपने साथ बारह औरतें लेकर कलकत्ता गया।

मोनाई से अजीम की यह बढोतरी न देखी गई। औरतो के इस नये धधे मे आमदनी अच्छी है। मोनाई ने जाच-पड़ताल की, हिसाब फैलाकर देखा, अजीम और नूरुद्दीन को सेर-भर चावल मे चार औरतें पडती हैं। चावल अगर अस्सी रुपये मन भी वेचा जाए तब भी औरतो के व्यापार मे कम से कम उसमे दुगना नफा है।

मोनाई को लालच सताने लगा। मगर मन फटकारता था। अपने गाव की, भले घर की बहू-बेटियो से कसब कराना बडा पाप है। मगर फिर मोनाई ने सोचा—"यो भी भूखी मर रही हैं विचारी! वैसे कम से कम खाने-पहनने को तो मिलेगा। वो सुखी होगे और चार पैसे मुझको भी मिल जाएगे। भगवान जी ने अगर इस नये व्योपार मे अच्छे पैसे बनवा दिए तो

पानी जैसा कर दिया। मुल न तो दूध का दरजा हीन किया और न पानी का। जोगी-जतियों के लिए धरम का मारग दिखाया और करम की महमा दिखाने के लिए खुद आप अरजुन के सारथी बन गए। धन्न हो प्रभुनाथ! बड़े दयालु हो।"

हुक्का छोड़कर हाथ जोड़े, मोनाई बोष्टम की दोनों आंखों से नीर बहने लगा। गद्‌गद होकर मोनाई भगवान जी की प्रार्थना करने लगा—"हे दीनानाथ! हमारे भी सारथी बन जाओ! इत्ती बेला यही महमा दिखाओ! मैं तुच्छ हू तो क्या भया, हू तो तुम्हारा भगत ही। परतच्छ दरसन देओ परभूनाथ! नाथ! अब ससार मे पाप की हद हुई गई है। अजीमा गहरी दगा दे गया साला! बेद-पुरानों मे झूठ थोड़े लिखा है कि कालिया नाग और मलेच्छ दोनों एक समान हैं। मैंने बड़ी गलती की कि अजीमा का बिश्वास किया। बड़े-बूढ़े कहते थे कि बेटा, मह्‌जिद से निमाज की अवाज भी सुनाई पड़ जाय तो चट से कानों मे उगली ठूस लो। इनका दीन-मजब उलटा है। इनके धरम का भरोसा ही नहीं है। ठीक कहते रहे बड़े लोग। हम पूरब में पूजा करते हैं, ये पच्छिम मे निमाज पढ़ते हैं। हमारे धरम मे तो भगवान जी का भगत बिचारा मेरा जैसा भोला-भाला होता है जो छल-कपट का नाम भी नहीं जानता, हर एक पर सीधे मन से बिसवास कर लेता है। मागता तो दस-पाच हजार की जमानत दे देके उसकी आढ़त खुलवाय देता। मैंने इसे बेटे की तरह प्यार किया, और अत मे या दगा दै गया! मलेच्छ अरे, भगवान जी ने चाहा तो मै भी चारों खाने गिराय दूगा। बेटा जी को भी मालूम नहीं है कि गुरु गुड़ गुरु सदा अपने पास जादा ही रखता है।"

मोनाई की छोटी-छोटी आंखें दर्प से चमक उठीं। उसने फिर हुक्का गुड़गुड़ाना शुरू किया।

दयाल, पुलिस, सरकारी अफसर या किसी कुलीन हिन्दू से मार खा जाने मे मोनाई अपनी शर्म नहीं समझता था। मगर अजीम एक तो मुसलमान, दूसरे गरीब मल्लाह का बेटा, तीसरे उसका नौकर और फिर हद हो

शिष्य भी था, अज़ीम से मार खाकर मोनाई को किसी करवट चैन नही मिल रहा था। अलावा इसके, अज़ीम को औरतो के व्यापार मे फलते-फूलते देखकर उसकी जलन और भी बढ गई थी। अज़ीम को परास्त करने के लिए मोनाई ने धर्म की शरण ली।

वह दयाल की शरण मे गया—"हिन्दू धरम डूब रहा है राजा बहादर! आपके राज मे मुसलमान लोग हमारे घर की बहू-बेटियो को फुसलाए लिए जा रहे है।"

गो-ब्राह्मण प्रतिपालक क्षत्रिय ज़मीदार का वशज तैश खा गया। मोनाई पानी चढाने लगा—"कलजुग मे गाववालो की तो मत मारी गई है। धरम-अधरम नही देखते, सबको अपने पेट की हाय पडी है। अज़ीमा और नूरद्दीन धरमसाला के नाम पर औरतें खरीद रहे हैं।"

मोनाई एक प्रस्ताव लेकर गया था। सरस्वतीपुर दयाल ज़मीदार के इलाके मे है। वहा गोरी पलटन की छावनी बन रही है। एक अनाथाला वही पर असथापित कर दी जाय। पलटन पास रहेगी तो किसीका हियाव नही पडेगा। औरतो की रच्छा होती रहेगी और हिन्दू धरम भी बच जाएगा। इस धरम-कारज के लिए मोनाई पाच सौ एक रुपये का दान देने को भी तैयार है। बस राजा बहादर पीठ पर हाथ धर दें तो बाकी इनन्ज़ाम मोनाई आप कर लेगा।

टेट से पाच सौ एक खोलकर, भगवद्भक्त मोनाई ने गो-ब्राह्मण प्रतिपालक, धर्मावतार, धर्ममूर्ति श्री दयाल चाद विश्वास के चरण कमलो मे सादर सविनय अर्पित करके प्रणाम किया। दयाल ज़मीदार ने हिन्दू धर्म की रक्षा के लिए मोनाई को आश्वासन दिया।

श्री सनातन धर्म अनाथालय के निमित्त मोनाई ने सात गावो मे फेरे लगाने शुरू किए। बडे शोर-शोर के साथ अपना काम शुरू किया। साथ ही साथ उसको इस दान का भी डर लगा रहता था कि घाव खाकर अज़ीमा कभी चुप नही बैठा रहेगा। बगाल मे मुस्लिम लीग का सुराज है, कोई अचरज नही जो कोई सरकारी दाव चल जाए, तब ? इसने छिप तौ—

पर अजीम और नूरुद्दीन की दूकानों पर निगाह रखना शुरू किया।

सोनाई इस वक्त चौमुखी लड़ रहा था। दयाल का साधना, 'अनाथालय' सँभालना, अजीम पर निगाह रखना—हर तरफ उसके आदमी तैनात थे। हर आदमी पर उसकी निगाह थी।

उसने दयाल जमींदार के लठैतों से नूरुद्दीन को औरतों के साथ गिरफ्तार कराया। खुद आड़ में रहा। नूरुद्दीन और अजीम की अच्छी तरह मरम्मत करके उन्हें छोड़ दिया गया। औरतें श्री सनातन धर्म अनाथालय में भेज दी गईं।

औरतों में हिन्दू भी थीं और मुसलमान भी। दयाल जमींदार के नाम पर सोनाई सभीको चावल बाँट रहा था। दो मुट्ठी चावल के लिए सभी अपने घरों की अस्मत खुशी से लुटा रहे थे। उन्हें अजीम की धरमशाला और सोनाई के अनाथालय का रहस्य अच्छी तरह से मालूम था, मगर उन्हें परवाह न थी।

अजीम और नूरुद्दीन अपने रोजगार में चोट खाकर इसलाम को खतरे में महसूस करने लगे। जमींदार के लठैतों के जोर पर सोनाई अपने नये रोजगार को जमाकर सनातन धर्म की जय बोल रहा था। अजीम और नूरुद्दीन की दाल नहीं गल पाती थी—"काफिर के बच्चे गरीबों पर जुल्म ढा रहे हैं। इन्हें अपने पैसे का घमंड है, ताकत का जोम है।" अजीम और नूरुद्दीन मन ही मन ताव खाने लगे—"हिन्दुओं से बदला न लिया तो शेरे-इसलाम नहीं।"

अजीम को गोरीपुर के नवाब साहब की याद आई। उनसे दयाल जमींदार की पुरानी लाग-डाट है। दोनों के इलाके पास-पास हैं। जब से दयाल ने शौकतगंज बनवाकर नवाब को नीचा दिखाया है, वह मन ही मन खार खाता है।

अजीम और नूरुद्दीन नवाब साहब के हुजूर में पहुँचे—'आपके रहते हुए मुसलमानों पर आँच आ जाए हुजूर, तब तो दुनिया में इसलाम का कहीं ठिकाना ही नहीं रहेगा। काफिर का बच्चा हमारी बहू-बेटियों [illegible]

कमव कर रहा है। अपने इलाके मे मुसलमानो को तबाह किए डाल रहा है।"

शेरे-इसलाम तैश खा गया। पुरानी अदावत फिर से जोर मार गई। हुक्म हुआ—"कलकत्ता जाकर पचास गुडो को ले आओ। भिडा दो उसके लठैनो मे। उनके यहा डाका डलवा दो। और अगर उसके शीशमहल मे आग लगवा सके तो तुम्हे दो हजार रुपया इनाम दूगा। वह हिन्दू कुत्ता बहुत दिनो से सर उठाकर हमारे सामने चल रहा है। मगर खयाल रहे, किसीको खबर न लगने पाए कि इनमे मेरा भी हाथ है।"

अज़ीम और नूरुद्दीन को सपने मे भी खयाल न था कि इतनी आसानी से काम बन जाएगा। पाच सौ रुपये गुडो पर खर्च करने के लिए नकद मिले। अजीम और नूरुद्दीन खुशी के मारे सातवे आसमान पर पहुच गए।

चादनी रात थी। अज़ीम और नूरुद्दीन नवाब साहब की कोठी से निकलकर अपने गाव की तरफ चले।

कोठी से कुछ फासले पर पेड की आड मे सोनाई बैठा था। अजीम और नूरुद्दीन उधर ही आ रहे थे। सोनाई खडा होकर जूते पहनते हुए खखारने लगा।

अज़ीम और नूरुद्दीन ठिठक गए सहम गए।

सोनाई उधर देखकर बोला—"कौन ? अरे अजीमा ! कहो बेटा, अच्छे तो हो ? अरे, ये कौन नूरुद्दीन है ? अरे भैया, बहुत दिनो मे दिखाई दिए।'

था। मुल भगवान जी जानते हैं, ये मैंने दुम्मनायगी के मतर मे नहीं कराया।"

सुनकर अज़ीम चिढ उठा, ज़रा जोश आया। ताने के साथ बोला—"तो क्या प्यार जताने के लिए कराया था ?"

चट से आसमान की तरफ आखें उठाकर मोनाई ने जवाब दिया—"भगवान जी जानते हैं, प्यार के कारन ही ये चाल चली।"

अपने कधे पर से मोनाई का हाथ झटककर अजीम मस्ती के साथ बोला—"प्यार तो तुम अपने सगे बेटे से नहीं करते, मुझसे क्या करोगे ? सुना नूरू, काका ने हमसे प्यार जताया है, हि ।"

मोनाई डपट पडा—"इत्ते बरस तुम्हे तोते की तरह से पढाया, मुल अकिल ज़रा भी नहीं आई। दूर की सूझती ही नहीं ?"

फिर नूरुद्दीन की तरफ देखकर कहने लगा—"नूरुद्दीन, तुम्हे जो अपनी चाल सुनाऊ तो कहोगे कि हा, काका दूर की कौडी लाते है। ये अभी क्या जाने व्योपार की चाले। ये तो गधा है। घर चल रहे हो ?"

कहकर मोनाई चलने लगा। नूरुद्दीन और अज़ीम भी चुपचाप चलने लगे। मोनाई इस वक्त उनपर छा गया था।

मोनाई धीरे-धीरे बोलता हुआ चलने लगा—"जब हम लौटकर घर आए तो गिन्नी ने तुम्हारा सब हाल बताया। सच मानना, मेरा कलेजा दुइ हाथ का हुइ गया। मैंने हम के तुम्हारी काकी से कहा कि लौंडा हुसियार हुइ चला है। बेटा, रुजगार का गुर यही है कि मौका पडे तो सगे बाप को भी न छोडे। मुल एक बात कहूं बेटा, अपने बचपने से तुम जरा चूक गए, नहीं तो और लम्बा दाव मारते।"

मोनाई हसा। फिर कहने लगा—"मैं तुम्हारी जगह होता तो जानते हो क्या करता ?"

अज़ीम और नूरुद्दीन दोनो मोनाई की ओर देखने लगे।

मोनाई बोला—"बेटा, तुमने दाव तो सीख लिया, मुल अभी गहराई नहीं आई। अरे पगले, काकी को पता भी न लगने देता कि चोर तू निराला

ले गया है। उन्हे धोखे मे ही रखता। पहले कुछ बोरे बेचकर आठ-दस हजार रुपे उनके हाथ मे धरता, और फिर उनसे कहता कि काकी, फलाने-फलाने गाव मे यूनन बोट वाले इसी भाव पर दुइ हजार बोरे और निकाल रहे है। काका के न होने से बडा भारी लुकसान हुइ रहा है। यह कहके जो एक ठडी सास और छोड देता तो बेटा, तेरी काकी अपने गहने उतार-कर तेरे आगे धर देती।"

मोनाई का जादू चढ गया। अजीम और नूरुद्दीन मोनाई की बातो के टोने मे बधे हुए चल रहे थे। अजीम मन ही मन अपनी गलती महसूस कर रहा था। मोनाई कहता गया—"अरे, औरतबानी, नफे का नाम सुनते ही पानी हुई जाती। वो आठ-दस हजार रुपे भी तुम्ही को दे देती, और ऊपर से अपने गहने तक उतार देती। मैं तुम्हारी जगह पर होता तो एक तीर मे दो सिकार करता। रुजगार मे सबर से काम ले और ठडे मगज से चाल सोचे। वो बैपारी क्या जो एक तीर से दुइ सिकार न कर सके।"

मोनाई काका के उपदेशो को ध्यान और श्रद्धा के साथ सुनने की आदत अजीम को सदा से रही है। मोनाई के प्रति श्रद्धा का भाव उत्पन्न होते ही अजीम का अपराधी मन आत्मग्लानि से पीडा पाने लगा। वह सिर झुकाकर चल रहा था। नूरुद्दीन और अजीम दोनो मत्रमुग्ध से चुप-चाप चले जा रहे थे।

मोनाई ने जरा नजर उठाकर दोनो की तरफ देखा। देखा, दोनो ही उसकी बातो को तलवार से काट चुके हैं। होठो की मुस्कराहट को दबाकर मोनाई ने आगे बात बढाई—"अब तुम्हारी दूसरी गलती तुम्हे बतावें ?"

अजीम खिसियाना-सा हो गया था। शर्म के मारे उसका सिर नहीं उठ रहा था। नूरद्दीन मोनाई की तरफ देखने लगा। मोनाई जरा हसकर नूरद्दीन से बोला—"इसीको कहते हैं लडक-बुद्धी! देखो, अब सिर नहीं उठ रहा इसका! अरे बेटा, अपनी एक चाल चलो तो दुस्मन की दो चालें सोच लो। तुम ये कैसे भूल गए कि मोनाई काका बैपारी आदमी है, मेरी तरफ से भी कोई चाल जरूर चलेगो। तुमने उधर तो ध्यान दिया

नही और नूर के साथ दूर की कौड़ी लपकने के लिए आगे मूदकर बढ़े। जैसे तुम सिड़ी, वैसे ये नूर सिड़ी। अक्किल गिरो रखके रुजगार करने चले थे साहब।"

दोनो का सिर झुक गया। नूरुद्दीन भी शिष्यो की श्रेणी मे आ गया।

मोनाई फिर जरा जोर से हसा। बोला—"जब मैंने ये देखा तो बडी जोर से हसी आई। उसके पहले, सच कह दू, मुझे तुमपर थोड़ा बहुत गुस्सा जरूर रहा। मुल जब देखा कि लौंडा बडी कच्ची चालें चल रहा है तो यकीन मानो, बडी दया आई। फिर ये खयाल मगज मे दौड़ा कि आधी विद्या मे ही फूलकर लडका नदानी कर रहा है। इसे जरा सिच्छा देनी चाहिए। नही तो आगे चलकर किसी बाहर वाले से करारी मात खाएगा, मेरा नाम डूब जाएगा। इसीलिए ये सब चाल खेलनी पडी।"

अपने शिकारो पर मोनाई ने फिर नजर डाली। बातो की गाडी और आगे बढी। मोनाई ने अब आखिरी वार किया—"तुम अपने मन मे सोचते होगे कि काका कोई चाल चल रहे है। बेटा, अगर मुझे तुम लोगो से चाल ही चलनी होती तो इस बखत तुम्हे यो टोक के न बुलाता। सुनसान रात, तुम दोनो जवान, मुझे अपना दुस्मन समझने वाले, जरा-सी देर मे मेरी गर्दन मरोडकर मेरी लहास फेंक देते तो कौन जानता? तुम क्या ये समझते हो कि मैं बिना सोचे-समझे ही तुम्हारे पीछे चला आया?"

अजीम और नूरुद्दीन दोनो चौंके। उन्हे एक नया डर पैदा हुआ। तभी मोनाई अजीम के कधे पर हाथ रखकर बडे प्यार के साथ बोला—"बेटा, मेरे मन मे कपट होता तो दूसरी चाल चलता। इस दम तुम्हारा पीछा करके तुमसे बातें करने मे मेरा बडा गहरा मतलब है। तू तो जानता ही है मैं सदा एक तीर से दुइ सिकार करता हू। दयाल जमीदार से मिलकर तुम्हे सिच्छा भी दे दी, और अपने-तुम्हारे फैदे का लिए एक चाल भी चल गया।"

अजीम और नूरुद्दीन की वाक्शक्ति लुप्त हो गई थी। आधा रास्ता तय हो गया, बोलने का काम सिर्फ मोनाई ही करता रहा।

नहसा मोनाई धीरे-धीरे बडे गम्भीर स्वर मे कहने लगा—"नवाब नाहब को हिन्दू-मुनलमान के झगडे के लिए उकसाया ?"

अजीम और नूरुद्दीन एकदम से सहम गए। अजीम की जबान लड-खडाकर आप ही आप खुल गई—"न न नही काका, झगडा "

बात काटकर मोनाई बोला—"अरे बेवकूफो, ठीक तो किया। डरते क्यो हो ? अरे, यही तो मैं चाहता था। हिन्दू-मुसलमान का झगडा डालो, उसीमे हमारा-तुम्हारा फँदा है।"

नरुद्दीन बडी नफाई दिखाते हुए बोला—"नही काका, ऐसी बात भला हम कर नकते है !"

मोनाई फौरन ही तानामेज़ लहजे मे कह उठा—"नही ! तुम लोग तो बस घास छील सकते हो—गधे कहीं के। अरे, मैं कहता हू कि नवाब नाहब और दयान के बीच मे हिन्दू-मुनलमान का झगडा डालो। ये लोग जब लडेगे तभी हम लोगो का फँदा होगा। जब तक ये बडे-बडे जमीदार और राजा लोग हमारी खोपडी पर सवार रहेगे तब तक हमे कुछ नही मिलेगा। क्यो भई नूरद्दीन, कुछ झूठ कहता हू मैं ?"

अजीम और नूरुद्दीन दोनो मिलकर भी मोनाई मे पार नही पा सकते। दोनो, खास तौर पर अजीम तो वेहद घवराया हुआ था। वह कुछ सोच ही नही पाता था। नूरुद्दीन अपने को सभालकर बोला—"बात तो चौकस है काका, वाकी ये नही समझ मे आता कि हिन्दू-मुसलमान का झगडा क्यो डाला जाए?"

मोनाई ने फौरन ही गम्भीर स्वर मे उत्तर दिया—"इसमे एक गहरी चाल है। पहले तो तुम यह समझो कि हिन्दू-मुसलमान का झगडा क्यो होता है? इसलिए न कि दोनो अपने-अपने धर्म को बडा समझते हैं। और जव छुटाई-वडाई का फैसला नही हुइ पाता तो दोनो अपनी ताकत अजमाते है। है कि नही? कहो, हा?"

नूरुद्दीन ने सिर हिलाकर कहा—"हा, ये तो सही है।"

"बस, तो इसका तातपरज ये भया कि लडाई धरम की नही होती, घमड की होती है। क्या समझे? अरे, धरम तो भगवान जी का मारग है, चाहे उन्हे खुदा जी कह लो, चाहे भगवान जी कह लो। उसमे कुछ भी फरक नही पडता। फरक तो छुटाई-वडाई का है, सो घमड के कारन है। अब तुम्ही लोग हो, क्यो गए नवाव साहव के पास? इसीलिए न कि तुम्हारा-उनका दीन मजव एक है और तुम्हे ये वात मालूम रही कि दयाल और नवाव साहव की आपस मे खटकती है। दयाल ने तुम्हे नीचा दिखाया, नवाव साहव की आड लेके तुम उन्हे नीचा दिखाना चाहते थे। कहो, आ गई घमड की वात कि नही?"

"लेकिन काका," नूरुद्दीन बोला—"हम इसलिए उनके यहा नही गए थे। हम तो "

वात काटकर मोनाई बोला—"वेटा दाई के आगे पेट छिपाना वेफजूल है।"

अजीम और नूरुद्दीन भी यही अनुभव कर रहे थे। एक क्षण के लिए रुककर मोनाई ने फिर वात का सूत्र उठाया—"और सच्ची पूछो तो वेटा, न तो तुम्हारा और नवाव साहव का धरम एक है, न मेरा और

दयाल जमीदार का। असली धरम तो हमारा-तुम्हारा एक है। हमारे लिए दयाल और नवाब दोनो ही ससुरे विधर्मी हैं। अरे, कलजुग मे धरम काहे का? स्वारथ का। और स्वारथ हमारा-तुम्हारा एक है। हमारा स्वारथ इसीमे है कि ये बड़े लोग आपस मे जूझे और हम मिलकर नफा उठाए। है कि नही? अब देखो, यो तो नवाब और जमीदार मे पुरानी अदावत है, मुल इस समै इन्हे लड़ाने के लिए कोई परतच्छ कारण नही रहा। तुम नवाब साहब के हिरदै मे धरम की आग सुलगा आए। चलो, हमारा काम बन गया। बाकी हम-तुम जो इस आग मे अपने घमड के कारन पड़े तो गेहू के साथ घुन की तरह हम भी पिस जाएगे। घमड, भैया, पेट भरे पर होना है। हम-तुम तो धन के भूखे हैं, काहे का घमड करेगे? और जो इसपर भी घमड करेंगे तो नासमझी मे अपने पैर पर आप कुल्हाड़ी मार लेगे। क्यो अजीमा, बोलो न, चुप क्यो हो?"

अजीम के लिए अब कोई मार्ग न था। सिर झुकाकर बोला—"मैं तुमसे बाहर थोड़ी हू, काका।"

मोनाई की बाछे खिली, अजीम की पीठ पर हाथ रखकर बोला—"ये तो मैं जानता हू, बेटा। क्या तय कर आए हो?"

अजीम का सिर अभी भी नही उठ रहा था, सिर झुकाए हुए ही उसने जवाब दिया—"दयाल की कोठी पर हमला होगा।"

"कब?"

"नूर कलकत्ते जाएगा, आदमी लाने।"

मोनाई बहुत गम्भीर होकर सारी बात पर गौर करने लगा—"हू, कुछ पैसे झटके?"

"पाच सौ!" अजीम कहना नही चाहता था, मगर जबान पर मोनाई का असर था।

मोनाई बोला—"ऊहू! हमला दयाल की हवेली पर नही, नरमुनी-पुर मे जहा मैंने औरतें रक्खी है, वहा होना चाहिए। पूछो क्यो?"

अजीम मोनाई के मुह की तरफ देखने लगा। उसकी झिझक मिट

गई थी।

मोनाई बोला—"अगर दयाल की हवेली पर हमला भया तब उन दोनों की तो ठन जाएगी, बाकी हमारे लिए एक तीर से दो शिकार न होंगे। सुनो औरतों के धंधे में हम तीनों का साझा रहेगा। अनाथाने में कुछ फायदा नहीं, पलटनिये ससुरे शराब पी के अपनी मनमानी करते हैं। मेरी चार औरतें मर चुकीं। ठेकेदार अपना कमीसन सिर चीरकर ले लेता है। औरतों की खिलाई-पिलाई का खर्चा अलग देना पड़ता है। मैं ये चाहता हूं कि नूरू कलकत्ते में ही सबको ठिकाने लगा आवे। उसीमें नफा है। इसलिए नूरू जिस दिन गुंडे ले के आवेगा, मैं ठेकेदार को कुछ ले-देकर मोटर का इंतजाम कर रखूंगा। जहां औरतें लादके रवाना कीं कि रास्ते में गुंडों से हल्ला मचवाय देंगे। क्या समझे ?"

अजीम ने सवाल किया—"ये तो ठीक है, मगर इसमें हिंदू-मुसलमान की बात कहां आई ?"

"आगे आती है !" मोनाई बोला—"सुनो, इसमें एक साथ कई चालें चलनी पड़ेंगी। नवाब साहब के रुपै से जो गुंडे लाओ तो उन्हें ये समझाना कि वे दयाल जमींदार के आदमी हैं। क्या समझे नूरू ?"

"क्यों काका ?" नूरुद्दीन ने समझने की गरज से सवाल पूछा।

"इसमें चाल ये है कि पलटनिये जब औरतें नहीं पाएंगे तो भड़केंगे। गुंडों को देख के समझेंगे, इन्होंने औरतें उड़ा दी हैं। गोरे पलटन का जो जर्नैल है, उसीको मैं बाद में ये पट्टी पढ़ाऊंगा कि छावनी के ठेकेदार ने दयाल के साथ मिलकर औरतें उड़ाई हैं। सबूत दूंगा कि ठेकेदार की मोटर ही औरतों को ले गई रही। इस तरह एक तो ठेकेदार का छावनी से पत्ता कटैगा, दूसरे जब गुंडे गिरफ्तार होंगे तो वे यही बतावैंगे कि हम दयाल जमींदार के आदमी हैं। इस तरह गोरे की गवाही दयाल के खिलाफ होगी। सरकार में दयाल जमींदार की बदनामी हुई जायगी। दयाल का पक्ष कमजोर होगा। इधर तो यों मारेगा, उधर दयाल को ये पट्टी पढ़ाऊंगा कि औरतें नवाब साहब ने उड़वाई हैं। आपके आसामी की औरतों का

मुसलमान बनाके वो आपने बदला ले रहे हैं। मैं कहूगा कि औरतें भूतो की मह्जिद मे छिपाई गई है। दयाल को गुस्सा दिला के उसके लठैत उधर भिजवाऊगा, क्या समझे ? और अजीमा नवाब साहब को भडकावे। ये कहेगा कि दयाल आज रात मह्जिद तुडवाने वाले हैं। उनके लठैत पहले ही मह्जिद मे छिपाए रखना। क्या समझे अजीमा ? मह्जिद पर दोनो पारटियो के लठैत खून-खराबा करेंगे, बात अपने-आप पुलुस और कोरट तक पहुचेगी। पलटन के जडैल भी दयाल के खिलाफ अपना अडर लिखेंगे दयाल दोनो तरफ से गच्चे मे आवेगा। क्या समझे ? दयाल के ऊपर जादा दबाव पडना चाहिए। काहे से कि हम लोग इसी गाव मे रहते हैं। उसके ऊपर इतनी आफत पडे कि उसका ध्यान किसी दूसरी बात की तरफ पडे ही नही। तभी हम लोग निसचित हुई के अपना रुजगार कर सकेंगे। बल्के मैं तो दयाल को यहा तक पट्टी पटाऊगा कि मुसलिम लीग का सुराज है, नवाब साहब को वहीं से मदद मिल रही है। कलकत्ते जाय के आप भी हिन्दू सभा का अदोलन कीजिए। अरे बेटा, दयाल अगर यहा रहा तो वह मुसलमान होने के कारन तुम लोगो पर सक करेगा। और हत्तियाचार करेगा। मैं तुम लोगो पर ज़रा भी आच नही आने देना चाहता। तुम लोग तो मेरे लडके के समान हो।'

अजीम और नूरुद्दीन पर मोनाई की बातो का जबरदस्त प्रभाव पडा। अजीम ने तड़ाक नाव से फौरन ही मोनाई के पैर पकड लिए। आखो मे आसू भरकर बोला—'काका, मैंने तुम्हारे साथ बडी नालायकी की है। माफ करना पडी है।'

जरूर कहूगा कि तुम्हारे जैसा धर्मात्मा इस दुनिया मे होना बडा कठिन है। तुमको गलत समझके हमने बडी भूल की।"

फौरन अपने कान पकडकर आकाश की ओर देखते हुए सोनाई बोला—"नही बेटा, ऐसी बात मत कहो। मेरा घमड बढेगा। जो कुछ करते है, सब भगवान जी करते है। मेरी क्या सक्ती है। अरे, भगवान जी ने चाहा तो ये दयाल और नवाब, और ये जित्ते बडे-बडे जमीदार, राजे-महाराजे है—ये सब एक दिन मिट्टी मे मिल जाएगे। और इनका मिट्टी मे मिल जाना ही अच्छा है। ये बडे आदमी सब राच्छस हैं, राच्छस। इनके अत्तियाचारो से पिरथी तिराह-तिराह पुकार रही है, बेटा! देख लो, लडाइया हुए रही हैं। बम, तोपे और मारकाट मच रही है। हमारे इन सुग्गा जैसे गावो की आज ये दसा हुइ गई है। बस, अब पाप की हद हुइ गई है। इनका नास करने के लिए भगवान जी जरूर अवतार धारन करेगे। गीता जी मे भगवान जी ने कहा है कि 'परतराना साधू नाम और विनासा होवेगा दुस्ट-नाम?' सो जरूर होवेगा, बेटा। तुम्हारे कुरान जी मे जरूर यही बात लिखी होगी, क्योकि बेटा, धरम-मजब तो सब भगवान जी के बोल हैं, सबमे एक ही बात लिखी है। अब तो हम गरीबो का सुराज होवेगा, क्योकि गरीब ही भगवान जी के सच्चे भगत होते है। मैं तो, बेटा भगवान जी के उपदेस पर चलता हू। तुम लोग मेरे प्यारे हो, ये लोग मेरे दुस्मन हैं। इनका सहार करूगा तुम्हारा उद्धार करूगा। अब ये सब बाते जो भगवान जी की दया से बैठ गईं तो ठेकेदार, दयाल और नवाब उलट जावगे। फिर ठेका भी मैं ही लूगा। क्या समझे? ठेकेदारी, दुकानदारी और ये औरतो का काम? ये औरतो का काम भी बडे धरम का है, तुम! अन्न से बढकर कोई धरम नहीं। इज्जत-आबरू सब इसके पीछे है। और बेसियाए जो पापिन होती तो भगवान जी इन्हे बनाते क्यो? पेट भरने के लिए भगवान जी ने ये सब करम बनाए है। कोई करम करो, मुख भगवान जी का नाम लेते रहो, फिर कोई पाप नहीं है। क्या समझे? जब मैन गुरु जी से दीच्छा ली तब ये ग्यान की गूढ बातें समझ मे आईं। इस लीजिए बेटा, मैं सब

घघा फैलाके अपना करम करता हू और आगे भी कुछ दिनो तक करूगा। तुम सब लोग हुसियार हो। जहा तुम लोगो ने मिलकर काम-काज सभाल लिया तो न्याडा और उसकी मा को अजीमा के हाथो मे सुपुर्द करके फिर मैं सन्यास लै लूगा। क्या समझे ?"

अजीम खुशामद करता हुआ बोला—"नही काका, अभी तुम्हारी कुछ उमिर थोडी हुई है।'

"नही बेटा, फिर तो मैं सन्यास लै लूगा। करम से घरम मे जाऊगा। कुछ कह लो, ये करम का मारग है बडा कठिन। बडे मायामोह करने पडते है इसमे। (आह भरकर) भगवान जी, तुम्ही हो, तुम्ही हो!"

हुच्च से एक डकार आई। भक्तिभाव ने स्थूल रूप धारण कर लिया। पेट पर हाथ फेरते हुए मोनाई बोला—"ससुर खट्टी डकारें आय रही हैं। तुम्हारी काकी ने मीठा भात और लूची बनाई थी आज। जबरजस्ती करके जादा खिलाय दिया। भगवान जी, भगवान जी!"

मोहनपुर गाव की सीमा निकट आ गई थी। तीनो अपनी एक बहुत बडी उलझन को सुलझाकर हल्के हो चुके थे, और अब किसी नई बात की खोज मे थे। चादनी रात थी, इसपर ध्यान गया। अपना गाव आ गया था, इसपर ध्यान गया। फसल तैयार हो चली थी, इसपर भी ध्यान गया।

अजीम बोला—"फसल अच्छी रही है, काका। बाकी कोई काटने-वाला नही इस साल।"

दस कदम आगे रास्ते मे पाच-छ कंकाल पडे थे। जानवर मास चाट चुके थे। मोनाई उन्हे देखकर बोला—"फसल काटनेवाले तो ये पडे हैं, भैया।"

मोनाई ने बहुत गभीर होकर कहा था। तीनो मौन हो गए। वे ठठ-रियो के करीब आ पहुचे थे। चमकते हुए दातो की पक्तिया, आखो के गड्ढे, पसलियो के पिंजरे, हाथ-पैरो की हड्डिया—मनुष्य का अप्रत्यक्ष रूप प्रत्यक्ष देखकर तीनो के पैर ठिठक गए। उन अस्थि-पजरो की आड मे सत्य

ने मानो भागते हुए चोरो को पकड लिया। वे सहम गए। यो तो नई बात नही, आखे अरसे मे ये ठठरिया देखने की अभ्यस्त हो गई है, जगह-जगह दिखाई पड जाती है। जब तक लाशे जलाने-दफनाने की शक्ति रही, लोगो ने उनकी सद्गति कर दी। लेकिन अब तो लोगो से अपने प्राणो का बोझ ही नही उठाया जा सकता, फिर लाशे कौन उठाए!

गाव मे जगह-जगह ठठरिया बिखरी पडी है। हड्डियो के टुकडे और सिरो की गेद कुत्तो का मनोरजन बन गए हैं। टूटे, उजडे हुए मिट्टी के घर खडी फसलें और ठठरियो की सख्या मे मोहनपुर का वैभव निहित था। सैकडो तपस्वियो की जीवन-ज्वाला मे तपी हुई भूमि को धुधली चादनी की शीतलता और प्रकाश से शान्ति मिल रही थी। धुधली चादनी के प्रकाश मे ठठरिया रहस्यमयी-सी लगती थी।

तीनो देखते रहे, पहले सोनाई बोला—"फसलें खडी करनेवाले तो [illegible] पडे हैं भैया, फिर काटने कौन आएगा? एक दिन ये भी हमारी तुम्हारी तरह थे। इनके साथ हमने हाट-रुजगार किया है, हसे बोले, उठे बैठे हैं। इनके साथ लडाई झगडा भी किया है, होली-दीवाली और ईद भी मनाई है। आज पहचान मे भी नही आते कि कौन-कौन है? भगवान जी, इन लोगन ऐसा कौन-सा पाप किया रहा जो ऐसी मौत पाई? और हम लोगन कौन-सा पाप किया रहा जो ये दिन देखना पडा।"

सोनाई की आखो मे आसू छलछला उठे।

अजीम बच्चो की तरह अपने सामने के दृश्य मे खो गया था।

नूरुद्दीन को अपनी बूढी मा की याद आ रही थी, जिसे उसने भूख की जोम मे गला घोटकर मार डाला था, कभी मुनीर की याद आ रही थी। मुनीर की बीवी की याद आ रही थी, जिसे उसने पीट-पीटकर [illegible] बनाया था। उसे मुनीर की मासूम बच्चियो की याद आ रही थी। [illegible] मे उसने चाद के [illegible] मे जलाए जाने का हाल सुना था, [illegible] की खबर सुनी थी। मुजस्सिम गुनाह बनकर बेशर्मी [illegible] महसूस कर रहा था। उसे अपनो की याद आ रही थी।

अपनी कोमल भावनाओ पर सयम करते हुए मोनाई विचारक बना। बोला—"खरी जिन्दगी तो इन मरनेवालो की रही वेटा। ये सदा दुनिया के काम आए। और मरने पर भी काम आ रहे है। हमे सिच्छा दे रहे हैं—इन माटी का क्या मोह, मूरख ? हस अकेला जाई बावा, माटी ससरी को कोई पहचानेगा भी नही। वस करम किया रह जावेगा। करम कर प्रानी, अपना काम किए जा।"

अजीम और नूरुद्दीन दोनो चुपचाप खडे थे। एक क्षण रुककर मोनाई बोला—"एक बार कलकत्ते के इस्पताल मे गया था मैं। वहा ऐसे ढाचे देखे थे हमने। डागदरी के लडके इससे पढते हैं।"

नूरुद्दीन—कलकत्ते का अनुभवी—फौरन बोल उठा—"अरे, मिडकल कालिज मे सारी पढाई इसीपर होती है। मैंने अपनी आखो से देखा है। और मसमरीजम—जादू वालो की दूकानो मे मैंने बहुत-से देखे हैं। इन्हे देखके मुझे डर नही लगता, काका।"

अजीम भी फौरन अकडकर बोला—"डर-वर क्या, मैं तो भूतो की महजिद मे रात-भर सोया हू। मुझे इनसे जरा भी डर नही लगता।"

मोनाई शान्त स्वर मे कहने लगा—"इनसे काहे का डरना वेटा ? ये तो जिन्दगी-भर आप ही दूसरो से डरते रहे। डरते-डरते मर गए विचारे। मेरी ये इच्छा हो रही है अजीमा, कि इन विचारो की सद्गति करा दी जाय। जब तक जिए, दूसरो के काम आए, और मर जाने पर भी दूसरो के काम आवे, यही मैं चाहता हू। न जाने कित्ते लडके इनसे सिच्छा पाएगे, न जाने कित्ते-कित्ते वसीकरन मत्र इनपर सिद्ध किए जाएगे। पुन्न का पुन्न है। तुम कलकत्ते तो जा ही रहे हो वेटा, भाव पूछने आना इनका। क्या जाने ?"

"अरे भाई, ये काका की खोपडी है। ये जमाने-भर के तजरबेकार की निगाहे हैं, जो मिट्टी मे भी सोना ढूढ लेती हैं। मैं कल ही कलकत्ते जाऊगा काका। ये तुमने बडी दूर की सोची है। मगर ले कैसे जाएगे, काका ?"

मोनाई बोला—"ये फिकर तुम्हारी नही, हमारी है। हम कर लेगे इसका इतरजाम। और सुनो बेटा ! आओ, चलते आओ। मैं ये कह रहा था नूरू, कि अब कुछ साझे-सौदे की बात भी हुइ जाय। रुजगार-बैपार मे हिसाब कौडी का और बकसीस लाख की। क्या समझे ?"

नूरुद्दीन जरा कुछ लापरवाही दिखाने का स्वाग करते हुए नीम रजामदी से सिर हिलाकर बोला—"हा, ये तो एक तरह से ठीक है, काका ! मगर "

इसकी तरफ ध्यान न देते हुए मोनाई कहने लगा—"नवाब साहब से जो पान सौ की रकम तुम्हे गुडो के लिए मिली है, उसमे तुम जो बना लो, वह तुम्हारा है। उसमे अज़ीमा का हिस्सा नही रहेगा।"

मोनाई मूछ खुजलाने के बहाने जरा रुका और तिरछी नजर से अज़ीम को देखा। अज़ीम चुप रहा। मोनाई ने आगे बात बढाई—"यही नही आगे भी जो तुमको हज़ार पान सौ मिल जाए, सो भी तुम्हारा।"

नूरुद्दीन जरा बनकर बात काटते हुए बोला—"नही काका, अजीमा का भी हक है।"

मोनाई तड से बोल उठा—"देखो बेटा, बुरा न मानना नूरू ! अजीमा का क्या हक है और क्या नही, इसका न्याव हमारे सामने करने जोग तुम नही हो। तुम अजीमा के दोस्त हो, इसलिए मेरा धरम है कि तुम्हारा भी भला चेतू। बाकी देखो, बुरा मानने की बात नही है। अजीमा [illegible] और हक की बात जो मैं सोचूगा, वो दूसरा कोई नही सोच सकता। समझे ? अजीमा मेरे दोस्त का बेटा, मेरा सागिर्द है। भगवान जी जानता है [illegible] और ज्यादा को मैंने कभी अलग करके नही माना। इसलिए मैं जो कहता हू वह सुनो। नवाब साहब के पैसे मे अजीमा को मैं कोई हक नही देता। औरतो के मामले मे छ-छ आने तुम दोनो के, चार आने मेरे। [illegible]-

रियो के मामले भी यही फैसला रहेगा। ठठरियो मे जो मेरी चवन्नी रहेगी, उसमे से एक आना मैं अजीमा को दूगा, एक आना पुन्न के खाते मे और दो आने मेरे। क्या समझे ?"

"ठीक है काका। हमको खुसी है।' नूरुद्दीन सतुष्ट होकर बोला।

मोनाई फिर कहने लगा—"अच्छा, अब रही दूकान, सो उसमे अजीमा की चार आने की पत्ती रहेगी। और छावनी का ठेका जो लूगा, उसमे दो आने तुम्हारे, चार आने अजीमा के और दस आने मेरे। देखो भाई, मैं कुछ अन्याव तो नही कर रहा हू ? तुम्हे कुछ सक-सुभा होए तो अभी मेरे मुह पर ही कह दो। मैं बुरा नही मानूगा। बाकी पेट मे न रखना। क्या समझे नूरू ?"

नूरुद्दीन बाछे खिलाता हुआ, हाथ जोडकर बोला—"नही काका, अल्ला कसम, मैं तो बहुत खुश हू। तुम्हारे फैसले मे कभी गैर-इसाफी नही हो सकती। सच कहता हू अजीमा, आज से मैं तो काका का गुलाम हो गया हू, अपनी कसम !

"और अजीमा !" मोनाई बोला—"जो हुइ गया उसे भूल जाओ। भगवान जी जानते है, मेरे मन मे तुम्हारी तरफ से जरा भी मैल नही है।'

मोनाई का घर दिखाई पडने लगा।

अजीम बेहद शर्मिदा हो रहा था। बडी दीनतापूर्वक सिर झुकाकर बोला—"मेरे मन मे अब कुछ नही है काका। उस दम न जाने मेरे सिर पर कौन-सा भूत सवार हो गया था। अल्लाह गवाह है, मेरी रूह बडी तकलीफ पा रही है इस दम।'

'तू तो सिड़ी है।' मोनाई ने हसकर अजीम के गाल पर एक हल्की-सी चपत लगा दी। वह अपने घर के दरवाजे के सामने था। कहने लगा—'चलो आओ अपनी काकी से मिलने चलो। नूरुद्दीन, बुरा न मानना बेटा इस बखत तो मैं अजीमा को अपने साथ लिए जा रहा हू। बहुत दिनों बाद—तुम तो समझदार ही हो बेटा।"

'हा, हा, काका, कुछ नही है। अच्छा तो मैं चलता हू। सबेरे मिलूगा।"

"अरे भाई, ये काका की खोपडी है। ये जमाने-भर के तजरबेकार की निगाहे हैं, जो मिट्टी मे भी सोना ढूढ लेती है। मैं कल ही कलकत्ते जाऊगा काका। ये तुमने वडी दूर की सोची है। मगर ले कैसे जाएगे, काका ?"

मोनाई बोला—"ये फिकर तुम्हारी नही, हमारी है। हम कर लेंगे इसका इतरज़ाम। और सुनो वेटा! आओ, चलते आओ। मैं ये कह रहा था नूरू, कि अव कुछ साझे-सौदे की वात भी हुइ जाय। रुज़गार-वैपार मे हिसाव कौडी का और वकसीस लाख की। क्या समझे ?"

नूरुद्दीन ज़रा कुछ लापरवाही दिखाने का स्वाग करते हुए नीम रज़ा-मदी से सिर हिलाकर वोला—"हा, ये तो एक तरह से ठीक है, काका! मगर "

इसकी तरफ ध्यान न देते हुए मोनाई कहने लगा—"नवाव साहव से जो पान सौ की रकम तुम्हे गुडो के लिए मिली है, उसमे तुम जो वचा लो, वह तुम्हारा है। उसमे अज़ीमा का हिस्सा नही रहेगा।"

मोनाई मूछ खुजलाने के वहाने ज़रा रुका और तिरछी नज़र से अज़ीम को देखा। अज़ीम चुप रहा। मोनाई ने आगे वात वढाई—"यही नहीं, आगे भी जो तुमको हज़ार पान सौ मिल जाए, सो भी तुम्हारा।"

नूरुद्दीन ज़रा वनकर वात काटते हुए बोला—"नही काका, अजीमा का भी हक है।"

मोनाई तड से वोल उठा—"देखो वेटा, बुरा न मानना नूरू! अज़ीमा का क्या हक है और क्या नही, इसका न्याव हमारे सामने करने जोग तुम नही हो। तुम अज़ीमा के दोस्त हो, इसलिए मेरा धरम है कि तुम्हारा भी भला चेतू। वाकी देखो, बुरा मानने की वात नही है। अज़ीमा के भले और हक की वात जो मैं सोचूगा, वो दूसरा कोई नही सोच सकता। क्यासमझे ? अज़ीमा मेरे दोस्त का वेटा, मेरा सागिरद है। भगवान जी जानते है इसे और न्याडा को मैंने कभी अलग करके नही माना। इसलिए मैं जो कहता हू वह सुनो। नवाव साहव के पैसे मे अजीमा को मैं कोई हक नही देता। औरतो के मामले मे छ-छ आने तुम दोनो के, चार आने मेरे। इन ठठ-

रियो के मामले भी यही फैसला रहेगा। ठठरियो मे जो मेरी चवन्नी रहेगी, उसमे से एक आना मैं अजीमा को दूगा, एक आना पुन्न के खाते मे और दो आने मेरे। क्या समझे ?"

"ठीक है काका। हमको खुसी है।' नूरुद्दीन सतुष्ट होकर बोला।

मोनाई फिर कहने लगा—"अच्छा, अव रही दूकान, सो उसमे अजीमा की चार आने की पत्ती रहेगी। और छावनी का ठेका जो लूगा, उसमे दो आने तुम्हारे, चार आने अजीमा के और दस आने मेरे। देखो भाई, मैं कुछ अन्याव तो नही कर रहा हू ? तुम्हे कुछ सक-सुभा होए तो अभी मेरे मुह पर ही कह दो। मैं बुरा नही मानूगा। वाकी पेट मे न रखना। क्या समझे नूरू ?"

नूरुद्दीन वाछें खिलाता हुआ, हाथ जोडकर वोला—"नही काका, अल्ला कसम, मैं तो वहुत खुश हू। तुम्हारे फैसले मे कभी गैर-इसाफी नही हो सकती। सच कहता हू अजीमा, आज से मैं तो काका का गुलाम हो गया हू, अपनी कसम !

"और अजीमा !" मोनाई वोला—"जो हुइ गया उसे भूल जाओ। भगवान जी जानते है, मेरे मन मे तुम्हारी तरफ से जरा भी मैल नही है।'

मोनाई का घर दिखाई पड़ने लगा।

अजीम वेहद शर्मिंदा हो रहा था। वडी दीनतापूर्वक सिर झुकाकर वोला—"मेरे मन मे अव कुछ नही है काका। उस दम न जाने मेरे सिर पर कौन-सा भूत सवार हो गया था। अल्लाह गवाह है, मेरी रूह वडी तकलीफ पा रही है इस दम।'

तू तो निरा है।' मोनाई ने हसकर अजीम के गाल पर एक हल्की-सी चपत लगा दी। वह अपने घर के दरवाजे के सामने था। कहने लगा—'चले आओ, अपनी भाभी से मिलने चलो। नूरुद्दीन, बुरा न मानना बेटा इस वखत तो मैं अजीमा को अपने साथ लिए जा रहा हू। वहुत दिनों बाद—तुम तो समझदार ही हो बेटा !"

'हा, हा, काका, ठीक ही है। अच्छा तो मैं चलता हू। सवेरे मिलूगा।"

नूरुद्दीन बोला ।

"अच्छी बात है, सबेरे ज़रूर आना । बस, फौरन से पेश्तर अब काम पर जुट जाना है । क्या समझे ? अच्छा बेटा, जीते रहो, भगवान जी तुम्हे बनाए रखे" कहकर मोनाई अपने घर की कुडी खटखटाने लगा ।

मोनाई का प्रेमपात्र बनकर अज़ीम ज़रा बडप्पन का भाव लेकर नूरुद्दीन से बोला— सबेरे मिलूगा, नूरू । अच्छा, सलाम भाई ।"

मोनाई की पत्नी ने दरवाज़ा खोला । अज़ीम को पति के साथ देखकर जरा चौंकी । अज़ीम के प्रति उसकी घृणा चेहरे पर झलक गई । उसके ही कारण बूढे पति की बडी लाडली पत्नी को पति के हाथो मार खानी पडी थी और उसे तीस हज़ार रुपयो का गम सहना पडा था ।

काकी से तीस हजार रुपये ले जाने के बाद अज़ीम आज पहली बार सामने आया था । उसकी आखें इस वक्त झुक रही थी ।

मोनाई ने परिस्थिति को दोनो तरफ से सभाल लिया । अज़ीम के प्रति उसकी काकी के प्रेम का बखान करना शुरू किया । बहुत याद करती रही है । काकी के हाथ का मीठा भात खाने का इसरार किया । अज़ीम की नादानी कोई बडा गुनाह नही, बच्चे कर ही जाया करते है । मरने के पहले वह अज़ीम को कुछ न कुछ अवश्य ही दे जाता, सो उसका हक था । फिर अज़ीम को बतलाया कि वह दयाल को मुसीबत मे डालने के बाद छेदासिह को मिलाकर उसके गोदाम मे चोरी करवाने वाला है । उसमे भी अज़ीम का साझा रहेगा । चोरी करके रातोरात नावें लदवानी होगी ।

उसने यह भी बतलाया कि चोरी पाप नही है । दयाल की डाकेज़नी का जवाब है । अज़ीम को आगाह किया कि नूरुद्दीन को इन सब बातो की हवा भी न पहुचने पाए । इसके बाद मोनाई ने अज़ीम और नूरुद्दीन की दोस्ती को भी नापसद किया—"उसका-तुम्हारा कौन साथ ? वह उचक्का है, तुम सरीफ हो, बैपारी हो । काम निकाल लेना दूसरी बात है, मुदा लफगो का साथ करने से बैपारी की साख उठ जाती है । क्या समझे ।"

अज़ीम को उसने फिर से शीशे मे उतार लिया । नया उत्साह देकर

उसे विदा किया। मोनाई की पत्नी को अज़ीम पर विश्वास नही रहा था। उनके प्रति वह अपना क्रोध नही मिटा सकती।

मोनाई ने समझाया—"तू तो निरी पगली है। अरे, जो इस दम मिलना नहीं तो मैं ठडा पड जाता। ये लोग नवाव साहव के पैसे पर गुडागिरी करानेवाले रहे। हिन्दू-मुसलमान वाली चालें मेरे साथ भी चल रहे थे। दयाल का क्या है, वडा आदमी है, मगर मैं तो भिखारी हो जाता। अव इनको दम-पट्टी दे के साघ लिया है। और वो चाल चली है कि सदा के लिए खटका ही मिट जायगा। दयाल ने जो इत्ते-इत्ते हत्तियाचार मेरे ऊपर किए हैं, सो अव वह उसकी सज़ा पा जागगा। जव वो फस जायगा, तव नूरू और अज़ीमा को भी अलग-अलग फास के मिट्टी मे मिला दूगा। जो नुकसान सहा है उसे व्याज समेत वसूल कर लूगा। भगवान जी सदा सहाय रहे, कलकत्ते मे महल चुनवाऊगा। क्या समझती हो तुम! और तुम्हे तो गहनो से लाद दूगा, मेरी लाडो। मोटर मे विठाय के कलकत्ते की सैर कराऊगा तुम्हे। ज़रा इधर एक नज़र देख लो मेरी तरफ। ऐ, तुम्हे मेरी कसम!"

बूढे मोनाई की तीसरी पत्नी कनखियो से उसकी तरफ देखकर मुस्करा दी।

तीसरी पत्नी का कौतूहल वडे-वडे सवाल करता था, जिसके आधार पर मोनाई के नये-नये सपने वनते थे—"वस गाव मे यह आखिरी वाज़ी जीत लेन के वाद गाव का काला मुह करके कलकत्ते चला जाऊगा। वहीं व्यापार फैलेगा। हम तुम सेठ-सेठानी वनेंगे। नौकर चाकर रहेंगे, मोटर गाडी, कलकत्ते मे वडे-वडे कोठे गाटे जाएगे भगवान जी ने चाहा तो एक रोज कलकत्ते के वडे-वडे धन्ना-सेठो मे अपनी नाक पुजवाय लेऊगा। तुम [illegible] मेरी रानी! अरे, तुम्हे तो मैं सोने मे मढवाय के अपनी [illegible] मे बैठाय दूगा मेरी मैना!"

[illegible] गाव की [illegible] पिन्ना मरभुखो, मुर्दो के इस गाव मे सव [illegible] मोनाई के आगन मे खिलखिला रही थी।

बाहर, चारो दिशाओ मे कुत्तो के भौंकने की और सियारो की मनहूस आवाजें आ रही थी। कही से हिस्टीरिया मे चीखते हुए किसी इसान का दर्द रात के सन्नाटे को चीरता हुआ हवा मे कपकपी पैदा कर देता था। वर्ना यो मुर्दों की बस्ती मे तनखसोट खूखार जानवर ही अपनी आवाज कर रहे थे।

मौत की आखिरी घडियो मे, जब कि इन्सान शाति से दम तोडना चाहता है, कुत्ते और सियार उसे इस तरह मरने की मुहलत नही देते। जान निकलने के पहले ही कुत्तो के पैने दात शरीर की चीड-फाड शुरू कर देते हैं। दम के दम मे आदमी लाश, और लाश से ठठरी मे बदल जाता है।

बेनी कापते और डगमगाते पैरो से चला आ रहा था। उसके हाथ मे एक गडासा है। उसकी नजर एक लाश को खाते हुए कुत्तो के झुड पर पडती है। कुत्तो को इस तरह पेट भरते हुए देखकर वह बर्दाश्त नही कर सकता। उसे कुत्तो पर गुस्सा आया। घर जाते-जाते वह लौट पडा। न तो कमजोर पैर काबू मे थे और न दिमाग ही, रूहानी जोश से उसके पैरों मे आधिया और भूचाल बध गए थे। गडासा लिए हुए बेनी कुत्तो के मजमे पर झपटा। भरपूर हाथ पडा। एक का सिर साफ कट गया, दो-तीन जख्मी हुए और बाकी तमाम कुत्ते चिल्लाते हुए भाग गए।

अरसे से कुत्तो को इन्सान को मारने की आदत पड गई थी, उनसे मार खाने की नही। कुत्ते फिर झपटे। एक की गर्दन पर पूरा वार बैठा, पर बेनी अपने ही जोम मे मुह के बल लाश पर गिरा। किसी आदमी की अधखाई लाश थी। होठो पर कच्चे मास के एक लोथडे ने बेनी को नया जायका महसूस कराया। वह अभी ठीक तरह से इस नये अनुभव को पहचान भी नही पाया था कि कुत्तो ने उसकी टाग पर हमला बोल दिया। बेनी बडी जोर से चीख उठा। उसकी चीख मे जो शक्ति अपना परिचय दे रही थी उसीने उसे उठने का साहस दिया। दोनों हाथ टेककर उसने अपने को उठाने की कोशिश की। एक हाथ उस अधखाई लाश मे अन्दर तक घुस गया। हाथो मे छीछडे-छीछडे लग गए, लेकिन बेनी को इसकी

खबर न थी, कोई परवाह न थी। गडासा उठाकर उसने पीछे उलटकर फेंका। कुत्ते भागे। वेनी लडखडाता हुआ उठा। उसकी आखो से खून बरस रहा था। उसका हाथ खून और छीछडो से सना हुआ था। उसके होठो पर आदमी का खून लिपटा हुआ था।

वेनी किसी तरह अपने घर की तरफ चला।

वेनी का घर अभी भी बाकी था। सर पर छप्पर न था, न सही, मगर चार दीवारें तो बाकी थी। घर के दरवाजे और बास-बल्लिया निकालकर वह बहुत पहले बेच चुका था, फिर भी उस घर के लिए उसे प्यार था। लोगो ने घरो मे रहना छोड दिया था, मगर वेनी ने न छोडा। अपनी नव विवाहिता पत्नी के साथ वह वहीं रहा।

अकाल शुरू होने के दो महीने पहले वेनी का विवाह हुआ था। वह अपनी पत्नी के सौंदर्य पर मुग्ध था। उसकी पत्नी भी जी-जान से उसे चाहती थी। गाव-भर मे वेनी बसी बजाने मे अपना सानी नही रखता था। नवोढा को इसपर अभिमान था। व्याह की मेंहदी का रग भी फीका नही पडा था कि दुनिया का रग बदल गया। गाव उजडने लगा। मृत्यु की विभीषिका सारे गाव को निगलने लगी। शरीर की शक्ति क्रमश क्षीण होने लगी। एक-दूसरे के प्रति अपने प्रगाढ प्रेम से अकाल-पीडित नव-दम्पती ने जीवन के लिए एक नई प्रेरणा प्राप्त की। ससार से अपना सम्बन्ध विच्छेद कर वे दोनो सबसे दूर अपने घर मे ही रहने लगे। एक क्षण के लिए भी एक-दूसरे से अलग न होते थे। लेकिन आज चार रोज से वेनी की पत्नी का बोल बन्द हो गया था। हड्डियो के ढाचे मे एक धुकधुकी-सी चला करती है जिसे देख-देखकर वेनी की व्यग्रता बढती जाती है। कल तो उसकी पत्नी ने आखें भी नही खोली। पत्नी के विछोह की कल्पना वेनी को जीने नही देती। कल से वह घर से भागा-भागा फिर रहा है। घर आता है तो पत्नी की मृत्यु को निकट आते देखकर भय से पागल होने लगता है। बाहर की दुनिया उसे और भी डरावनी नजर आने लगी है।

इस वक्त वह परेशानी की हालत मे घर से वाहर चला आया था। उसके हाथ-पैरो मे जरा भी दम नही था। मगर एक दर्द, जो भूख की पीडा से भी ज्यादा तेज़ और तीखा था, उसे अपनी शक्ति देकर चला रहा था। वेहोशी की हालत मे लडखडाकर चलते हुए शरावी की तरह वह निरुद्देश्य-सा वहका चला जा रहा था। मोनाई का मदिर सामने था। मदिर के पास ही एक ताज़ी कटी हुई गाय पडी थी। खून से धरती लाल थी। सिर अलग, धड अलग। जरा दूर, मदिर की दीवार के नीचे ही एक गडासा पडा था। खून देखकर वहके हुए वेनी की निगाहे जमी। वह ज़रा देर तक खडा-खडा देखता रहा। पैर इतनी देर तक खडे रहने के कारण जवाब देने लगे। वेनी का ध्यान फिर वटा। उसकी घर चलने की इच्छा हुई। चलते-चलते उसने यो ही गडासा उठा लिया था और उसमे लगे हुए खून पर अपनी आखें जमाकर वह चलने लगा था, तभी उसकी कुत्तो से मुठभेड हुई।

वेनी घर पहुचा। उसकी पत्नी की सास अभी भी मास की झिल्ली मे धडकती हुई दिखाई दे रही थी। वेनी उसके सिरहाने वैठ गया। वह पथरा गया था। चुपचाप वैठा-वैठा अपनी पत्नी की तरफ देखता रहा। दिमाग वडी तेज़ी से दौड रहा था—"यह मर जाएगी, मुझसे छूट जाएगी, सदा के लिए विछड जाएगी, फिर कुत्ते खा जाएगे। नही, मैं इसे ऐसी जगह छिपाकर रखूगा जहा कुत्ते भी न देख पाएगे। मैं इसे अपने कलेजे मे छिपाकर रखूगा।"

वेनी की आखे चमकने लगी। नई स्फूर्ति जागने लगी। उत्साह मानुपिकता की सीमाओ को लाघकर प्रवल होने लगा। उसे इस खयाल से खुशी होने लगी कि यह अगर मुझमे समा जाए तो फिर कभी दूर न हो। यह अगर कलेजे मे समा जाए तो फिर कुत्ते न खा सकेंगे। मगर यो तो कलेजे मे समा नही सकती। और अगर नही समा सकती तो ज़रूर मर जाएगी और कुत्ते खा जाएगे।

वेनी के मस्तिष्क पर यह समस्या सवार हो गई कि कैसे वह अपनी

पत्नी को मरने और कुत्तो द्वारा खाए जाने से बचाए। फौरन ही उसका हल भी सूझ गया। इसके टुकडे-टुकडे करके इसे कलेजे मे छिपा लिया जाए, बस यह बच जाएगी। मौत इसे देख नही पाएगी, कुत्ते इसे खा नही सकेगे। यह खयाल बेनी को स्फूर्ति और प्रसन्नता देने लगा। वह तेजी से उठा। उसने अपना गडासा लिया। सास उसकी पत्नी की छाती मे बडी धीमी चल रही थी। बेनी ने सोचा, जल्दी करना चाहिए। मरने से पहले ही इसे काटकर कलेजे मे रख लू, नही तो यह मर जाएगी।

गडासे का पूरा वार गले पर पडा। अपने अधाधुध जोश मे वह लाश को बराबर काटता ही गया, यहा तक कि थककर गिर पडा। मास के टुकडे उसकी मुट्ठी मे आए। बेनी ने धीरे से हाथ उठाकर उन्हे देखा। आखो मे फिर नई चमक आई। थोडी देर पहले बाहर कुत्तो को मारते वक्त मास के छीछडे उसके होठो से लगे थे। उसे एक नया अनुभव मिला था। अपने हाथ मे पत्नी के शरीर के टुकडे देखकर बेनी को नया उत्साह आया। वह अपने हाथ को मुह के करीब लाता गया। आखो की चमक बराबर बढ रही थी। बेनी ने उन टुकडो को अपने मुह मे भर लिया और चबाने लगा।

भूख का पागल इन्सान अपने को मारकर भी जीवन की भूल-भुलैया मे भटकने की इच्छा करता था। भूख से लडते-लडते वह क्रमश भूख, पीडा, गरीबी, बुद्धि और मृत्यु की चेतना से परे जाकर जीवन से लड रहा था। मनुष्य का यह सघर्ष स्वय उसके लिए अर्थहीन हो चला था। उन्माद से भरे हुए कदम निरन्तर बढते चले जा रहे थे।

सोनाई के मदिर मे पुजारी जी रहते है। उनके चार बच्चे है, विधवा बहिन, पत्नी है और ब्राह्मण देवता अपने बडे परिवार को लेकर भूख से लड रहे है।

जव पुजारी जी गए तो उसने लाखो गालिया भगवान को सुनाई, देवी, देवता और वामन-ठाकुर को जी-भर कोसा, और फूटी कौडी देने से भी इन्कार कर दिया। भगवान भूखे मरने लगे। उनके पुजारी का परिवार भी भूखा मरने लगा। पहले अपने वर्तन-भाडे वेचे, फिर ठाकुर जी की पूजा के वर्तन वेच दिए। पीतल के ठाकुरो का कुनवा भी दूकानदार के घर पहुच गया। मदिर मे वेचने लायक अव कोई सामान न था। घर के सात प्राणी, पत्थर के राधा-कृष्ण और मदिर की गाय तथा उसका वछडा भूख से छटपटाकर दिन और रातें गुज़ार रहे थे। मोनाई आ भी गया, मगर भोग का इतज़ाम फिर भी न हुआ। मोनाई अज़ीम और अनाथालय के चक्कर मे पड गया। पुजारी एक वार उसके पास जाकर गिडगिडाया। मोनाई ने प्रस्ताव किया—"औरतो को अनाथाले मे भेज दो। और भगवान को भोग की क्या जरूरत है। वो तो भाव के भूखे है। उनके लाखो भगत यो रोज ही इस तरह भूखे मर रहे है। वे भला भोजन करेंगे।"

सवकी भूख सहन हो जाती थी, मगर अपने चारो वच्चो और गाय के वछडे को भूख से तडफना देखकर पुजारी त्रस्त हो उठता था। दिन पर दिन वच्चे सूखते जाते थे। गाव के दूसरे वच्चो की तरह उसके वच्चे भी दिन पर दिन मौत के निवाले वनते चले जा रहे थे। हारकर एक दिन उसने मोनाई के प्रस्ताव को स्वीकार करना चाहा। अपनी वहिन और पत्नी को मोनाई के अनाथालय मे भेजकर चार मुट्ठी चावल पाने की इच्छा की। उस दिन पति-पत्नी मे भयकर कहा-सुनी हुई। पुजारी हठ करके मोनाई के आदमियो को लाने गया। लौटकर देखा, कोठरी मे दो नगी लाशे टगी थी। पुजारी की पत्नी तथा वहिन ने अनाथालय के भय से अपने तन की फटी धोतिया उतारकर फासी लगा ली थी। अवोध वच्चे आश्चर्य से यह तमाशा देख रहे थे।

पुजारी ने लौटकर इस दृश्य को देखा। जीने की समस्या हल होने के वजाय और भी उलझ गई। पत्नी और वहिन को खोकर पुजारी पश्चात्ताप

को अग्नि मे जलने लगा। बच्चो को बचाने के लिए वह प्रतिक्षण चिंता से पीडित रहने लगा। समस्या कहीं भी हल होती न दिखाई देती थी और बच्चे दिन पर दिन मृत्यु के निकट पहुचते जा रहे थे। अपनी भूख की पीडा को पुजारी बच्चो की भूख मे मिलाकर खो देता था, और इस खो देने के कारण उनकी पीडा प्रतिपल, प्रतिक्षण दुगनी होती जा रही थी।

पुजारी त्रस्त हो उठा। एक दिन उसे विचार आया, अपने बचाव के लिए हत्या करना पाप नही। विचार की क्रिया-प्रतिक्रिया जल्दी-जल्दी उसके मस्तिष्क को उलझाने लगी। उसकी नजर सामने बधी गऊ और उसके बछडे पर गई। युगो से बधे मन को, ब्राह्मणत्व और हिन्दुत्व की चेतना को पुजारी की भूख झटका देकर तोड देना चाहती थी। सस्कारो के मोह को वह भूख की तलवार से काट देना चाहता था, परतु सस्कार भी कुछ कम प्रबल न थे। पत्नी और बहिन की मृत्यु, उसके हिन्दू हृदय मे गोमाता का स्थान और उसके पूजा करने के पेशे ने इस भूख से लडते हुए इन्सान को बुरी तरह जकड रखा था। उसे किसी करवट भी चैन न मिलता था। पुजारी हार-हार जाता था। पाप की भावना से उसका मन बार-बार थपेडे खाकर तडप उठा। राधा-कृष्ण की मूर्ति के सामने खडे होकर वह अपने को एकाग्र करना चाहता था, वह इस पाप की भावना को अपने मन से निकाल देना चाहता था—"तुम्ही बतलाओ, गोपाल, क्या यह पाप है? बच्चे फिर खाएगे क्या?"

गोपाल चुप थे। उनका मुस्कराता हुआ चेहरा वैसा का वैसा था।

पुजारी खीज उठा—"तुम पत्थर के हो। पीतल के मोल भी तो नहीं बिक सकते। किसी काम के नहीं, किसी अर्थ के नही।"

गोदान का पुजारी अपना सम्बन्ध विच्छेद करने के लिए भगवान से ही विद्रोह करना चाहता था। वह अपने साथ जबर्दस्ती कर रहा था। हत्या के लिए वह अपने विचारो का समर्थन चाहता था—न्याय चाहता था जो उसे वध करने से ही मिल रहा था।

विद्रोह की भावना प्रतिपल जोर पकड रही थी, क्योकि सस्कारो की

चेतना एक पल के लिए भी लुप्त नहीं हो रही थी। दिन-भर इसी संघर्ष में बीत गया। क्षण में गऊ वाले दालान की तरफ बढ़ता, फिर बाहर चला जाता। कभी बच्चों को ज़ोर से छाती में चिपटा लेता, फिर गुस्सा चढ़ता। कभी भगवान की कोठरी में चला जाता, हाथ जोड़ता, प्रार्थना करता, रोता-गिड़गिड़ाता, और फिर गालियां देने लगता और आंगन में आकर टहलने लगता। सारा दिन चक्कर काटते बीता। पुजारी के ब्राह्मणत्व, और हिन्दुत्व के संस्कारों ने हार न मानी, न मानी। उसका क्रोध बढ़ता गया। ठाकुर की कोठरी में जाकर उसने पहले तो भगवान के चरणों में अपना सिर फोड़ना शुरू किया और फिर भगवान को खींचकर पीटना शुरू किया।

इस बार उसने जबर्दस्त विद्रोह किया। अटूट हठ के साथ वह गाय के दालान में गया। भूख से दुबली गाय रस्सी से बंधी बैठी थी। भूख से बिल-बिलाता हुआ बेजान बछड़ा आंखें बंद किए हुए पड़ा था। कुट्टी काटने का गंड़ासा ताक पर रखा था। पुजारी गाय की तरफ गया। उधर से हिम्मत टूटी। फिर बछड़े की तरफ आया। बछड़े की तरफ जाते उसे अपने बच्चों का ध्यान आया। पुजारी का हठ फिर टूटने लगा। लेकिन वह नहीं चाहता था कि उसका हठ टूट जाए, उसके बच्चे भूखे मर जाएं। उसने तेज़ी के साथ गंड़ासा उतारा, बछड़े को खोलने की हिम्मत फिर भी न हुई। उसने गाय की रस्सी को खोला और उसे घसीटने लगा। गाय रंभाती हुई उठी। गाय बराबर रंभाने लगी। वह दयनीय आंखों से पुजारी को देख रही थी। शारीरिक कमज़ोरी, मन की निर्बलता और हठ पुजारी को तोड़े डाल रहा था। और इसी हार पर विजय पाने के लिए वह ज़बर्दस्ती गाय को घसी-टता हुआ मंदिर के बाहर ले चला। मंदिर में गो-वध करने की हिम्मत उसे नहीं हो रही थी।

उन्माद में पुजारी गाय को घसीटता हुआ ले जा रहा था। गाय कम-ज़ोर थी। मृत्यु का भय जानवर के दिल को दबोचकर उसके पैरों को और भी कमज़ोर बना रहा था। किसी तरह दस कदम चलकर गाय ने आगे

बढने से इन्कार कर दिया। वह गिर पडी। पुजारी उसे गाव से बाहर ले जाना चाहता था। गाय को मारकर उसके मास से अपने बच्चो का पेट भरने का निश्चय यद्यपि वह कर चुका था, फिर भी मन की गहराई मे सब कुछ अनिश्चित था। केवल सस्कार अपनी निश्चल गति से जागरूक थे। गाय ने आगे बढने से इन्कार कर दिया। इस इन्कार मे पुजारी की हार थी। यह हार पुजारी को कतई नापसद थी। उसे इससे घृणा थी। उसे गाय से घृणा हो गई। क्रोध आया। उन्माद जागा। उसने अपनी पूरी शक्ति लगाकर जमीन पर बैठी हुई गाय की गर्दन पर वार किया। गाय जोर से चीख पडी। खून के फौवारे छूट निकले। वह खून, मरती हुई गाय की छटपटाहट, दर्द-भरी आखे, पुजारी पर जादू का-सा असर करने लगी। खून बहते-बहते जमीन पर जमने लगा। गाय की छटपटाहट बद हो गई। ब्राह्मण पुजारी के सस्कार उग्र रूप से मन को तोडने लगे। पुजारी ने गडासा छोड दिया। उसकी इच्छा जोर से चीख पडने की हुई, परतु वह चीख न सका। उन्माद चला गया, ज्ञान फिर जागा। पुजारी की आखो से आसुओ की अविरल धारा बह निकली। ज्ञान की यह चेतना उन्माद से अधिक पीडा देने वाली थी—"माता, मुझे क्षमा कर। भगवान मुझे क्षमा कर।" फिर उसके मन मे विचार आया—"नही, पाप क्षमा नही किया जाता। उसका प्रायश्चित्त करना पडता है। मै प्रायश्चित्त करूगा। इसी गडासे से अपनी गर्दन काटूगा।' पुजारी ने फिर गडासा उठा लिया। सहसा उसके मन मे विचार आया—'बच्चो का क्या होगा ?" और उसने निश्चय किया कि बच्चो को मारकर स्वय अपना अत कर देगा। मरी हुई गोमाता के चरण छूकर वह गडासा लेकर मदिर की ओर चला। प्रायश्चित्त की 'पवित्र' भावना उसके मन को शाति दे रही थी, उसे दृढ बना रही थी।

कैसे वह अपने हाथ से अपने बच्चो को मारेगा ? कैसे गडासा उठेगा ? मन कमजोर पडने के पहले ही पुजारी का निश्चय दृढतर होता जा रहा था। मदिर के दरवाजे पर पहुचकर पुजारी के पैर फिर ठिठके। वह फिर कमजोर पडने लगे। गडासा लिए मदिर के बाहर टहलने लगा, "यदि मैं

स्वय प्रायश्चित न करूगा तो ईश्वर दड देकर मुझसे प्रायश्चित्त कराएगे।"

सस्कारी, आत्माभिमानी ब्राह्मण को दड भयानक और साथ ही अपमानजनक प्रतीत हो रहा था। पेट के लिए उसकी पत्नी और बहिन को वेश्या बनाने का प्रस्ताव ही उन दोनो के आत्मघात का कारण बना। ब्राह्मण पुजारी का रोम-रोम इस महादड की भयकर ज्वाला मे जल रहा था। प्रायश्चित्त करना ही उचित है। किंतु अपने बच्चो को गडासे से वह कैसे मार सकेगा ? गाय की हत्या का दृश्य उसे कायर बना रहा था। और वह कायर नही बनना चाहता था।

सहसा उसका ध्यान कनेर की झाडी की तरफ गया। ठाकुर के पूजा के लिए मदिर के बाहर कुछ फूलो के झाड लगा रखे थे। इधर अरसे से देख-भाल छूट जाने के कारण क्यारिया सूख चुकी थी। कनेर को देखते ही सहसा पुजारी को ध्यान आया कि इसकी जडो मे विष होता है। विष द्वारा अपने बच्चो तथा अपने-आपको मारना उसे सरल प्रतीत हुआ। पुजारी प्रसन्न हुआ। उसने भगवान को धन्यवाद दिया। उसमे नया उत्साह पैदा हुआ। गडासे से वह कनेर की छोटी-सी झाडी को काटकर उनकी जडें खोदने लगा। हाथो की शक्ति जवाब देने लगी थी, परतु प्रायश्चित्त का उत्साह उसे बल दे रहा था। उसने सारी जडें बटोर ली। क्यारियो की सूखी हुई टहनिया भी बटोरकर वह मदिर मे गया। गडासा बाहर ही पडा रहा।

चूल्हा बहुत दिनो से ठडा पडा था। पेड की टहनिया पुजारी ने चूल्हे मे रख दी। ताक से दियासलाई की पेटी उतारी। आठ-दस तीलिया अभी भी बची थी। पुजारी ने चूल्हा सुलगाया। मिट्टी का छोटा-सा घडा पानी से आधा भरा था। पुजारी ने उसे चूल्हे पर रख दिया। जडें उसीमे डालकर पुजारी अति शात भाव से पकते हुए काढे की तरफ देखने लगा। सूखी टहनिया जल्दी-जल्दी जल रही थी। पुजारी चूल्हे मे बराबर नई टहनिया झोकता जाता था।

काढा पककर तैयार हो गया। पुजारी पहले से भी अधिक शात हो गया। उसकी दृढता और भी बढ गई थी। उसने घडा उठाया। ठाकुर जी

की कोठरी की तरफ बढा। ठाकुर जी के सामने घडा रखकर उसने हाथ जोडे—"गोपाल, बहुत दिनो से तुम्हारा भोग नही लगाया मैंने। आज सब दिन की कसर पूरी हो जाएगी।"

उसने राधा-कृष्ण के चरणो पर वह घडा रख दिया और उनके होठो पर थोडा-सा जहर लगा दिया।

फिर बच्चो को जगाकर लाया। सबसे छोटे को गोद मे उठाया। खाने-पीने के नाम पर कोई चीज़ आज उन्हे बहुत दिनो के बाद मिल रही थी। बच्चे बहुत खुश हो रहे थे, बेताब हो रहे थे।

बाप का दिल फिर डगमगाने लगा। पुजारी ने अपने को साधा। घडे पर ढके हुए मिट्टी के सकोरे मे कनेर का काढा भरकर, अपनी गोद मे बैठे हुए बच्चे को उसने अपने हाथ से जहर पिलाना शुरू किया। बच्चा बडे सतोष से जहर पी रहा था। बाप की आखो मे आसू छलछला आए। पेट-भर चारो बच्चो ने ज़हर पिया। काढा खत्म होने लगा। वह खुद अपने लिए भी तो चाहता था। उसका अपना भी स्वार्थ तो था। उसने ज़बर्दस्ती बच्चो को पीने से रोक दिया।

इतने मे छोटा बच्चा पेट पकडकर रोने लगा। ज़हर धीरे-धीरे सब बच्चो पर असर कर रहा था। बाप चुपचाप देखता रहा। बेटे उसकी आखो के आगे मर रहे थे। वे सदा के लिए सो गए। पुजारी भी सदा के लिए सो जाना चाहता था। पुजारी ने घडे का मुह तोडा, जिससे पीने मे आसानी हो। टूटा घडा हाथ मे उठ आया। भगवान के चरणो मे प्रणाम कर पीना ही चाहता था कि गाय का बछडा कापती हुई आवाज़ मे रभा उठा।

पुजारी ठिठक गया। उसे चिता होने लगी। तडप-तडपकर मरेगा बिचारा। काढा बहुत थोडा है, नहीं तो उसे भी पिला देता। फिर उसे ध्यान आया। अपने स्वार्थ के लिए एक निरीह प्राणी को कष्ट देना बहुत बडा पाप है। जिसकी मा को मारकर वह इस समय प्रायश्चित्त करने बैठा है उसको इस तरह ससार मे सिसक-सिसककर मरने के लिए छोड जाने का क्या अधिकार है। अपने बच्चो के लिए उसे चिता थी। क्या वह बच्चा

नही है ?

स्वार्थ और परमार्थ का सघर्ष पुजारी को अपार कष्ट दे रहा था। वह मरना चाहता था। उसे मारने की प्रबल इच्छा थी। जहर इस समय उसके लिए अमृत था। जीवन विष से भी अधिक बुरा था। वह जीवन नही चाहता। पत्नी, बहिन, अपने बच्चो और गऊ का हत्यारा ब्राह्मण पुजारी जिन्दा नही रहना चाहता।

गाय का बछडा अपनी कापती हुई आवाज़ मे रभा रहा था।

स्वार्थ और परमार्थ मे घोर सघर्ष चला। पुजारी कठोर बना—"इस बच्चे को सिसक-सिसककर मरने के लिए छोडने का मुझे क्या अधिकार है ? पाप मैंने किया है। सिसक-सिसककर जियू तो मैं ! इतने दिन जियू कि मेरा जीवन पहाड बन जाए ? मेरे ऐसे हत्यारे के लिए यही सबसे बडा प्रायश्चित्त होगा !"

गाय के बछडे को कष्टमय जीवन से मुक्त करने के लिए पुजारी आगे बढा।

पुजारी ने अपना प्रायश्चित्त पूरा किया। परन्तु पत्नी और बहिन का आत्मघात, गोहत्या, बच्चो की लाश और गाय के बछडे का तडपना पुजारी के प्रायश्चित्त को उन्माद से न बचा सका। अपने-आपसे भयभीत होकर, चीखकर वह भागा—बेतहाशा भागा।

८

कनक को लकडियो मे अच्छी तरह सुला भी न पाए थे कि गिद्धो के झुड ने लाश पर धावा बोल दिया। शिबू और पाचू को अपनी जान के लिए दौडकर अलग होना पडा।

आज घर मे मौत का पहला दिन था। सवेरे शिवू की गोदवाली मुर्दा-दम लडकी चुन्नी ने भूख की तडप मे आखिरी ज़ोर लगाकर मा की छाती पर मुह मारा। उसीमे दाती बैठ गई। मा की छाती से दूध के बजाय खून निकल आया और चुन्नी का दम निकल गया।

पन्द्रह रोज़ से घर मे भूख का राज था। सबसे छोटी बहन कनक को छ रोज से जूडी आ गई थी। चुन्नी की मौत देखकर वह रोते-रोते बेहोश हो गई थी।

चिर प्रत्याशित मृत्यु इस घर से भी अपना हक लेने के लिए आ पहुची थी।

शिवू और पाचू चुन्नी को दफनाने के लिए गए। लौटकर आए तब तक कनक को उठाने की बारी आ गई थी।

शिवू आज सवेरे से गम्भीर हो गया है। चुन्नी मरी, घर मे सभीकी आखे पिघलने लगी। बाबा तो जनम के कठोर है, मगर शिवू अपने जीवन मे पहली ही बार आज मौन हुआ है और आखे खुश्क रही है।

रास्ते-भर शिवू-पाचू चुप रहे। बच्ची की लाश को अपने हाथो मे लिए हुए शिवू मृत्यु को अति निकट से अनुभव कर रहा था।

बचपन से उसकी इच्छाओ की बेल सदा सहारा लेकर बढी है। अपनी अकर्मण्यता की पालकी दूसरो के कधो पर रखकर उसका दर्प आगे बढना चाहता था। हठ से वह अपने दर्प की रक्षा करता था। उम्र बढती गई, बुद्धि न बढी। ब्राह्मणत्व, कुलीनता, पिता और छोटे भाई की प्रतिष्ठा का सहारा लेकर वह बडा बन नही सकता, इसे वह अच्छी तरह समझ गया। जुआ खेलकर या लीडर बनकर एक ही दाव मे प्रतिष्ठा को जीत लेने की कोशिश मे वह बराबर लगा रहा, मगर कामयाबी हासिल न हुई। हठ चिढ मे बदलती थी, चिढ गुस्से का रूप लेती थी और गुस्सा उसे उच्छृखल बनाता था। उच्छृखलता के आचरण मे वह अपनी लघुता को ढक लेना चाहता था। स्वय अपने से भी वह अपनी लघुता को छिपा लेना चाहता था, वह कठोर बन गया था।

अकाल ने पर्दा फाश कर दिया। अकाल उसकी इच्छा के खिलाफ था। हठ, चिढ, गुस्सा और उच्छृखलता कुछ भी काम न आ सकी। बच्ची की मृत्यु ने आज उसे पूरी तौर से हरा दिया था। अधिकाधिक कठोर बनकर शिबू अपनी इस पराजय को भी जीत रहा था। वह पत्थर हो गया था।

बच्ची को दफनाकर शिबू और पाचू घर लौटे। दोनो भाई मौन थे। घर के पास आए, रोने की आवाज़े सुनाई दी। अन्दर गए, देखा, कनक की लाश पडी थी। पाचू हिल गया। शिबू वैसा ही कठोर बना रहा।

पार्वती मा सबसे ज्यादा रो रही थी, उनका रोना देखकर आखो मे आसू आते थे।

सास-ससुर—बडो की मौजूदगी मे अपनी बच्ची के लिए रोना कुलीनो के अदब के खिलाफ माना जाता है। शिबू की बहू अपनी बच्ची से बिछडने का दर्द भी ननद की मौत पर उडेल देना चाहती थी। मगर किसीमे खुलकर रोने की शक्ति नही थी। शारीरिक कमजोरी और क्रमश निकट आते हुए अपने अन्त का भय, आसुओ को दबोच लेता था।

पास-पडोसी कोई नही आया। आबरू के ध्वस्त किले मे कुलीनता मौत से छिपकर बैठ रही थी।

टिकटी के लिए चार बास नही जुडते थे। बेबसी पर शर्म को कुर्बान कर फटी झोली मे कनक की लाश को डाल दोनो भाई उसे फूकने ले चले।

बोझ सभाले न सभलता था। दोनो भाई उजडी हुई आबादी से परे जाकर एक टूटे और उजडे हुए घर से थोडा-सा फूस और दो बास पाकर किसी तरह कनक को जलाने की सोच रहे थे। इतनी लकडियो मे लाश का जलना असम्भव था। लेकिन असम्भव को सम्भव बनाने की बेबसी से भरी हुई जिद से अपनी बहन की अन्तिम धार्मिक प्रेतक्रिया करना चाहते थे। दो-चार लग्गे-लकडिया और बटोरे मिल गई।

गिद्ध आसमान मे मडरा रहे थे। शिबू चिथडे से ढकी हुई लाश के पास खडा था और पाचू उन दस-पाच लकडियो से चिता बनाने का प्रयत्न कर रहा था।

चिथडे से निकालकर लाश को लकडियो पर रखा। हाथो मे दम न था। मन बेहद भारी हो रहा था। दोनो भाई चुप थे। लाश रखकर पाचू उसपर फूस डाल रहा था, शिवू ने दियासलाई की डिबिया निकाली। गिद्धो का झुड मडराते हुए नीचे उतरने लगा। पाचू भयभीत हो उठा। आग लगाने की जल्दी थी। लेकिन दियासलाई सुलग भी न पाई कि वडे-वडे पखो की हवा सिर पर लगी। गिद्धो का झुड झपट्टा मारकर नीचे उतरा। शिवू-पाचू उनके वार से वचने के लिए तेजी से पीछे हट गए।

पाचू ने फिर मुडकर भी न देखा। उसकी हिम्मत न हुई। अनेक शवो की तरह उसकी वहन का शव भी थोडी देर मे अपरिचित ककाल वनकर शेष रह जाएगा, यह वह सोचना भी नही चाहता था। सत्य मजवूरी वन-कर उसे पीडा दे रहा था। पाचू अत्यधिक विचलित हो उठा।

शिवू ने एक वार पीछे घूमकर देखा, गिद्धो के झुड के सिवाय उसे कुछ और न दिखाई दिया। वडे-वडे पाव फैलाकर गिद्ध चारो ओर वैठे थे और चोचें चल रही थी। कुछ गिद्ध आसमान मे भी उड रहे थे। अपनी वहन की लाश को इस तरह पक्षिराज के आहार का साधन वनते देखकर भी शिवू की आखो से एक वूद जल न टपका। शिवू सिर झुकाकर चुपचाप आगे की ओर वढा।

गोहत्या की वात, धीरे-धीरे, वचे हुए गाव की वात हो गई थी। मृत्यु से लडता हुआ उन्मादी मनुष्य एक क्षण के लिए इस खवर से उलझा भी था। अव तक इस गाव के प्राणी हर तरह से तो मरे थे, किन्तु हथियार की मदद से किसीका खून किया गया हो, ऐसी कोई घटना नही हुई थी। गऊ का मारा जाना मनुष्य के लिए उस समय विशेष महत्त्व की घटना न थी, खाली मोनाई ही इस काड को लेकर जरूरत से ज्यादा शोर मचा रहा था। वचे-खुचे गाव के आवरुदार भद्र लोग भी (अपने ऊपर पर्दा डालने के लिए) इस गऊ के मारे जाने की घटना को ज्यादा अहमियत दे रहे थे।

× × ×

आवरूदारो का बुरा हाल था। आवरू नाम की कोई चीज इस वक्त तक उनके साथ नही रह गई थी। उनकी बहू-बेटिया भी खुले आम धर्मशालओ और अनाथालयो मे भेजी जाने लगी थी। हरएक हरएक के घर का राज अच्छी तरह मे जानता था, फिर भी आवरू शब्द की रक्षा जवान से वरावर की जा रही थी। हरएक के घर मे ही एक-आध-दो मौतें भी हो चुकी थी। श्राद्धादि प्रेत-कर्म करना हरएक के लिए असम्भव हो चुका था, इसलिए जो घर मे मर जाता उसके लिए यह कह दिया जाता कि वह 'परदेस' गया है। 'परदेस' और 'धर्मशाले' का मतलब हरएक आवरूदार जानता था। अपनी औरतो-वेटियो को अज़ीम और मोनाई के हाथो वेचकर जो चावल पाते थे उसे वे सौ रुपये मन के हिसाव से खरीदा हुआ वताते। आवरू जाए तो जाए, मगर आवरू का खयाल दिल मे न जाता था। मन्दिर के सामने ही कटी हुई गाय को देखकर आवरूदार हिन्दू धर्म की याद करने लगा। मोनाई के साथ-साथ मन्दिर के अन्दर जाकर पुजारी के चारो वच्चो और गाय के वछडे को मरा हुआ देखा। मवके मुह से निकले हुए नीले झाग देखकर लोगो ने घटना को समझ लिया। हर आवरूदार को यह मौत वहुत अच्छी लगी। जहर खाकर आवरू वचा लेना लोगो को महान आदर्श का सार जचा। उनकी निगाह मे जहर की इज्जत वढ गई। गोहत्या का तज़किरा दवने लगा था। ज़हर की ख्वाहिश हरएक को होने लगी थी।

आज मृत्यु से अधिक आत्मीयता हो जाने के कारण पाचू विचलित हो उठा था। मृत्यु पर वह झुझला रहा था। क्या इस देश मे एक भी आदमी जिदा न वचेगा? क्या पृथ्वी से मनुष्य जाति ही उठ जाएगी! आज गावो मे है, कल शहरो मे मौत फैलेगी। एक दिन सारा देश मानवविहीन हो जाएगा।

पाचू की कल्पना क्रमश सजीव होने लगी। उजडे हुए गाव, उजडे हुए नगर, उजडी हुई दुनिया उसकी कल्पना के रगो से भरी जाने लगी। थोडे-से लोग, जो कि अमीर कहलाते हैं, वच जाएगे। मगर वे भी कव तक

बचे रहेगे? जब अन्न पैदा करनेवाला ही न बचेगा तो खानेवाला क्या खाकर जीवित रहेगा? रुपया, सोना, चादी और जवाहरात को क्या दातो से चबाया जा सकेगा। मोटरो और ऊचे-ऊचे महलो से क्या पेट का कभी न भरनेवाला गड्ढा भर पाएगा? नही। वे भी एक दिन मरेंगे। उन्हे भी एक दिन मरना ही होगा। बडे समाज को अपने स्वार्थ के लिए मारकर छोटा समाज भी जीवित नही रह सकता। स्वार्थ की व्यक्तिगत सज्ञा ही गलत है। हर आदमी स्वार्थी होना चाहता है। लेकिन असलियत यह है कि वह अपने स्वार्थ को पहचानता नही। व्यक्ति का स्वार्थ समाज का ही स्वार्थ है। जब समाज ही न रहेगा तो व्यक्ति कैसे जीवित बचेगा?

पाचू की कल्पना अपने गाव से लेकर कलकत्ते तक के विनाश का दृश्य देख रही थी। और कलकत्ते तक ही नही, उसकी कल्पना सारे विश्व को मानव-शून्य देख रही थी। वह बम, तोपें, टैंक, हवाई जहाज, बडी-बडी राजधानिया, ऊचे-ऊचे महल, मोटरें, ट्रेनें, रेडियो, टेलीफोन और ज्ञान-विज्ञान की सब चीजें मानव की असफलता का चिन्ह बनकर शेष रह जाएगी, घरो मे कुत्ते लोटेंगे। दुनिया मे जानवर ही बच जाएगे। आदमियो की ठठरिया ही उनकी याद दिलाने के लिए बच रहेगी।

मानव का एकमात्र प्रतिनिधि बनकर अपने कल्पना-लोक मे घूमता हुआ पाचू दुनिया को इसी तरह से देख रहा था। घर की दो मौतो ने उसके विचारो की गति और भी तीव्र कर दी थी। उसे एक-एक करके सब मौतें देखनी होगी, यह बात वह अपने ऊपर बडा सयम करके सोच रहा था मा, बाबा, भाई, पत्नी, भावज, तुलसी, दीनू, परेश—दुनिया की हर चीज वह इसी तरह से जी भरकर देखने लगा, जैसे अब वे सदा के लिए उनकी आखो से ओझल हो जाएगी।

निदू को सवेरे से इतना गभीर और मौन देखकर पाचू का दिल धदरा रहा था। वह जानता है कि उसके भाई का हृदय बडा कोमल है। निदू की बडी से बडी ज्यादतियो के बावजूद भी वह उसे बहुत प्यार

करता था। शिवू हमेशा ज़रूरत से ज्यादा बोलता, शेखी बघारता, चीखता-चिल्लाता, और जल्दी ही हमने या रो पडने का आदी था। पाचू उस रूप मे शिवू को देखने का आदी था। शिवू की यह गभीरता उसे उसके स्वभाव के विपरीत लग रही थी। उसे डर था, दादा के दिल को ज़बर्दस्त चोट पहुची है। कही कुछ हो न जाए।

मृत्यु आज घर से दो प्राणी कम कर गई। दीनू और परेश भी किसी वक्त जा सकते हैं। उन दोनो के हाथ-पैरो मे सूजन आ गई थी। बौदी (शिवू की वहू) पहले से ही दुबली थी, अब तो ककाल मात्र ही रह गई थी। मगला कितनी फीकी पड गई है बेचारी ! परतु उसकी बडी-बडी मद-भरी आखो मे अब भी चमक है। आज भी उसके होंठो पर मुस्कराहट बार-बार आती है, बल्कि पहले से ज्यादा आती है। पाचू ने अक्सर गौर किया है, मगला आजकल ज़बर्दस्ती हसने और हसाने की कोशिश भी करती है। बौदी की मुस्कराहट बडी डरावनी होती है। दातो की पक्तिया खुलते ही अपनी विकरालता का परिचय देती हैं। तुलसी बिलकुल नही हसती। उसका ध्यान उडा-उडा-सा रहता है। वह ज्यादातर चलती-फिरती भी नही, बैठी रहती है या लेटी रहती है। कमज़ोरी के बावजूद भी वह करवटें ज्यादा बदलती है।

मा आजकल ज़रूरत से ज्यादा चिडचिडी हो गई हैं मगर वह चिटचिडापन निहायत ऊपरी है। उस चिडचिडेपन के बीच उनकी गभीरता छिपी हुई है। सवेरे से शाम तक वही सबसे ज्यादा बोलती, चिल्लाती और चलती-फिरती है। बिना बात की आड लेकर घर के सब लोगो पर चीखा-चिल्लाया करती है, सबको गालिया दिया करती हैं—'मरो, मरो' किया करती हैं।

पाचू को मा का यह स्वभाव भी बडा अस्वाभाविक-सा लगता था। आज सवेरे चुन्नी की मौत पर उन्होंने बडा तूफान मचाया। जब बडी बहू की छाती मे ही चुन्नी की दाती बैठ गई थी, और छाती से खून निकलने लगा था, बडी बहू चीखकर आखें उलटने लगी थी। मा ने

एकदम से सबको गालिया देना शुरू कर दिया। एक सिरे से नन्हों 'मा मरो' कर डाला, लेकिन उस वीच मे मगला मे उन्होने पानो मगाग तुलसी को वुलाकर भावज को पकडने के लिए कहा, जबरदस्ती चुन्नी के जवडो मे अगूठे डालकर उसका मुह खोला और उसकी लाश को कुछ ऐ तरह आगन मे पटककर घर मे सवको चौंका दिया। झटके के साथ उचक-कर वडी वहू भी उधर देखने लगी। पाचू निश्चयपूर्वक जानता है कि उसकी मा पागल नही हुई हैं। उस अमानुषिक-सा लगनेवाली घटना मे मा की वुद्धि वहुत गहरे जाकर काम कर रही है। घर मे अपने वाली मृत्यु को तुच्छ करके, घर-भर के दिलो मे समाए हुए मौत के डर को झटका देने के लिए वह वहुत कठोर हो गई थी। मा के इस कृत्य ने उस समय वडी वहू को मरने से वचा लिया था, हरएक के जीवन मे कुछ दिन और वढा दिए थे।

पाचू गौर कर रहा था, जव दोनो भाई चुन्नी को दफनाकर घर लौटे तव घर के वाहर तक रोने की आवाजें आ रही थी। सवसे ऊची और सवसे ज्यादा दर्दनाक मा की आवाज़ थी। कनक की मौत पर मा का इस तरह से रोना और रुलाना भी पाचू को वडा ही अस्वाभाविक सा लगा था। जव ये लोग घर पहुचे तो एक वार वह दर्द नये जोश के साथ वढा। पाचू भी रो पडा, मगर शिवू नही रोया था। कनक की लाश को झोली मे डालकर वाहर ले जाने से पहले मा ने पाचू को एक ओर वुलाया और गभीर आवाज़ मे कहा—"रास्ते मे अपने दादा का ध्यान रखना, वेटा।" पाचू को ताज्जुव हुआ था। मा की आवाज़ मे ज़रा कपकपी न थी। पाचू ने ताज्जुव के साथ इसे महसूस किया था और उसे इससे वल मिला था। आप धैर्य धरकर मा को धैर्य देने की इच्छा उसके मन मे सहज ही जाग्रत हुई। वह मा को धैर्य वधाने लगा। मा ने उत्तर दिया—"धरती माता अपना धीरज आप ही धरती है, वेटा। छिन-छिन टूट रही है, पर दुनिया अव तक वची भी उन्हींके कारन है। तू मेरी फिकर मत कर। मैं टूट जाऊगी, पर हारूगी नही।"

इसके वाद से वह मा को एक नये रूप मे देखने लगा था। इतने दिनो की महातपस्या का तेज उनके कृशगात को प्रतिक्षण नवजीवन दे रहा था। उसी जीवन की ज्योति मे वे अपने वच्चो को खिला रही है। पाचू धरती के रूप मे अपनी माता को देखता था—धरती, जिसे मनुष्य प्रतिक्षण अपने पैरो तले कुचलता है परतु उसीके सहारे खडा भी है! लेकिन पाचू सोचता है, इस तरह से मा और कितने दिन जी सकेगी? कव तक, पाचू सोचता, धरती भी इन अत्याचारो को सह सकेगी?

पाचू की पूर्व-कल्पना फिर जाग उठी—"आदमी से खाली दुनिया, अपनी ही छाती पर धरती अपने महान वेटे का स्मारक लेकर, शोक करेगी। उसे अपने दूसरे वच्चो का खयाल भी तो है। आदमी की वुद्धि, ज्ञान-विज्ञान की अनगिनत निशानिया भी एक दिन खडहर होकर मिट्टी मे मिल जाएगी, धरती फिर टीलो, पहाडो और हरियाली से ढक जाएगी। मानव के चिन्ह का अस्तित्व लोप हो जाने के वाद धरती फिर अपने दूसरे वेटो—पशुओ और पक्षियो के लिए जीवनदायिनी और सुखद वन जाएगी।"

इस विचार से पाचू के अहम् को वल मिला। फौरन ही शिवू की याद आ गई।

कनक को गिद्धो के हवाले छोड आने के वाद, थोडी दूर आगे चलकर शिवू और पाचू, दोनो दो अलग-अलग रास्तो पर चलने लगे थे। शिवू घर की ओर चलने के वजाय ब्राह्मण पाडे के उत्तर की ओर चल दिया। वहा शिवू की मित्र-मडली के तीन सदस्य रहते है। शिवू को उधर जाते देख पाचू कुछ न वोला। सोचा—"अच्छा है, वहा जाकर उनका यह मौन टूटेगा। दिल का गम कुछ कम होगा।" पाचू घर की ओर चला आया। घर मे दोनो वहुओ और तुलसी से घिरी हुई मा वुखार से तपते हुए परेश को गोदी मे लिटाकर सवको अपने पाच वेटो की मौत के वारे मे अपनी आपवीती सुना रही थी। और उस वर्णन मे, घवराहट मे की गई अपनी वेवकूफियो का जिक्र करते हुए वे हसती जाती थी। उस हसी के पीछे,

यह महायुद्ध क्या है ? कौन-सा आदर्श है इसमे ? सत्य एक असत्य के साथ सधि करके दूसरे असत्य का सर्वनाश करने के लिए युद्ध कर रहा है। मनुष्य इसे राजनीति कहकर अर्द्धसत्य का पोषण करता है। अर्द्धसत्य अज्ञान का कारण है। ज्ञान प्रेम का मूल्य है। और प्रेम की गति है निर्माण तक—निर्माता तक।"

हथेली से ठोडी को पकडे हुए पाचू कोठरी की छत की तरफ देख रहा था। अधेरा उसकी आखो मे जम गया था। धीरे-धीरे आखो की ज्योति ने उस अधकार को वश मे किया और छत की कडिया दिखाई पडने लगी।

अपनी खिडकी के बाहर छिटकी हुई चादनी और तारो को पाचू देख रहा था। मगला उसकी छाती मे मुह छिपाकर सो गई थी। वह आज बहुत थक गई थी। आज उसकी हसी भी सहम गई थी।

सिर को टेके हुए पाचू का दाहिना हाथ थकान महसूस कर रहा था। लेकिन मगला के जाग उठने के भय से वह जरा भी न हिला-डुला, चुपचाप खिडकी के बाहर छिटकी हुई चादनी और आसमान के तारो को वह देखता रहा। अपनी छाती से चिपकी हुई मगला के स्पर्श को वह अपनी थकान से अधिक मूल्यवान समझता था। वह यह महसूस करता था कि मगला दिन पर दिन कमजोर होती जा रही है। उसे यह डर था कि यह स्पर्श-सुख न जाने कब सपना हो जाए!

सहसा चीख सुनाई दी। मगला चौंककर जाग पडी। पाचू उठकर बैठ गया। बौदी क्यो चीखी ? दादा के कमरे के किवाड भी जोर से खुले। पीछे से दादा की आवाज भी आई—"शाली चरका देकर भाग गई। घरवाले जैसे तुझे बचा ही तो लेंगे। हारामजादी, तू मेरी वस्तु है। यू आर माई थिंग, शाली!"

दिन-भर के बाद दादा की आवाज सुनी थी। मगला और पाचू दोनो सहमकर एक-दूसरे की ओर देखने लगे। पाचू उठकर तेजी से नीचे की ओर चला। पीछे-पीछे मगला भी चली। आगन मे शिबू अपनी पत्नी को

नगा करके उसपर बलात्कार करने पर तुला हुआ था।

बाबा तक अपनी कोठरी से बाहर आ गए थे। मा, तुलसी, दीनू, परेश, पाचू और मगला सक्ते मे खडे रह गए।

शिवू की बहू अपनी शक्ति-भर लड रही थी। सारे घर के सामने—सास-ससुर, ननद, देवर, देवरानी और अपने छोटे-छोटे बच्चो के सामने नारी की लाज लुटी जा रही थी। और लाज का लुटेरा था स्वय उसकी लाज का रक्षक—उसका पति।

शिवू को अपनी पत्नी के प्रति बेहद गुस्सा था। उसके पास सीधा तर्क था कि पत्नी पति की मिल्कियत है और इसीलिए कुदरतन उसे सर्वाधिकार प्राप्त है। बच्चा अपने खिलौने को जैसे जी चाहे खेले, उसे तोड भी डाले—इसमे खिलौने को शिकायत क्यो हो? पाचू की जिद ठीक इसी किस्म की थी।

दिन-भर मृत्यु की विभीषिका ने उसे मन ही मन बहुत तडपाया था। मृत्यु का भय पत्थर की शिला बनकर उसके कलेजे पर रखा था। वह दिन ही दिल मे दर्द से घुट रहा था। उसे उसमे बचने का कोई मार्ग नही मिलता था।

रात आई, पत्नी कमरे मे आई। भय को जीतने की भावना क्रमश शिवू को उत्तेजित करने लगी। अपनी पत्नी के भूखे-सूखे शरीर और टूटे हुए मन पर वह बलात्कार करने लगा। पत्नी को जितनी ही पीडा होती थी, शिवू का आनन्द उतना ही बढता था। शिवू की पत्नी के लिए पति के अत्याचार असह्य हो उठे।

आज सवेरे ही घर मे दो मौतें हुई थी। अपनी बच्ची मरी थी, दोनो बच्चे भी अब-तब हो रहे थे। ननद की मौत का गम था। और सबसे ऊपर अपनी शारीरिक निर्बलता के कारण बडी बहू बिलकुल टूट गई थी। उसपर शिवू का यह हिंसक उन्माद! सहनशीलता की सीमा से परे, इस अमानुषिक अत्याचार से घबराकर बडी बहू ज़ोर से चीख उठी। प्राणो के भय से उसमे उस समय बेहद बल आ गया था।

अपनी पत्नी के सहसा यों चीख पडने से शिवू चौंक पड़ा। वह जरा अलग हटा। मौका पाकर अपने प्राण बचाने के लिए बडी बहू फुर्ती से दरवाजे खोलकर नीचे भागी। पहले तो शिवू सहम गया, बाद में अपनी असफलता पर भयकर क्रोध जागा। वह दबनेवाला नही है। वह किसीसे भी नही डरता। वह अपनी इच्छा जरूर पूरी करेगा। उसकी पत्नी उसकी मिल्कियत है। अपनी मर्जी के मुताबिक वह उसका उपभोग कर सकता है। यह विचार शिवू को क्रोध मे पागल बनाकर अपनी पत्नी के पीछे-पीछे नीचे दौडा ले गया। घर-भर की परवाह न करके वह अपना अधिकार और बडप्पन सिद्ध करना चाहता था। शिवू अपनी पत्नी को काबू मे लाकर उसपर बलात्कार करने लगा। पाचू और मगला ने अपने मुह फिरा लिए। तुलसी मा की नजरें बचाकर चुपके से उधर देख लेती थी।

मा ने अपने मन को तुरत ही सभाल लिया। वह आगे बढी और जबर-दस्ती शिवू को पीछे ढकेलने लगी। मा को आगे बढते देख पाचू की चेतना लौटी। झूठी लाज छोडकर भावज को इस राक्षसी अत्याचार से बचाने के लिए वह आगे बढा। मा ने बेटे को घसीटते हुए कहा—"पापी, मा बाप की तो शर्म कर।"

शिवू तैश खा रहा था। पाचू उसे कसकर पीछे से पकडे हुए था अपने को पाचू के हाथो से छुडाने का प्रयत्न करते हुए वह गरजकर मा से बोला—

"यह बाबा को सिखाओ जाकर। उनका अब बखत भी है शरम करने का। छोडो मुझे।"

शिवू के इस उत्तर से अपनी चिर शकित आशका के साथ साक्षात्कार कर, मा का मन अदर ही अदर लज्जा और पीडा लिए हुए जमीन मे तेज छुरी की तरह गड गया। मा ने तुरत अपने मन को सभाल लिया और शिवू को दोनो हाथो से ढकेलते हुए, पाचू से चिल्लाकर कहा—"घर से बाहर निकाल दो इस चाडाल को। यह हत्यारा मेरे पाप की सतान है। मेरे पाप का फल है।" उनकी आखो मे आसू आ गए थे, उनकी आवाज उखड गई थी।

बाबा के तन की आखे बन्द थी, परतु मन की आखे अपने चरित्र की सबसे बडी दुर्बलता को आज आमने-सामने देख रही थी। स्त्री-विषय मे बाबा के असयम और अधैर्य ने उनके हरएक बच्चे को गलत तरीके से काम की चेतना दी। पाडित्य के दीपक के नीचे इस तरह सदा अधकार बना रहा। इस समय उन्हे ऐसे अनेक दृश्य याद आ रहे थे जब कि उनकी लापरवाही ने उनकी अबोध सतानो के मस्तिष्क को विकृत करने मे सबसे अधिक सहायता पहुचाई थी। मा और बाप, दोनो ही अपनी कमजोरियो से हारकर अपने बच्चो के शत्रु बन गए।

बाबा चरित्रवान थे। जीवन मे कभी किसी दूसरी स्त्री की ओर उन्होंने आख उठाकर भी न देखा था। पत्नी को वह पति की कामेच्छा तृप्त करने का साधन मानते थे। और इस नाते वह पत्नी को सदा पति की मिल्कियत ही समझते रहे। पार्वती मा मे भी स्वाभिमान की मात्रा कम न थी। दोनो ने एक-दूसरे से अपने स्वाभिमान की रक्षा करने के लिए सधि-सी कर ली थी। पति के इच्छा करते ही वह अपना शरीर समर्पित कर देती और इसके मूल्य मे वह अपने हठ पूरे किया करती थीं।

बाबा शहर के कालेज मे सस्कृत के प्रोफेसर थे। पार्वती मा को शहर अच्छा नही लगता था। वह गाव मे ही रहती थी। बाबा हर शनिश्चर की शाम को घर आया करते थे। पार्वती मा ने पाच बच्चो को खोकर शिबू को पाया था। वह उसे एक पल के लिए भी अपनी आखो से ओझल न होने देती थी। उनके लाड-प्यार ने ही शिबू को ज़िद्दी और चिडचिडा बनाया था। बाबा हर बार इसे बडे दु ख के साथ अनुभव करते थे और पार्वती मा से शिबू को पढाने-लिखाने और समझदार बनाने की बात मौके-मौके पर निकाला करते थे। शिबू की किसी भी कमज़ोरी के बारे मे किसी-का कुछ भी कहना पार्वती मा को बहुत अखरता था। वे चिढकर कहती—"बचपन मे सभीके लडके ज़िद्दी होते है। रही पढने की बात, सो वखत आने पर सब आप सीख लेगा। अभी उसकी उमर ही क्या है। क्या पढे बिना काम नही चलता ? और धन तो जो किस्मत मे होता है तो बिना

पढे भी मिल जाता है। पढ-लिख के नौकरी करने से ही सबके महल नही चुना करते।"

वावा चेतावनी देते, कहते—"तुम वडी भूल कर रही हो। वच्चे को एक उम्र से ज़्यादा अगर वच्चे की तरह ही रखोगी तो उसकी गैर-ज़िम्मेदारियो का सारा दोष भी तुम्हारे जिम्मे आएगा। पढाना सिर्फ नौकरी करानें के लिए ही ज़रूरी नही है। विद्या से चरित्र का विकास होता है।"

पार्वती मा पर वावा की इन वातो का कभी भी कोई अच्छा असर नही पडा। वे और चिढ जाती। और वावा शनिश्चर की रात खराव करना नही चाहते थे।

वावा ज्ञानी और चैतन्य थे। परतु अपनी इस कमजोरी के प्रति वह सदा अधकार मे रहे। धर्मपत्नी के साथ सभोग करने को उन्होने कभी व्यभिचार नही समझा और इसी नासमझी मे वे अपनी धर्मपत्नी को सदैव के लिए अपनी वेश्या वनाकर उसके साथ व्यभिचार करते हुए गृहस्थ धर्म का पालन करते रहे।

अधे हो जाने के वाद जव कोई काम न रह गया तव उनकी कामवृत्ति और भी ज़ोरो मे उभडी। पार्वती मा इस ओर से सचेत रहते हुए भी पति के हाथो का खिलौना वनकर रह गई। शिवू की वात ने आज वावा और पार्वती मा, दोनो की ही आखें खोल दी। मगर अव इससे लाभ ही क्या?

पार्वती मा मर जाना चाहती थी। अपने ऊपर का सारा क्रोध वे रो-रोकर शिवू पर उतार रही थी—"घर से निकाल दो इस चाडाल को। मेरी आखो के सामने से हटा दो इसे।"

वौदी और तुलसी को पार्वती मा अपनी कोठरी मे ले गई और अदर से दरवाज़ा वद कर दिया।

शिवू के डर से मगला भी अपने कमरे मे चली गई थी। शिवू आपे से वाहर होकर चीख रहा था। अपनी परवशता पर विगडकर वह हर एक को गालिया दे रहा था। और गालिया देकर वह आप ही घर मे

वाहर जाने लगा। पाचू सामने खडा था। जाने से पहले पाचू को मा और वहन की गालिया देते हुए उसने उसे कस-कसकर दो तमाचे मारे और घर से वाहर चला गया।

पाचू मार खाकर भी चुपचाप खडा रहा। उसके मन ने आज वडी करारी मार खाई थी। अकाल की समस्त घटनाए और यातनाए आज की इस घटना के सामने तुच्छ हो गई थी। वाहर की घटनाओ से पीडा पाने पर उसका मन घर मे शाति पाया करता था। परन्तु आज के वाद उनके घर से भी शाति चली गई थी। आज की घटना के वाद वह विच-लित हो उठा था। शिवू के लिए कुछ भी असभव न था। वेनी ने अपनी वहू का खून कर डाला। गाय तक का वध किया जा चुका था। हथियार पाने पर शिवू भी अपने सारे घर का वध कर सकता है। शिवू घर मे आग लगा सकता है। उससे कुछ भी वईद नही। लेकिन क्या पाचू उन सव दृश्यो को अपनी आखो से देख सकेगा—क्या पाचू अपने परिवार को नष्ट होते देख सकेगा?

पाचू घर से भाग जाना चाहता था। वह फिर सोचता, मेरे जाने के वाद घर को दादा के अत्याचारो से वचाने के लिए कोई भी नही वचा है। यह विचार मन मे वार-वार उठकर भी पाचू का हौसला न वटा सका। घर पर रहना अपना कर्तव्य समझकर भी वह घर से भाग जाना चाहता था—"मै कोई वुरी वात अपनी आखो से होते न देखूगा। मेरे वाद भले ही कुछ भी हो जाए। आखो से न देख सकूगा तो दुःख भी न होगा।"

कर्तव्य से विमुख होकर पाचू कायरता की ओर वढ रहा था और अपनी इस कायरता को वह वहानो मे छिपा लेना चाहता था—"मै अगर यहा हू, तव भी कुछ नही हो सकता। खूखार पागल को कौन रोक सकता है? कही वाहर जाऊगा। कलकत्ते-उलकत्ते कही चला जाऊगा। कोई नौकरी ढूढूगा। मिल गई तो घरवालो की भी कुछ रक्षा हो जाएगी।"

पाचू ने भागने का निश्चय कर लिया। और इस निश्चय के साथ ही साथ उसके मन मे एक भीषण द्वन्द्व छिड गया। यह घर, मा, वावा, मगला,

सभी एकसाथ उससे छूट रहे थे। शिबू, बौदी, तुलसी, मा, भतीजो का ध्यान मुख्य रूप से उसके मन मे नही था। मा की याद पीडा देनेवाली थी। बाबा से उसका सम्बन्ध पिता-पुत्र से अधिक गुरु शिष्य का रहा। उसकी प्रत्येक बौद्धिक समस्या के साथ बाबा का घनिष्ठ सम्बन्ध था। लेकिन इस के साथ ही साथ उसके भीतरी मन मे कही यह विचार भी मौजूद था कि बाबा अब केवल कुछ ही दिनो के मेहमान हैं। मा-बाप से सबका सम्बन्ध एक दिन छूटता ही है। उसके चले जाने से बाबा और मा को बडा कष्ट होगा, यह विचार भी पाचू को बडा व्यग्र कर रहा था। सबसे अधिक उसे मगला की याद आ रही थी। उसकी ओर से वह बहुत चिंतित था। उसका क्या होगा ? मगला मे उसके चित्त की सारी वृत्तिया एकाग्र हो गई थी। एक बार उसकी इच्छा हुई कि वह मगला को भी अपने साथ लेता चले। विचार ने उसे एक क्षण के लिए स्फूर्ति भी दी, परन्तु फौरन ही उसके मन मे डर समाया, मगला उसे जाने से रोक लेगी। मा और बौदी को छोडकर मगला कभी भी न जाएगी। घर मे रुकने के लिए पाचू बिलकुल तैयार न था। सारे ससार से भागकर उसे घर मे शाति मिलती थी, और अब उसे घर ही महान अशाति का केन्द्र-स्थल दिखाई देता था। घर के प्रति उसकी विरक्ति इस समय इतनी बढ गई थी कि पाचू घर छोडने देने के विचार को अपनी आत्मा का आदेश मानता था। उसे विश्वास था कि इसीमे उसका कल्याण होगा। मगला का आकर्षण उसे अपनी ओर खीचते हुए भी निर्बल हो चला था।

पाचू के पैर धीरे-धीरे दरवाजे की तरफ बढते गए। उसकी इच्छा हुई कि जाने से पहले वह एक बार सबको देख लेता। पाचू लौटा। अपने कमरे की सीढियो तक पहुचकर पैर फिर ठिठक गए—मगला कही न जाग रही हो।

चोर की तरह पाचू दबे पैरो से नीचे उतर आया। मा की कोठरी का दरवाजा बन्द था। बाबा अपनी चारपाई पर बैठे हुए थे। घुटनो मे उनका मुह छिपा हुआ था। दूर ही से—मन ही मन—पाचू ने प्रणाम किया।

स्मृति मे हरएक को सामने लाकर उसने मरे मन से सबसे विदा ली। आखो से आसुओ की धारा बहने लगी।

पाचू का निश्चय डगमगाने लगा। फौरन ही पाचू सतर्क हो गया। वह घर के दरवाजे की तरफ चला। चौखट लाघते ही पैर ठिठके। उस घर मे वह अब शायद लौटकर न आएगा। कदम घर से बाहर पडा। घर उसकी आखो के सामने था। दुमजिले पर उसके कमरे की खिडकी खुली हुई थी।

पाचू का ध्यान उडकर अपने कमरे की तरफ चला गया। थोडी देर पहले तक वह इसी कमरे मे पडा हुआ चादनी रात और तारो को देख रहा था। मगला उसकी छाती मे मुह छिपाकर बाह डाले सो रही थी। कितना सुख था उस स्पर्श मे। और उस सुख का ध्यान आते ही फौरन बडी बहू की चीख और बाद का सारा काड उसके मन को दहलाने लगा। मगला कही खिडकी से देख न रही हो। पाचू और ज्यादा डरा। फौरन ही सामने से हटकर घर की दीवाल के किनारे-किनारे से जल्दी-जल्दी कतराता हुआ वह आगे बढा।

घर धीरे-धीरे दूर होता चला जा रहा था। चादनी रात के प्रकाश मे घर धुधला होते-होते मिट गया। पेडो की आड आ गई, गाव की हद आ गई। पाचू रुक गया। वह अपनी जन्मभूमि को छोड रहा था। छोडने से पहले एक बार आखें भरकर वह अपने गाव को देख रहा था—वह अपना सारा जीवन देख रहा था। इन्हीं खेतो मे वह खेला-कूदा है। बडा हुआ है। अनेक सुख-दुखो के नाते इसी भूमि पर उसके साथ जुडे है। मोहनपुर उसकी जन्मभूमि, कर्मभूमि, समरभूमि रही है। अकाल के इन दिनो की सारी अनिश्चयता को लिए हुए भी उसके जीवन की एक निश्चित गति साथ भी रही है। घर-गाव छूटने के साथ ही साथ पाचू का उस निश्चित जीवन के साथ भी नाता टूट रहा है। सारे ससार से घूमकर वह इस गाव मे लौटता था, यहा उसका घर था। जन्म के साथ बधा हुआ उसका आकर्षण केन्द्र नष्ट हो रहा है। सवेरे जब मा को पता लगेगा, मगला अनुभव

करेगी, सारा घर सुनेगा ?

चुम्बक-शक्ति का यह आखिरी खिचाव था। अपनी निर्बलता को परास्त करने के लिए पाचू फिर आगे बढा। मगर वह जाएगा कहा ? "कही भी ! घर नही जाऊगा।" आखो मे आसू भरकर जिद के साथ उसने अपनी सारी समस्याओ को अतिम निर्णय दिया।

पाचू ने पीछे मुडकर भी नही देखा। आखो से आसू बह रहे थे और वह आगे बढ रहा था। हठ के कठिन पाश मे अपनी समस्त कोमल वृत्तियो को जकडकर वह आगे बढा जा रहा था। अशाति के उद्वेग से हृदय उमडा चला आ रहा था, सिर मे भारीपन के साथ बुद्धि की अगति थी, आखे आसुओ से भरी हुई थी। अपने आसपास की किसी भी वस्तु का ध्यान उसे नही था। पथहीन, लक्ष्यहीन पाचू चलता ही जा रहा था, मानो चलने का कही अत नही है।

रोने की आवाज कही दूर से कानो मे आई। चेतना फिर भूमि पाकर लौटी। पाचू ने सिर उठाया, ध्यान स्थिर हुआ। पाचू ने अनुभव किया कि रोने की आवाज दूर नहीं, बिलकुल उसके पास ही है।

बाईं तरफ खडहर मे कोई पडा हुआ दिखाई दिया। रोने की आवाज किसी बहुत छोटे बच्चे की-सी थी। पाचू को वह आवाज अपनी तरफ खीचने लगी। ध्यान स्थिर हो चुका था, बुद्धि फिर काम करने लगी थी। पाचू ने अपनी इच्छा का समर्थन किया। वह उस ओर बढा। ताज़ा पैदा हुआ बच्चा मा की एक टाग पर चढकर पडा हाथ-पैर पटक रहा था और रो रहा था।

पाचू के लिए जीवन मे यह एक नया अनुभव था। एक क्षण के लिए वह हतबुद्धि होकर खडा रहा, फिर सकोच उत्पन्न हुआ। नग्न नारी सामने निश्चेष्ट पडी थी। बच्चा उसकी नगी टाग पर पडा कमजोर आवाज मे रोता हुआ धीरे-धीरे हाथ-पैर पटक रहा था। नाल की लबी डोरी मा के शरीर से जुडी हुई थी।

पाचू को बडी लज्जा मालूम हुई। घूमकर वह लौटने लगा, लेकिन पैर

आगे न बढे। इस असहायावस्था मे एक सद्य जात शिशु और मा को छोड़-कर आगे बढ जाने के विचार पर उसकी आत्मा जोर से धिक्कारने लगी। मगर साहस न होता था, मन ही मन लज्जा से वह गडा जा रहा था।

सहसा शिशु को बचाने की प्रेरणा इतनी प्रबल हो उठी थी कि पाचू का भय और सकोच टिक न सका। पाचू दृढ होकर उस ओर घूमा। वह झुका। नारी मे जीवन का कोई चिह्न नही मालूम होता था। अपने सदेह को मिटाने से लिए पाचू स्त्री के खुले मुह और नाक के पास हाथ ले गया। सास नही चल रही थी। साहस करके पाचू ने स्त्री की छाती के बीच हाथ रखे—धडकन भी नही थी। स्वय उसका हृदय इतनी ज़ोर से धडक रहा था कि तबीयत होती थी, उठकर भाग जाए। मगर वह उठ न सका। स्त्री के शरीर मे गर्मी से अनुमान किया, स्त्री को मरे हुए अधिक से अधिक दस-पन्द्रह मिनट हुए होगे। फौरन ही उसका ध्यान शिशु की ओर गया। लडका था, अत्यत दुर्बल, गर्भ के मल से सना हुआ, नाल जुडी हुई।

पाचू के हाथ-पैर फूल रहे थे। उसकी समझ मे नही आ रहा था कि वह बच्चे को कैसे बचाए, उसकी नाल कैसे अलग करे? कभी देखा नही, अनुभव नही—घर से निकलते ही वह मानव-जीवन की सबसे बडी गार्हस्थिक उलझन मे पड गया था। इतना उसने जरूर सुन रखा था कि नाल काटी जाती है। वह कैसे काटेगा? आसपास मे नज़र बेकार ही घूम गई। टूटा-उजडा हुआ घर था। बच्चे को बचाने की तीव्र इच्छा और घबराहट के साथ-साथ अपनी असहायावस्था और अनुभवहीनता पर उसे बडी जोर से झुझलाहट आ रही थी। मृत शरीर के साथ बच्चे का सम्बन्ध अधिक देर तक नहीं रहना चाहिए, उसके मन मे यह बात बार-बार अपने-आप ही उपज रही थी। जी कडा करके पाचू ने दोनो हाथो से खीचकर नाल बीच से तोड दी। बच्चा मा के शरीर से अलग हो गया। आधी लटकती हुई नाल समेत उसने बच्चे को हाथो मे उठा लिया। कमजोर बच्चा रोते-रोते हाफ रहा था।

पाचू के सामने एक नई समस्या थी, बच्चा बचेगा कैसे? इसका कोई

उत्तर उसके पास न था। लाश से ज़रा हटकर, बच्चे को गोद में लिए हुए पाचू टूटी हुई दीवार के सहारे बैठ गया। वह थककर चूर हो गया था। दस रोज़ से भूखा था, आज सवेरे दो-दो लाशों का बोझ उठा चुका था, शिबू की रोक-थाम में भी बडी मेहनत करनी पडी थी, फिर उसके बाद इतना चलकर आया और अब यह श्रम ! दीवार से सिर टिकाकर पाचू ने आखें बद कर ली। उसे बडी शाति मिल रही थी। गोद में बच्चा हाथ-पैर पटक रहा था। तन और मन से अत्यधिक थका हुआ होने पर भी पाचू इस समय सुख और शाति का अनुभव कर रहा था। अपने अदर वह एक किस्म की ताज़गी महसूस कर रहा था।

पाचू ने आखें खोली। बच्चे का क्या होगा ? इसे हवा लगनी होगी। पाचू ने अपनी कमीज़ उतारकर उसे उढा दी। बडा कमज़ोर है, कैसे बचेगा ? मगर बच जाए। कैसे भी हो इसको बचाना चाहिए। इसे दूध मिलना चाहिए। पाएगा कहा से हतभागा ? अरे अकाल में जन्म लिया है। लोग मर रहे है और यह पृथ्वी पर मृत्यु को देखने आया है। मा मर गई बेचारे की।

पाचू का ध्यान उस स्त्री की ओर गया। बहुत दुबली नही थी। जान पडता है, कुछ रोज़ पहले तक इसे खाने को मिलता रहा है। कपडा भी बदन पर है। इस घर की नही मालूम होती। सूरत-शकल से भले घर की ही जान पडती है। किसके घर की होगी ? यहा कैसे आई होगी ? सारा इतिहास इसकी मृत्यु के साथ ही लुप्त हो गया है।

कल्पना अधेरे में भटककर लौट आई। पिछली रात की चादनी के उजाले में पाचू ने देखा, बच्चा गोरा है। दुबला-पतला बहुत है, कही मर न जाए। रो रहा है, भूखा होगा। लेकिन भूख तो समस्या है।

एक सर्द आह पाचू के दिल से निकली। दस रोज़ से भूख की पीडा को सहते हुए उसे उसकी आदत पड गई है। एक तरह से भूख अब उसे सताती नही। हा, शरीर की कमज़ोरी और भूख की याद बेहद सताया करती है। बच्चे की भूख का खयाल कर उसे पीडा हुई। मगर कोई चारा

न था। बच्चे पर ही उसने अपना सारा ध्यान केन्द्रित कर दिया। बच्चा रो रहा था। पाचू धीरे-धीरे अपनी टागे हिलाने लगा। जरा देर बाद बच्चा चुप हो गया। पाचू को शक हुआ, फौरन ही बच्चे की नाक के पास हाथ ले गया। बारीक सास की हवा उसने अपनी हथेली पर महसूस की। उसे राहत हुई—"किसी तरह यह बच्चा बच जाए। अगर मैं यहा न आता तो? शायद इसकी जान बचाने के लिए ही मैं इधर से आ निकला। शायद इसकी जान बचाने के लिए ही मेरे घर मे वह काड हुआ और मुझे घर छोडना पडा।"

यह खयाल पाचू को बडा अटपटा-सा मालूम हुआ, मगर उसके साथ ही साथ यह घटना, यह एक नया और विचित्र अनुभव भी उसे एक बडा चमत्कार-सा मालूम पड रहा था।

उसके खयाल एक नये दायरे मे घूमने लगे। एक नये दृष्टिकोण से वह तमाम बातो को देखने लगा। मनुष्य के जीवन मे घटनाओ का चक्र किस तरह से चलता है? एक के बाद एक घटना इस तरह से आ जाती है, जैसे वह पहले ही से निश्चित की गई हो। यह सब है क्या? क्या जो कुछ भी होता है, वह अपने-आप होता है, अकस्मात् होता है? क्या जीवन घटना-मात्र ही है? कभी ये घटनाए हमारे जीवन मे उखडी हुई-सी आती हैं। उनकी विशृखलता के कारण तर्क की सीधी गति मे बाधा पडती है। परतु यही तक क्या जीवन की घटनाओ का अत हो जाता है? क्या यह घटना नही कि अकाल बगाल मे ही फैला हुआ है। सदा का रोगग्रस्त और प्रखर बुद्धि वाला यह प्रात ही क्यो सदैव सारी पीडाओ और यातनाओ को भोगता है? यो तो सारा देश ही महान सकट और विपत्ति काल से गुजर रहा है, फिर भी बगाल के ऊपर यह काटो का ताज और क्यो रख दिया गया। क्या कारण है इसका? क्या यह महायुद्ध घटना-मात्र है?

यह प्रश्न पाचू के तर्क की शक्ति के निकट आ गया था। महायुद्ध के कारणो को बुद्धि जानती है। अपने बौद्धिक क्षेत्र मे आकर उसे एक तरह का सुख मिला। बच्चे की तरफ देखा, उसकी नाक पर हथेली रखकर सास

की गति मालूम की। प्यार-भरी आखो से वह बच्चे की ओर देखने लगा।

यह बच्चा जी जाए! कामनापूर्ण नेत्रो से बच्चे की ओर देखते हुए उसे सहसा यह विश्वास होने लगा कि बच्चा जी जाएगा। अपने इस विश्वास के लिए वह मन मे तर्क खोजने लगा। पाचू ने सोचा—"गर्भ से ही यह बच्चा अकाल की यातनाओ को सहने की कठोरता लेकर पैदा हुआ है।"

इस तर्क के आधार पर पाचू सोचने लगा—"मा के मर जाने के बाद भी यह बच्चा जीवित रहा, क्या यह घटना जीवन के सत्य को सिद्ध नही करती ?"

इस विचार की पृष्ठभूमि मे अकाल का चलचित्र उसे दीख रहा था। विचार उसी दिशा मे आगे बढे—"लाखो आदमी मर जाने पर भी बगाल आज जीवित है। क्या इससे जीवन अजेय सिद्ध नही होता ?"

सवाल मे ही जवाब के तौर पर जोरदार 'हा' की ध्वनि छिपी थी—जो नि स्पृह नही थी। उसमे खुशी की गूज थी, बगाल के जीवन को वह अपने जीवित बचे रहने मे देख रहा था। इसीलिए समर्थन करने के लिए इस प्रश्न के साथ ही पीडा व्यग्र होकर आखो मे छलछला उठी। उसका एक हाथ बच्चे के सिर के नीचे और उसकी टागो पर रखा था। जैसे आखे छलछलाई, वैसे ही हाथो ने झटका खाया—हाथो ने बच्चे को पेट के पास घसीट लिया।

बच्चा जाग पडा, रोने लगा। पाचू का ध्यान बटा। वह रोते हुए बच्चे की तरफ चौककर देखने लगा। वह झुझला गया। उसे अपनी पीडा और अपने रोने मे इस समय सुख मिल रहा था, दूसरे का रोना अखरा। मगर गलती चूकि अपनी थी, इसलिए झुझलाहट खुद अपनी गलती मे ही उलझने लगी। गलती क्या है, यह समझ मे नही आती थी। उलझन उग्र हुई, गुस्सा चढा। गुस्सा बुद्धि मे सेंध लगाकर फिर राजनीति के क्षेत्र मे कूद पडा। तेजी के साथ वह सोचने लगा—"अपनी सेना के साथ सुभाष बाबू के आने पर बगाल कही उनके साथ मिल न जाए, इसलिए बगाल को पहले से ही तबाह कर दिया गया। यह अकाल भारत को गुलाम बनाए

रखने की राजनीति है।"

पाचू जोश मे आ गया। बच्चे के रोने पर ध्यान गया, जोश के साथ उनपर तरस आ गया। प्यार उमडा। उसने फिर टागें हिलानी शुरू की और बडे प्यार के साथ धीरे-धीरे, बच्चे को थपथपाने लगा। बच्चा क्रमशः सिसकियां भरते-भरते फिर चुप हो गया—"छोटी-छोटी आखें मीचे पडा है। कैसा प्यारा है! बच्चे कैसे प्यारे लगते हैं! बच्चा किसीका भी हो, सबपर प्यार आता है।" पाचू को फौरन ही खयाल आया—"बच्चा ही तो बडा होकर आदमी होता है। आदमी होते ही भेदभाव शुरू हो जाते हैं—क्रोध, घृणा, हिंसा!"

पट से पाचू को ध्यान आया, कल शाम ही बाबा ने कहा था—"उद्देश्य-रहित की हुई यह तपस्या ससार मे घृणा उत्पन्न करेगी। घृणा मत उत्पन्न करो पाचू! कामना करो कि तुम्हारी बलि मानव मे प्रेम की भावना उत्पन्न करे।"

कल शाम को पाचू को यह उत्तर सतोषजनक न लगा था। इस समय उसके विचार चूकि उसी दिशा मे बहने लगे थे, इसलिए बाबा का प्रवचन तुरत ही ध्यान मे आ गया। इस रूप मे अपने विचारो का समर्थन पाकर वह पुलकित हो गया। बच्चे की ओर देखने लगा, बच्चा सो रहा था। प्रेम की भावना इस समय प्रबल थी। बच्चा 'बहोऽत ही' प्यारा लगा। सहसा विचार आया—"यह प्यार कहा से आया? इतनी ही देर मे मुझे इससे ममता क्यो हो गई। मैंने इसे बचाया इसीलिए न? मैंने एक जीवन को बचाया। ठीक-ठीक, यो कहा जाए, कि जीवन के प्रति मेरे प्रेम ने जीवन को बचा लिया—सच!"

पाचू बहुत खुश हुआ—"तब फिर मैं इसे अपनी करतूत क्यो मानू?" इस खुशी ने दिमाग को हल्का-सा नशा दिया। वह सोचने लगा—"जीवन आप अपने को बचाता है। अनेक रूपो मे, और अनेक स्वभावो मे एक ही जीवन रमता है।"

पाचू भी रमने लगा। वह सोच रहा था—"अपने अस्तित्व को हर

शरीर मे सिद्ध करके वह अपनी सगठित एकता का परिचय देना है। यही समाज है।"

ये पढे-सुने तो सदा के थे, मगर गुनने आज वैठे। गुनने वैठे तो उनको अपना वना लिया। युगो के तराजू पर पाचू गोपाल अपने वाक्यो को वेदवाक्यो से तौलने लगे। दोनो पलडे काटा नोक सधे हुए जचे। जो वडे-वडे कह गए, वही हम भी कह रहे हैं।

वुद्धि का गुव्वारा फूलने लगा—"इकाई की चेतना मनुष्य को भ्रमवश एक ही शरीर, एक ही रूप की सीमा मे देखने लगी। परन्तु ज्यो-ज्यो सत्याग्रह द्वारा मनुष्य अनुभव प्राप्त करता गया, उसने अपने को इस भ्रम से मुक्त कर कुटुम्व और समाज की स्थापना की। इकाई की चेतना ने तव सामूहिक रूप तो धारण कर लिया, मगर वह तव भी मानव-समाज के वडे-वडे भागो मे, अलग-अलग वटी रही। अज्ञान मे सत्य का आलोक छिपाए ये वडे-वडे समाज आगे वढे। अनेको स्थूल दृष्टि-सुगम भेदभावो के कारण मनुष्य मनुष्य को अपरिचित लगा। अपरिचिय से भय और भय से हिंसा। हिंसा मनुष्य के अन्दर अज्ञान से उत्पन्न है "

पाचू इस वात के प्रति चैतन्य था कि वह सोच रहा है। उसके विचार उतने ऊचे जा रहे है, इसकी उसको खुशी थी इस खुशी की चेतना से उत्साह पाकर, उसकी विचारधारा दिमाग की ऊपरी सतह पर वहती ही चली जा रही थी—"हिंसा अज्ञान का नाश करने के हेतु उत्पन्न हुई सद्प्रेरणा की ही प्रतिक्रिया है। निर्माण द्वारा सत्य को प्राप्त करने के लिए यह ज्ञान की अति तीक्ष्ण वृत्ति, अपनी ओर से चेतना-विमुख होने के कारण ही हिंसा वन जाती है। हिंसा मे भी उसका अलक्षित उद्देश्य अपनी इकाई को ही सिद्ध करना होता है। स्थूल अज्ञान को काट डालने की चेतना तो ठीक है, गलत सिर्फ इतना ही है कि हिंसा द्वारा वह केवल अपनी (व्यक्तिगत) इकाई को सत्य सिद्ध करने का भ्रमपूर्ण प्रयास करना है। उपचेतन मे उसे इस भ्रम का ज्ञान अवश्य रहता है, क्योकि हिंसा की भावना उत्पन्न होने से मनुष्य को कभी आनद प्राप्त नही होता।" ख्याल

साया, खुद भी चौंके—"हां, ये बात है ? मैंने इतनी दुनिया भाग सोच ली !"

पाचू अपने-आपको महापुरुषों के रूप में अनुभव कर रहा था। ... को बचानेवाला मसीहा, संसार को जगानेवाला पैगम्बर और ... आलोक देनेवाला अवतार एक अनजान बच्चे को बचाकर, दीवार के सहारे बैठा हुआ लोक-कल्याण के लिए चिंतन कर रहा है। ... यहां तक, मगर बहुत दबा हुआ। उसकी बहुत हल्की सी चेतना ... झेंपकर अपने विचारों को अपूर्व शांति के रूप में अनुभव करने लगी। और उसी अपूर्व शांति की छाया में अवतार—पैगम्बर—मसीहा ने बच्चे की ओर प्यार-भरी नज़रों से देखा। बच्चा उसे इतना प्यारा लगा कि उसे जगाकर खेलने की इच्छा हुई। 'अवतार' एक अनजान बच्चे को ... प्यार जताकर, उस मानव-शिशु का महत्त्व बढ़ाना चाहता था। ... ही भूख का ध्यान आया। जागेगा तो रोने लगेगा। अपनी भूख का ध्यान भी आया। 'अवतार' भी दस रोज़ से भूखा रहने को मजबूर है। 'अवतार' के साथ मजबूरी का खयाल कुछ जमता नहीं। गुस्सा आ गया। अकाल लानेवाले राक्षसों के ऊपर क्रोध 'अवतार' को ही आ रहा था, मगर बुद्धि और तर्क पाचू के ही थे। पाचू तेज़ होकर सोच रहा था—"हमारी आज़ादी की न्यायपूर्वक मांग के एवज़ में हमें अकाल दिया जाता है ? सन् '४२ का दमन दिया जाता है ? सन् '४२ का भारत-दमन सामूहिक रूप से विश्व की मानवता का शिरोच्छेदन करने का एक अति अमानुषिक प्रयास था। मनुष्य की सहज उठी हुई स्वतन्त्रता की प्रेरणा को बर्बरतापूर्वक कुचलकर उसके मन में सत्य और जीवन के प्रति अनास्था उत्पन्न करने का राक्षसी कृत्य था वह दमन। इतना नहीं सोचता मनुष्य कि जो अत्याचार वह दूसरों पर करता है, वही उलटकर यदि उसके ऊपर गिर जाए तो ?"

दुनिया उसके सामने कितनी नादान है, इतनी-सी बात भी नहीं समझता ! नादानों की लिस्ट में बड़े-बड़े नाम अंतर्चेतन में थे, हिटलर, मुसो-

लिनी, चर्चिल, तोजो, रूजवेल्ट, स्टालिन—ये दुनिया के सूत्रधार कितने अहमक हैं जो हेडमास्टर पाचू गोपाल मुकर्जी से सवक नही लेते। इस खयाल की वजह से खुशी थी, साथ ही साथ अपने ऊपर होनेवाले अत्याचारो को, खयाल के बहाने, अग्रेजो पर लागू कर उन्हे अकाल-पीडित देखकर, खुशी हुई। खयाल की आड मे यह खयाली तसवीर इतनी तेज और तीखी थी कि उसने गुजरते-गुजरते मे अपनी आड को भी काट दिया। असलियत खुल गई। हिंसा की जिस वृत्ति का वैज्ञानिक रूप से विश्लेपण करते हुए कुछ देर पहले उसने अपने को समझाया था, इस वक्त वह खुद ही उस चक्कर मे पड गया। खुदी का गुब्बारा फूलते-फूलते फट गया। खुद अपने-आपके सामने ही बटी झेंप मालूम पडने लगी। 'अवतार' का भूत उडन-छू हो गया। उसे बडी तकलीफ होने लगी—"समझते हुए भी फिर वही भूल कर बैठा।" क्षुब्ध अह ने अपने मार खा जाने का कारण बुद्धि की गैर-जिम्मेदारी मे देखना चाहा, नतीजा उलटा ही हुआ। अपनी परेशानी के जवाब मे उसे खयाल आया—"मैं जो कुछ सोचता हू, सही मानता हू, उसे करता नही।"

बच्चा हिला, रोने लगा। पाचू का ध्यान उचटा। बच्चे को उठाकर अपने सीने से लगा लिया—"इसे बचाना चाहिए। इस वक्त इसकी चिंता करना ही मेरा सबसे बडा काम है।"

पाचू उठ खडा हुआ। रोते हुए बच्चे को कधे से चिपकाकर 'आ-आ' करके चुप कराने लगा। बच्चे का गर्म स्पर्श उसके हृदय को करुणार्द्र करने लगा। प्रेम ने उसके वाह्यातर को रोमाचित कर दिया। मन अपनी असीम-सी लगने वाली सीमाओ के साथ शातिमय हो गया। इतना गहरा सतोप, अहम्-रहित चेतना की यह शाति, अतर के गहन छोर से उदय होकर कुछ पल के लिए उसे आत्म-विस्मृति और आनद की लहर मे बहा ले गई।

पाचू इस नवीन अनुभव के प्रति चेतन हुआ। अपूर्व अनुभव था, कितना आनद था। चेतना उत्पन्न होते ही वह आनद सत्य न रहकर उसकी छाया-

मात्र रह गया। कुछ भी हो, पाचू का मन इस समय छक गया था। इन्सान की सारी पीडाओ की थकावट और चिताओ का बोझ उतर गया था। वह बहुत निर्मल, शात और हल्का अनुभव कर रहा था। बच्चे की पीठ पर हाथ फेरते हुए प्रसन्न होकर उसने सोचा—"यह अनुभव मुझे इस बच्चे से मिला है। और मेरा यह अनुभव भी इस बच्चे की ही तरह अकुर-मात्र है। दोनो साथ-साथ बढेंगे। मैं इसे इसी रूप मे देखूगा। मेरा ध्यान बराबर जमा रहेगा, फिर कभी गलती न होगी।"

बच्चे को कधे से चिपकाकर पाचू टहलने लगा। एक गुदगुदी-सी अनुभव करते हुए उसने सोचा—"इसका नाम? नाम क्या रखू इसका? कैसा नाम रखू? इसकी जाति क्या है?"

पाचू ने उसकी माता की तरफ देखा। वह धरती की तरह शात पडी थी। पाचू ने आगे सोचा—"इसकी जाति भला क्या हो सकती है? इसकी मा कौन है? अपने को इसकी मा कहनेवाला जीव तो चला गया। आदमी का बेटा है, मैं इसे आदमी ही कहूगा। यह जाति, वर्ण वगैरह से पार है। यह सब तो है, मगर अब इसके पालने की फिक्र करनी चाहिए। कहा ले जाऊ इसे?"

रास्ता सूझता नही। मन अकुलाया। घर की याद आई, मगला की याद आई। वह इसे पालेगी।

मन मे सकोच हुआ—"जिसे छोडकर चला आया, उस घर मे क्या लौटकर जाऊ? इस खयाल से जो पीडा हुई, उसे दूर करने के लिए सतोष आया। खयाल आया—"मुझे अब यह बडा घर मिल गया है। सारी दुनिया मेरा घर है।"

पैगम्बरपन से बचने के लिए फिर हल्का-सा झटका खाया—"यह सब होते हुए भी आदमी के लिए एक घर तो चाहिए ही। और क्या मेरे घरवाले इस दुनिया से अलग हैं? फिर उन्हे क्यो छोड दू? 'मगर वहा तो आप ही बुरा हाल है, इस बच्चे की परवरिश क्या होगी! सब लोग नोचेंगे, मगला कहेगी, यह क्या नई बला ले आए?"

पाचू नही चाहता था कि उसके 'आदमी' को बना समझा जाए। उसे तकलीफ हुई। मगर, फिर सोचा—"मगला ऐसा नहीं सोचेगी। उसका हृदय बडा कोमल है। स्त्री का हृदय बडा कोमल होता है, उसमे मा की ममता सहज ही उत्पन्न होती है। मगला के अदर सोई हुई मा इसे जरूर छाती से लगा लेगी।

मगला की याद आई। उसे सुख हुआ। मगला के प्रति फिर नया आकर्षण जागा। घर लौट चलने की इच्छा हुई। वह सोचने लगा—"घर से भाग आना मेरी कायरता थी। मैं अपने कर्तव्य से भाग आया। हा, और नही तो क्या? मैंने अकाल से लडने की कोशिश ही नही की। सिर्फ तकलीफ ही सहता रहा। अपने लिए मागने मे शर्म आती थी! शर्म क्यो आती थी? आबरू जाने के डर से! मगर वह तो फिज़ूल है। भूख शर्म की बात नही, सबको लगती है। मैं सबकी भूख के लिए मागूगा। सबकी भूख मे मेरी भूख भी तो शामिल है, मेरा घर और ये 'आदमी' भी तो शामिल है।"

पाचू के मन मे नई आस्था जागी—"हा, मैं लडूगा। मोनाई से, दयाल से—उन सब लोगो से जिनके पास सबकी भूख के साधन छीनकर जमा है।"

दिमाग मे गुस्से की हल्की लहर-सी उठी। उसके विरोध मे फिर फौरन ही खयाल आया—"उनका अपराध नही। सारे अत्याचार नासमझी की वजह से करते है। और यह नासमझी युगो से हमारे साथ है। क्या मुझम नही है? किसमे नही है? लेकिन यह नासमझी दूर कैसे हो? जिस पाशविक शक्ति के बल पर मानव-समाज का सत्तावादी वर्ग इस नासमझी का पोषण कर रहा है, क्या उसके आगे सिर झुका देना ठीक होगा? क्या यह सत्य के प्रति अन्याय न होगा? अवश्य होगा? इस अन्याय की जड उखाड फेंकना ही हमारा धर्म है। यही सत्य है।"

अन्न मनुष्य के खाने के लिए है। अन्न की कीमत पैसा नही, मनुष्य की भूख है। व्यक्ति का स्वार्थ समाज की भूख को नही खा सकता! मनुष्य

के जन्म-सिद्ध अधिकारो का अपहरण नही कर सकता।

पाचू अपने मे एक नई स्फूर्ति का अनुभव करने लगा। ... भविष्य और अकर्मण्य वर्तमान जीवन की नई आशा ... शक्तिशील हुआ।

उसने सोचा—'हम लडेंगे। हम अन्न के ... करेंगे। हम जिएंगे।"

लेकिन इससे अत्याचार और बढेंगे, घृणा उत्पन्न होगी। ... से ? क्या घृणा उत्पन्न नही होगी ? आत्मपीडा पहुचाकर तो ... होगी। सत्ता की बलिवेदी पर लाखो नर-नारियो का जो ... बलिदान हुआ है उसका परिणाम दिन के उजाले की तरह स्पष्ट है। ... एक ओर सत्य की आड लेकर लडेगी, दूसरी ओर स्वार्थ की। ... पर विजय पाएगा, परतु, घृणा साथ रहेगी। विजय-लिप्सा प्रति... पाशविक बनेगी। और आदिमयुग के मानव की परम्परा से प्राप्त पशुवृत्ति का अपने अदर से नाश करना ही सच्ची क्राति है। यही नये जीवन को गतिशील करेगा।

बच्चा कुनमुनाया। पाचू का ध्यान उधर गया। उसे प्यार से थपथपाकर उसी तेजी से वह सोचने लगा—"हमारा बलिदान, हमारी कर्मण्यता और हमारी क्राति इस बच्चे की दुनिया को इन्सान के रहने योग्य बनाएगी, जिसमे अमीर-गरीब न होगे, रगभेद न होगा, धर्मभेद न होगा, जातीयता और राष्ट्रीयता न होगी—एक दुनिया होगी, एक मानव-समाज होगा।"

एक सुखद कल्पना पूरी हुई। उससे मन आनद से भर उठा। मगर उसके साथ ही उसने सोचा—"लेकिन इस सपने को साकार करना है। विचारो के चौराहे पर खडे होकर अकर्मण्यता का तमाशा देखना फिजूल है। वे आदर्श और सिद्धात झूठे है, जिनपर अमल न हो सके। तब ? मुझे क्या करना है ?"

पूर्व-निश्चय के साथ एक-एक विचार उतरने लगा, घर चलना है। इस बच्चे की जान बचानी है। मानव-हृदय मे जिस स्वार्थ-रहित प्रेम और

कर्तव्य का आभास मुझे इस बच्चे द्वारा मिला है, उसे कर्म मे बदलना है—रोटी लेनी है, अपना जीने का अधिकार सुरक्षित करना है। दयाल और मोनाई वर्ग हमारा वह अधिकार अब अपने तावे मे नही रख सकता। यह वर्ग हमारे ऊपर अत्याचार करता किस बल पर है? हमारे ही कुछ आदमियो को अपनी पूजी और स्वार्थ मे हिस्सेदार बनाकर बहका लेता है। छेदासिंह, दयाल के पछाही लठैत, पुलिस, फौज के सिपाही यह सब कौन है? हमारे ही आदमी हैं, पीडित मनुष्यता के ही अग है। ये हमसे दूर नही रह सकते। हमारा सगठन, हमारा नैतिक बल, हमारी न्याय की आवाज इन्हे बहुत दिनो तक हमसे दूर नही रख सकती। सत्तावादी पूजीपतियो का वशीकरण मत्र अब अधिक दिनो तक इन्हे अपने जादू मे नही बाधे रह सकता। जनशक्ति, जनक्राति सत्तावादियो के स्वार्थ के किले तोड देगी। तभी हमारी शक्ति से हमको ही डरानेवाला मानव-समाज का यह छोटा-सा वर्ग अपगु होकर चेतेगा। पैसा ही उसकी सर्वोपरि शक्ति है। जब वह पैसे से हमे खरीद नही सकेगा तो आप सही रास्ते पर आ जाएगा? उसकी घृणा का लक्ष्य भी वही होगा जो हमारा है—पूजी और सत्ता!

सवेरा हो चला था। पूरब मे लाली छा रही थी। पाचू घर की तरफ बढ रहा था। पाचू के कर्तव्य का मार्ग स्पष्ट और निश्चित था।

परेश रात ही मे मर चुका था। मुह-अधियारे उठकर पार्वती मा पाचू को पुकारने के लिए सीढी तक गई। दरवाजे के पास कोई सिर झुकाए बैठा था। अधेरा था, कुछ साफ न सूझा। पूछा—"कौन?"

"मैं।"

मगला की आवाज इतनी गभीर कभी नही सुनी। पार्वती मा सन्न रह गई—"छोटी बहू तुम! पाचू कहा है?"

छोटी बहू के यहा बैठे रहने का और मतलब ही क्या हो सकता है? पार्वती मा झपटकर आगे आई। मगला उठकर खडी हो गई। बडी-बडी

आखें ज़र्बदस्ती खुश्क रहना चाहती थी। मगला की चिन्ता म ... समाया था—"मुझसे विना कहे चले गए ?"

रात वडी देर वाद भी जब पाचू ऊपर नही आया तब ... हुआ। तव तक मगला अपनी 'वकुल फूल' के बारे म ही सोचती ... उसके दिल मे इस वक्त क्या बीत रही होगी ? ज्याठा मोशाइ ... ही है। वडी वहू विचारी ने जाने ऐसे कौन-से पाप किए ... दुखियारी रही है विचारी। भगवान भला ऐसे किसीको ... मैं तो फिर जीती न उठती।

छाती जकड गई, रोंगटे खडे हो गए, सारे शरीर मे ... गई, मगला की आखें भर आई। ध्यान तुरत ही पाचू की ... अभी तक नही आए ?

मगला का दिल धक् से हो उठा। वह फिर वैठी न रह सकी। ... कर नीचे आई। मा की कोठरी वन्द थी। वावा अपनी कोठरी ... कही नही। दरवाज़ा देखा, खुला था। मगला के पैरो तले धरती ... गई। फिर सोचा, भाई के पीछे गए होंगे। मगर ज्याठा मोशाई इस वक्त आपे मे थोडे ही हैं। लाख वेहया हो, मगर कोई भी समझदार आदमी ऐसा काम हरगिज नही करेगा। वह ज़रूर पागल हो गए है। इनके ... के नही है। कही कुछ उलटा-सीधा न हो जाए।

मगला दरवाज़े के पास पाचू के लौट आने की आस मे वैठी रही। ज्यों-ज्यो रात वीतती जाती, अपने आसुओ को रोकने के लिए वह पत्थर होती चली जाती। वह मान किए वैठी रही—"मुझसे विना कहे गए क्यो ?" जव वडी देर हो गई तो उसके मन मे अनायास शका जाग उठी—"ज्याठा मोशाई के पीछे नही गए। वे चले गए है—सदा के लिए घर छोडकर चले गए है। अव नही आएगे। उनको वडा सदमा पहुचा है। पर मुझसे कहकर क्यो नही गए ? साथ नही रखना चाहते थे, न सही। मुझसे वताकर तो जाते।"

पार्वती मा के पूछने पर मगला ज़ब्त न कर सकी। लाख न चाहने

पर भी उसका का गला भर आया, आखे छलछला उठी। वह बोली—"ज्याठा मोशाई के जाने के बाद ही कही "

इससे अधिक वह न बोल सकी। सुनकर मा चुपचाप खडी रही। वे पत्थर हो गई थी। एक बार राह पाकर मगला के आसू फिर न रुके।

सहसा बाहर की कुडी खटकी। पार्वती मा दरवाज़े की ओर देखने लगी। मगला ने बडी आशा के साथ झपटकर दरवाज़े की कुडी खोल दी। मगला और मा सहमकर पीछे हट गई। शिवू ने नूरुद्दीन के साथ घर मे प्रवेश किया।

मगला दरवाज़े के पीछे हो रही थी। मा से शिवू की आखे मिली। मा ने फौरन ही मुह फेर लिया। भारी आवाज़ मे शिवू नूरुद्दीन से बोला—"चले आओ भीतर।" कहकर शिवू अन्दर की ओर बढा। नूरुद्दीन पीछे-पीछे चला।

पार्वती मा ने उन्हे अदर जाते हुए देखा। मगला दरवाज़े के पास ही सहमी हुई खडी थी।

शिवू ने दालान मे प्रवेश किया। मा की कोठरी सामने थी। बडी वह बुत की तरह बैठी थी। परेश की लाश पास ही पडी थी। दीनू और तुलसी पास ही लेटे हुए थे।

शिवू सीधा कोठरी मे पहुचा। तुलसी सहमकर उठ बैठी। बडी बहू ने आखे ऊपर की ओर उठाई। वह शिवू को देखने लगी। वह भावना और विचार-शून्य हो चुकी थी। शिवू को देखकर वह न तो चौंकी, न सहमी—बस देखती ही रही। शिवू ने शक्ति-भर कडककर हुक्म दिया—"उठ!"

बडी बहू चुपचाप बैठी ही रही। उसकी निगाहे बराबर शिवू पर ही जमी रही।

मा अन्दर आ गई थी। शिवू से तेज आवाज मे बोली—"क्या आया है यहा ?"

शिवू ने मा को कोई जवाब न दिया, उनकी तरफ देखा भी नही। तेजी से बडी बहू का हाथ पकडकर घसीटा और डपटकर बोला—"उठ!"

वढकर शिवू को पार्वती मा के हाथो से मुक्त किया। शिवू हाफते हुए पुन शक्ति सचय कर मा की ओर झपटने हुए वोला—"साली, मुझे मारना चाहती थी। हैं!"

नूरुद्दीन ने फौरन ही शिवू को पकड लिया—"ये क्या वचपना करते हो वडे ठाकुर! अरे चावल लो, खाओ पियो, मौज करो। ये भी अपने धरमशाले जाएगी, खाएगी, पिएगी, मौज करेंगी। गहना है, कपडा है "

"नही!" पार्वती मा ने झपटकर दोनो हाथो से तुलसी और वडी वहू को दवोच लिया—"तेरे घर मे वहू-वेटिया नही हैं! जा, उन्हे धरमशाले मे ले जा। जा, चला जा। निकल!"

पार्वती मा इतने ज़ोर से चीखी कि उनकी आवाज़ उखडने लगी। शिवू ने वडी वहू को अपनी तरफ घसीटकर कहा—"ये मेरी वस्तु है। मैं इसे वेचूगा।"

"नही! नही! हट!" मा हाफ-हाफकर धीरे-धीरे अपना विरोध ज़ाहिर कर गफलत मे डूव रही थी। वह गिरने लगी। तुलसी के कधे पर उनका एक हाथ था। अपनी शक्ति को एकत्रित करने के लिए वह जूझ रही थी। तुलसी के कधे पर दवाव पडा और वह भी मा के साथ लडखडा-कर वैठ रही।

शिवू की आखें लाल हो रही थी। वह तेज होकर वोला—"मैं इसे वेचूगा। मुझे भूख लगी है भूख! ला, चावल ला!"

वडी वहू पत्थर की तरह चुपचाप खडी थी। तुलसी मा के हाथ को अपने कधे पर अनुभव करते हुए उसके भार को महसूस कर रही थी। उसका चेहरा तमतमा उठा था। वह अदर ही अदर अपने से लड रही थी।

नूरुद्दीन ने गठरी खोली। शिवू चावल देखकर हिंसक आह्लाद के साथ उस ओर झपटा। तुलसी ने भी चावलो को वडी भूखी दृष्टि से देखा।

मा अभी भी अपने कावू मे न आई थी। सास वडे ज़ोर से चल रही थी।

नूरुद्दीन ने दो मुट्ठी चावल निकालकर धरती पर रख दिए और

पोटली बाधने लगा। शिबू ने चौंककर देखा—"बस ?"

"और क्या करू, क्या खजाना भर दू ! हड्डियो का ढाचा है। हा, इसके लिए आध सेर तक दिया जा सकता है।" नूरुद्दीन की तरफ देखकर कहा।

तुलसी ने उत्साहित होकर उठना चाहा। मा ने उसे दोनो हाथो से दबोच लिया और भिखारी की तरह दयनीय दृष्टि से शिबू को देखकर कहने लगी—"बेटा, मेरी जान न ले। मेरी आबरू न ले बेटा ! मै पाव पडती हू।"

पार्वती मा कहती जाती और तुलसी को दबोचती जाती। आसुओ का वेग प्रबल हो रहा था।

शिबू का ध्यान इस ओर न था। बडी बहू के लिए इतने कम दाम मिल सके, इसी बात पर अपने सारे गुस्से का भार रखकर वह बडी बहू की ओर झपटा—"साली, तेरे दाम कम लगे।"

पास आने के पहले ही सूखी हड्डियो की शक्ति का भरपूर तमाचा शिबू के मुह पर पडा। बडी बहू के हाथ से तमाचा खाकर शिबू चौक उठा, क्रोध आया। नूरुद्दीन फौरन ही आगे बढकर बडी बहू के आगे आते हुए शिबू के दोनो हाथ पकडते हुए जोर देकर बोला—"अब ये मेरी हो चुकी है, बडे ठाकुर !"

मजबूत हाथो मे पडकर शिबू का गुस्सा सहम गया। बडी बहू का हाथ पकडकर नूरुद्दीन चला। मूक पशु की भाति बडी बहू एक मालिक से दूसरे के हाथो मे चली गई।

कल रात की घटना के बाद से बडी बहू एक शब्द भी नही बोली थी। परेश मर गया। बडी बहू ने एक नजर से उसे देखकर मुह फेर लिया था। सारी रात घुटनो को हाथो से बाधे सिकुडकर वह बैठी रही थी। फटी आखो से किसी एक तरफ देखते हुए वह वक्त गुजार रही थी। उसका ध्यान किसी ओर भी नही था। लाज खोकर वह भावशून्य हो गई थी। उसके चेतन मन मे केवल घृणा के सस्कार शेष थे, उसके चित्त की

बढकर शिबू को पार्वती मा के हाथो से मुक्त किया। शिबू हाफते हुए पुन शक्ति सचय कर मा की ओर झपटने हुए बोला—"साली, मुझे मारना चाहती थी। हैं!"

नूरुद्दीन ने फौरन ही शिबू को पकड लिया—"ये क्या बचपना करते हो बडे ठाकुर! अरे चावल लो, खाओ पियो, मौज करो। ये भी अपने धरमशाले जाएगी, खाएगी, पिएगी, मौज करेंगी। गहना है, कपडा है"

"नही!" पार्वती मा ने झपटकर दोनो हाथो से तुलसी और बडी बहू को दबोच लिया—"तेरे घर मे बहू-बेटिया नही हैं! जा, उन्हे धरमशाले मे ले जा। जा, चला जा। निकल!"

पार्वती मा इतने जोर से चीखी कि उनकी आवाज उखडने लगी। शिबू ने बडी बहू को अपनी तरफ घसीटकर कहा—"ये मेरी वस्तू है। मैं इसे बेचूगा।"

"नही! नही! हट!" मा हाफ-हाफकर धीरे-धीरे अपना विरोध जाहिर कर गफलत मे डूब रही थी। वह गिरने लगी। तुलसी के कधे पर उनका एक हाथ था। अपनी शक्ति को एकत्रित करने के लिए वह जूझ रही थी। तुलसी के कधे पर दबाव पडा और वह भी मा के साथ लडखडा-कर बैठ रही।

शिबू की आखें लाल हो रही थी। वह तेज होकर बोला—"मैं इसे बेचूगा। मुझे भूख लगी है भूख! ला, चावल ला!"

बडी बहू पत्थर की तरह चुपचाप खडी थी। तुलसी मा के हाथ को अपने कधे पर अनुभव करते हुए उसके भार को महसूस कर रही थी। उसका चेहरा तमतमा उठा था। वह अदर ही अदर अपने से लड रही थी।

नूरुद्दीन ने गठरी खोली। शिबू चावल देखकर हिंसक आह्लाद के साथ उस ओर झपटा। तुलसी ने भी चावलो को बडी भूखी दृष्टि से देखा।

मा अभी भी अपने काबू मे न आई थी। सास बडे जोर से चल रही थी।

नूरुद्दीन ने दो मुट्ठी चावल निकालकर धरती पर रख दिए और

पोटली बाधने लगा। शिबू ने चौंककर देखा—"बस ?"

"और क्या करू, क्या खज़ाना भर दू ! हड्डियो का ढाचा तो खडा है। हा, इसके लिए आध सेर तक दिया जा सकता है।" नूरुद्दीन ने तुलसी की तरफ देखकर कहा।

तुलसी ने उत्साहित होकर उठना चाहा। मा ने उसे दोनो हाथो से दबोच लिया और भिखारी की तरह दयनीय दृष्टि से शिबू को देखकर कहने लगी—"बेटा, मेरी जान न ले। मेरी आबरू न ले बेटा ! मैं तेरे पाव पडती हू।"

पार्वती मा कहती जाती और तुलसी को दबोचती जाती। आसुओ का वेग प्रबल हो रहा था।

शिबू का ध्यान इस ओर न था। बडी बहू के लिए इतने कम चावल मिल सके, इसी बात पर अपने सारे गुस्से का भार रखकर वह बडी बहू की ओर झपटा—"साली, तेरे दाम कम लगे।"

पास आने के पहले ही सूखी हड्डियो की शक्ति का भरपूर तमाचा शिबू के मुह पर पडा। बडी बहू के हाथ से तमाचा खाकर शिबू चौंक उठा, क्रोध आया। नूरुद्दीन फौरन ही आगे बढकर बडी बहू के आगे आते हुए, शिबू के दोनो हाथ पकडते हुए ज़ोर देकर बोला—"अब ये मेरी हो चुकी है, बडे ठाकुर !"

मज़बूत हाथो मे पडकर शिबू का गुस्सा सहम गया। बडी बहू का हाथ पकडकर नूरुद्दीन चला। मूक पशु की भाति बडी बहू एक मालिक से दूसरे के हाथो मे चली गई।

कल रात की घटना के बाद से बडी बहू एक शब्द भी नही बोली थी। परेश मर गया। बडी बहू ने एक नजर से उसे देखकर मुह फेर लिया था। सारी रात घुटनो को हाथो से बाधे सिकुडकर वह बैठी रही थी। फटी आखो से किसी एक तरफ देखते हुए वह वक्त गुजार रही थी। उसका ध्यान किसी ओर भी नही था। लाज खोकर वह भावशून्य हो गई थी। उसके चेतन मन मे केवल घृणा के सस्कार शेष थे, उसके चित्त की

सारी वृत्तिया उसीमे लय हो गई थी। वडी बहू विक गई। उसके मन मे धरमशाले का ज़रा भी भय न था। विवाह के वाद से आज तक शिबू के प्रति उसने अपने मन मे घृणा को ही पाला। शिबू ने अपनी पत्नी को सदा दासी की तरह ही मान दिया था। जूते की धूल ज्यो वार-वार झाडी जाती है और फिर लिपट जाती है—वडी बहू के लिए पति के चरणो के सिवा दूसरी गति ही नही थी। शिबू के अत्याचारो का खिलवाड वडी बहू को अपनी परवशता के प्रति दिन-रात घृणा उत्पन्न कराता रहता। शिबू का भय उसपर हरदम छाया रहता था। दो मुट्ठी चावलो के वदले मे विक जाने के वाद वह पूर्ण रूप से भय-मुक्त हो गई थी। शिबू को तमाचा मारने का साहस इसीकी प्रतिक्रिया थी। धर्मपत्नी, सहधर्मिणी, अर्द्धांगिनी आदि विशेपणो की अधिकारिणी वेद-पुराण-पूजिता नारी व्यवहार मे पुरुप की तुच्छ से तुच्छ दासी वनकर, अपने स्वामी द्वारा प्रतिदिन होनेवाले अत्याचारो की आदी हो गई थी। अत्याचारो के प्रति नारी का भय अपनी समस्त क्रिया-प्रतिक्रिया की कडी आचो को सह चुकने के वाद निस्तेज हो चुका था। एक प्रकार का जीवन विताते-विताते नारी जीवन का रस खो चुकी थी। फिर दासता के रूप मे ही सही, लेकिन नारी के जीवन मे नया परिवर्तन आ रहा था, फिर प्रगति हो रही थी। एक क्षण के लिए ही सही, किंतु दासता की घोर अगति मे परिवर्तन द्वारा गति का आभास पाकर नारी ने नया वल पाया था। स्वामी (पुरुप) के रूप मे भय और घृणा को तमाचा मारकर नारी ने विद्रोह किया, विद्रोह की भावना का जोश फिर नई अगति की ओर वढा।

नूरुद्दीन और वडी बहू दालान पार कर दरवाज़े की ओर वढ रहे थे। अपनी वेवसी मे जकडी हुई पार्वती मा तुलसी को अपनी वाहो मे पूरा वल लगाकर कसती जा रही थी।

चलते हुए नूरुद्दीन ने इशारे से तुलसी को अपनी तरफ बुलाया। उसके इस आमत्रण मे एक विचित्र मादकता थी, लालच था।

वौदी का दादा को तमाचा मारना, उनका नूरुद्दीन के साथ आगे

वटना और नूरुद्दीन का इशारा तुलसी को खुले विद्रोह के लिए प्रेरित कर रहा था। तुलसी मा के शरीर से चिपककर दबी जा रही थी। रो-रोकर पार्वती मा गुहार कर रही थी—"अरे, मेरी आबरू गई! हाय! सुनते हो! तुम्हारे बेटे ने मेरी आबरू ले ली!"

"मैं भी जाऊगी।" सहसा तुलसी चीख उठी और पूरी ताकत लगा-कर मा की बाहो के बधन को तोडकर, उन्हे धक्का देते हुए तुलसी नूरुद्दीन की तरफ धाई।

पार्वती मा का रुदन सहसा स्तम्भित हो गया। वह आखें फाडकर तुलसी को देखने लगी। तुलसी के पास जाने के लिए पार्वती मा के प्राण शरीर का मोह त्यागकर निकल आए।

शिबू चावलो के पास बैठा हुआ, पहली मुट्ठी फाकने जा रहा था, वह चौककर तुलसी को देखने लगा।

नूरुद्दीन बडी बहू का हाथ पकडकर खडा हो गया। तुलसी के लिए उसने मुस्कराकर दूसरा हाथ बढा दिया।

शिबू कच्चे चावल चबाना छोडकर सहसा उठकर लपका। नूरुद्दीन अपने बचाव के लिए सावधान हो गया। शिबू ने पास आकर गिडगिडाते हुए कहा—"नूरुद्दीन, इसके चावल?"

नूरु अकडा—"किसके चावल जी?"

उगली के इशारे से तुलसी को बताकर गिडगिडाते हुए शिबू चावल मागने लगा।

नरुद्दीन दोनो औरतो के साथ दरवाजे की तरफ बढते हुए बोला—"अबे कैसे चावल? ये तो अपनी खुशी से जा रही है।"

तुलसी खुशी से जा रही थी। उसने सुन रखा था कि धरमशाले मे सिर्फ जवान औरतें ही भरती की जाती हैं। वहा उन्हे खाने को मिलता है, पहनने को मिलता है, बडा सुख मिलता है। तुलसी भी खाना चाहती है, कपडा चाहती है और वह सुख चाहती है, जो उसे अभी तक नहीं मिला, जिसकी वह बरसो से कल्पना करती आई है।

नूरुद्दीन उसे आगे बढ़ाकर ले चला।

शिबू रोते हुए बच्चों की तरह मचला—"मेरा चावल दो।"

चलते-चलते ज़रा रुककर नूरुद्दीन ने एक बार सिर से पैर तक शिबू को देखा और हँस पड़ा। बोला—"अबे, ये टापटिन्नक दिखाता किसे है? साले जो एक फूँक मार दूँगा तो बेटा, कन्धे पर से कट जाएगा। चल बैठ घर में। उल्लू की दुम कहीं का।"

मंगला अपने कमरे की सीढ़ियों पर छिपी हुई खड़ी थी। नूरुद्दीन के दलहीज़ में आते ही उसने जल्दी से अपने कमरे में जाकर भीतर से किवाड़ बंद कर लिए।

मंगला खिड़की से बाहर देखने लगी। धर्मशाले वाला 'बकुल फूल' और 'दीदी मनि' को लिए हुए चला जा रहा था।

मंगला ज़िंदगी के सूनेपन में खोई हुई खड़ी रही।

नूरुद्दीन तुलसी और बड़ी बहू को लेकर चला गया। नूरुद्दीन की डाँट खाकर, अपनी असहायावस्था पर शिबू को बड़ी खिसियाहट छूटी। उसके होंठ काँपने लगे, आँखें बरस पड़ीं। शिबू रोता जाता और बीच-बीच में चावल की फँकी भी लगाता जाता था। माँ की तरफ़ देखा, वह ज़मीन पर झुकी हुई पड़ी थी। शिबू रोता हुआ माँ के पास आया। माँ का सिर उठाकर देखा, मुँह खुला हुआ था, आँखें फटी की फटी रह गई थीं। बचपन से शिबू का यही एक सहारा था। जब उसे दुनिया की गोद में जगह न मिलती तब माँ के पास आता। इस आश्रय के प्रति उसका विश्वास इतना गहरा था कि ऊपरी तौर पर वह उसकी परवाह करना छोड़ चुका था। माँ को मरी हुई देखकर वह घबरा गया। उसकी आँखें उमड़ पड़ीं। वह अपनी माँ की लाश से चिमट गया। सहसा माँ की लाश को ज़मीन पर लिटाकर उसने माँ का खुला हुआ मुँह देखा। फिर अपनी आँखें पोंछीं और लपककर मांग चावल मुट्ठी में उठा लिया। माँ के खुले हुए मुँह में चावल डालकर, शिबू अपनी रूठी हुई माँ को मना लेना चाहता था। फिर मृत्यु की चेतना हुई। शिबू का हाथ रुक गया। रोते हुए बच्चे की तरह वह

चारो ओर आखें फाड-फाडकर देखने लगा। कोठरी मे दीनू पडा था, परेश पडा था। पिता का प्रेम आसुओ के साथ उमड रहा था। शिवू उठकर गया। देखा, परेश मर चुका था, दीनू के दिल की धडकन धीमी-धीमी चल रही थी, वह कुछ ही क्षणो का मेहमान था। शिवू कुछ देर तक आसुओ-भरी आखो से उसकी तरफ देखता रहा। अचानक उसने बच्चे के अधखुले होठो मे थोडे-से चावल डाल दिए और उठ खडा हुआ। वह बाबा की कोठरी के सामने आया। बाबा कोठरी के दरवाज़े का सहारा लिए खडे थे। शिवू चुपचाप उनकी तरफ देखता रहा। सहसा उसकी मुट्ठी खुली। थोडे-से चावल बच रहे थे। हथेली झुकाकर, बाबा की कोठरी के सामने चावल गिराने लगा—उसकी नजरें बाबा के चेहरे पर ही रही। देखने-देखते वह चीख मारकर रोता हुआ घर से भागा।

खिडकी से मगला ने देखा, ज्याठा मोशाई चीखकर बडी तेज़ी के साथ भागते चले जा रहे थे।

मगला की आखें भर आई। शिवू उसके पति का भाई था। शिवू की आड मे मगला को अपने पति के चले जाने पर रोना आ रहा था।

मगला अपने विश्वास को तोडना नही चाहती थी। वह रोकर अपना अमगल नही करना चाहती थी। उसके मन मे कोई ज़ोर देकर कह रहा था—"वह आएगे। मुझे छोडकर वह कैसे रह सकते हैं।"

आखे पोछकर मगला नीचे उतरी।

बाबा अपने दोनो हाथ फैलाए दालान मे कुछ टटोलते हुए आगे बढ रहे थे।

मगला ने आगे बढकर बाबा का हाथ पकड लिया।

बाबा झिझके। स्त्री का हाथ पहचाना—"छोटी बहू!"

ब्याहकर आई तब से आज तक कभी बाबा से बात नही की थी, मगला ने केवल छोटी-सी 'हू' कह दी।

कठोर सयम करते हुए भी बाबा का गला भर आया। गद्‌गद होकर बोले—"मा मगला! जब तू है तो जगत् का कल्याण अवश्य होगा।"

मगला चुपचाप आसू बहाती रही। मगला के सिर पर हाथ फेरते हुए बाबा बोले—"पाचू का कोई अमगल नही होगा, बेटी। वह एक दिन अवश्य आएगा। अवश्य आएगा। इसी विश्वास के बल पर ही मेरे प्राण मुक्ति पा रहे हैं।"

मगला ने फौरन ही गले मे आचल डालकर बाबा के चरण छुए। उसके आसू उनके चरणो पर टपक रहे थे। बाबा रुधे हुए कठ मे बोले—"पगली न हो मा। चल उठ तो, मुझे अपनी मा के पास ले चल।"

मगला बाबा को सहारा देकर पार्वती मा की लाश के पास ले गई। मगला का हृदय फटा जा रहा था। बाबा बैठ गए। पार्वती मा के सिर पर हाथ फेरते हुए बाबा ध्यानमग्न हो गए। अधी आखे छलछला उठी। आवेश मे आ रुधे हुए कठ से बाबा ने पाठ करना आरभ किया

का तव कान्ता कस्ते पुत्र ससारोऽयमतीव विचित्र।
कस्य त्व वा कुत आयातस्तत्व चिंतय तदिद भ्रात॥
भज गोविन्द, भज गोपाल, गोविंद! गोपाल!! गोपाल!!!

बाबा पाठ कर रहे थे, मगला का हृदय फटा जा रहा था। बाबा जब पाठ करते थे, मगला और उसकी बकुल फूल मुस्कराया करती थी, और पार्वती मा को चिढकर, झुझलाकर अत मे बाबा की कोठरी मे जाना ही पडता था। बाबा का वह सन्यास आज सत्य को चरितार्थ कर रहा था। स्वर उखडने लगा, क्रमश क्षीण होने लगा और अत मे होठो का कपन भी रुक गया। मृत्यु को देखते-देखते मगला यद्यपि कठोर हो गई थी, फिर भी उसे इस समय भय लग रहा था। ससार मे वह अकेली रह जाएगी। बाबा की आखिरी सास तक घर मे एक से दो का सहारा है। मगला एक टक लगाए बाबा के शरीर मे प्राणो की धुकधुकी को देख रही थी। सासे जल्दी-जल्दी चल रही थी—वेग क्रमश शिथिल पडने लगा—सासे टूट-टूटकर चलने लगी। हर सास की गति के बाद इति का भ्रम होने लगा—और फिर अत भी आ गया।

मगला अकेली रह गई। घर मे चार लाशें पडी थी। घर खाली था।

हर तरफ उसकी नज़र जाती—ईंट-ईंट मुर्दा मालूम पड रही थी। इस घर का विगत जीवन इस समय उसके ध्यान मे नही था, भविष्य को वह देखना चाहती थी और वही वह निरुपाय थी, निस्सहाय थी। जी घुटकर रह जाता था।

जीवन के लिए मगला को कही से भी प्रेरणा नही मिल रही थी, फिर भी वह मरना नहीं चाहती थी। एक वार 'उनको' देखे विना उसे मरकर भी चैन नही आएगा। मन घवराता भी था। कव तक प्रतीक्षा करनी पडेगी, कव आएगे? परतु मन अपनी एकमात्र आशा और विश्वास के साथ जीवित रहना चाहता था—जव भी आए, वह आएगे। विकलता अति तीव्र गति से अपनी चरम सीमा पर पहुचकर सासो से टकराने लगी। जीवन की इच्छा कठोर होकर अपनी रक्षा करने लगी। स्मृति मे केवल 'उनकी' प्रतीक्षा का सस्कार-मात्र शेष था। मगला विचारशून्य, भावशून्य थी। मगला स्तब्ध थी

उसका शरीर हिला। चेतना ऊपर उठने लगी। अतर के स्तर मे 'उनका' अति प्रिय स्वर गूज उठा, क्रमश सुनाई पडने लगा। अदर ही अदर मगला को भ्रम को चेतना हुई और उससे विकलता जागी। स्वर अधिक स्पष्ट हुआ।

"मगला! मगला!!"

आखें यद्यपि खुली थी, किंतु पथरा-सी गई थी। देखने का अतर्हठ तीव्र से तीव्रतम हुआ। आकृति धुधली से स्पष्ट हुई। मगला ने देखा—'वह' सामने खडे थे, उनकी गोद मे वच्चा था जो रो रहा था। पति को देखते ही, सतोष के अतिरेक से मगला की आखो मे आसू छलछला आए। अवरुद्ध कठ से स्वर लडखडाकर फूटा—"आ गए!"

पाचू ने देखा, मगला फिर झकोला खा रही है। पाचू को कुछ न सूझा। उसने जल्दी से मगला की गोद मे वच्चे को डाल दिया और उसे पकडकर वैठ गया।

मगला अपने से लडकर सावधान हुई। उसने गोद फैलाकर वच्चे को

ठीक तरह से सभाला, फिर उसे गौर से देखा। पाचू कहने लगा—"इसे बचाना होगा, मगला ! इसे बचाने के लिए ही मैं तुम्हारे पास लाया हू।"

मगला ने बच्चे को गोद मे चिपका लिया। बच्चे के सम्बन्ध मे कोई प्रश्न पूछने के पहले उसके मन मे पाचू को घर की बात बताने की इच्छा हो रही थी। आखो मे आसू भरकर मगला ने बाबा और मा की लाशो की तरफ देखा।

पाचू ने पहले ही सब कुछ देख लिया था। घर मे प्रवेश करते ही, पहली नज़र डालने के साथ ही साथ उसे अपने को मजबूत बनाना पड़ा था। मगला बैठी थी। उसने मगला को आवाज़ दी। मगला न बोली। वह पास आया, दो आवाज़ें दी। मगला की आखे खुली हुई थी। पाचू को विश्वास हुआ, वह जीवित है, नाक के पास हाथ ले जाकर सास को महसूस किया। उसे आश्चर्य हुआ, मगला उसे देख क्यो नही पाती, उसकी आवाज़ क्यो नही सुन पाती ? उसने मगला को हिलाना शुरू किया, कई आवाज़ें दी। जब मगला को होश आया, तब उसने पाचू को देखा, उसकी आखो मे आसू आए और वह बोली। पाचू ने तब सतोष की एक गहरी सास ली थी। बच्चे को उसकी गोद मे डाल देने के बाद जब मगला ने अपने को सभालकर बच्चे को सभाल लिया तब उसे विश्वास के साथ-साथ प्रसन्नता भी हुई। फिर जब वह बाबा और मा की लाशो को देखने लगी तो पाचू घबराया—दु ख का दौरा कही जीती बाजी फिर न हरा दे ! उसने मगला के दिल से मृत्यु का बोझ हटाना चाहा। बड़े धैर्य के साथ उसने कहा—"जो होना था, वह हो गया। अब इसे सभालो। इसे बचाओ। इसे बचाने के लिए ही हम-तुम जिएगे।"

अविश्वास के वातावरण मे जीवन के प्रति विश्वास की इस दृढ़ता ने पति और पत्नी, दोनो को ही, अपूर्व धैर्य और बल दिया। स्वय पाचू को भी अपनी इस बात द्वारा अपने अन्दर की अदमनीय, चिर विजयी, विकासमयी शक्ति का परिचय मिला। प्रलय मे सृष्टि के बीजाकुर फूटने लगे।

पाचू बोला—"मैं सब प्रबंध करने जाता हू। बच्चे की जीवन-रक्षा और जीवन का मृत्यु के प्रति ऋण भी उतारना है।" उसने सशंकित स्वर मे पूछा—"तुम घबराओगी तो नही ?"

पति को आश्वासन देते हुए मगला ने गर्दन हिलाई, कहा—"अब नही।" फिर ममता-भरी दृष्टि से वह अपनी गोद मे सोते हुए बच्चे को देखने लगी।



1